ज्ञान शांति मैत्री

महात्मा गांधी अंतरराष्ट्रीय हिंदी विश्वविद्यालय, वर्धा

(संसद द्वारा पारित अधिनियम 1997, क्रमांक 3 के अंतर्गत स्थापित केंद्रीय विश्वविद्यालय)

Mahatma Gandhi Antarrashtriya Hindi Vishwavidyalaya, Wardha

(A Central University Established by Parliament by Act No.3 of 1997)

एमएसडब्ल्यू पाठ्यक्रम (80 क्रेडिट)

चतुथ सेमेस्टर

दूर शिक्षा निदेशालय

महात्मा गांधी अंतरराष्ट्रीय हिंदी विश्वविद्यालय, वर्धा

पोस्ट - हिंदी विश्वविद्यालय, गांधी हिल्स, वर्धा - 442001 (महाराष्ट्र)

मार्ग निर्देशन समिति

प्रो. गिरीश्वर मिश्र
कुलपति, म.गां.अं.हिं.वि., वर्धा

प्रो. आनंद वर्धन शर्मा
प्रतिकुलपति, म.गां.अं.हिं.वि., वर्धा

प्रो. अरबिंद कुमार झा
निदेशक, दूर शिक्षा निदेशालय, म.गां.अं.हिं.वि., वर्धा

पाठ्यचर्या निर्माण समिति

प्रो. मनोज कुमार
निदेशक – म.गां.फ्यू. गु. समाज कार्य अध्ययन केंद्र, म.गां.अं.हिं.वि., वर्धा

डॉ. मिथिलेश कुमार
असिस्टेंट प्रोफेसर , म.गां.फ्यू. गु. समाज कार्य अध्ययन केंद्र, म.गां.अं.हिं.वि., वर्धा

डॉ. शिवसिंह बघेल
असिस्टेंट प्रोफेसर , म.गां.फ्यू. गु. समाज कार्य अध्ययन केंद्र, म.गां.अं.हिं.वि., वर्धा

श्री अमोद गुर्जर
असिस्टेंट प्रोफेसर , म.गां.फ्यू. गु. समाज कार्य अध्ययन केंद्र, म.गां.अं.हिं.वि., वर्धा

डॉ. शंभू जोशी
असिस्टेंट प्रोफेसर एवं पाठ्यक्रम संयोजक, दूर शिक्षा निदेशालय, म.गां.अं.हिं.वि., वर्धा

संपादन मंडल

प्रो. मनोज कुमार
निदेशक – म.गां.फ्यू. गु. समाज कार्य अध्ययन केंद्र, म.गां.अं.हिं.वि., वर्धा

डॉ. मिथिलेश कुमार
असिस्टेंट प्रोफेसर , म.गां.फ्यू. गु. समाज कार्य अध्ययन केंद्र, म.गां.अं.हिं.वि., वर्धा

डॉ. शंभू जोशी
असिस्टेंट प्रोफेसर एवं पाठ्यक्रम संयोजक, दूर शिक्षा निदेशालय, म.गां.अं.हिं.वि., वर्धा

इकाई लेखन

खंड -1
श्री गजानन निलामे

खंड -2
इकाई 1 व 2 श्री शिवाजी जोगदंड
इकाई 3 व 4 श्री गजानन निलामे

खंड -3
डॉ.अमित विश्वास

खंड -4
डॉ.शिवसिंह बघेल

कार्यालयीन एवं मुद्रण सहयोग

श्री विनोद वैद्य
सहायक कुलसचिव, दू.शि. निदेशालय

श्री महेन्द्र प्रसाद
सहायक संपादक , दू.शि. निदेशालय

डॉ. मेघा आचार्य
प्रूफ रीडर, दू.शि. निदेशालय

सुश्री राधा
टंकक, दू.शि. निदेशालय

अनुक्रम

क्र.सं.	खंड का नाम	पृष्ठ संख्या
1	**खंड - 1 – परामर्श के मूल तत्व**	5
	इकाई - 1 परामर्श : अर्थ, अवधारणा और उद्देश्य	6-14
	इकाई - 2 परामर्श की प्रक्रिया एवं अवस्थाएं	15-24
	इकाई - 3 परामर्श तकनीक और उपकरण	25-33
	इकाई - 4 समाज कार्य में परामर्श अभ्यास	34-40
2	**खंड - 2 – परामर्श प्रक्रिया**	41
	इकाई - 1 व्यक्तिगत परामर्श	42-53
	इकाई - 2 युगल और परिवार परामर्श	54-63
	इकाई - 3 परामर्श एवं थेरेपी : अंतरसंबंध	64-75
	इकाई - 4 सामाजिक कार्यकर्ता : एक परामर्शदाता के रूप में	76-82
3	**खंड - 3 – संचार के मूल तत्व**	83
	इकाई - 1 संचार : अर्थ एवं अवधारणा	84-101
	इकाई - 2 संचार के चरण एवं प्रारूप	102-119
	इकाई - 3 संचार सैद्धांतिकी : संस्कृति उत्पाद, पब्लिक स्फेयर एवं सहमति निर्माण	120-133
	इकाई - 4 भारत में संचार परिदृश्य	134-152
4	**खंड - 4 – संचार एवं समाज कार्य**	153
	इकाई - 1 वैयक्तिक समाज कार्य अभ्यास में संचार	154-166
	इकाई - 2 समूह समाज कार्य अभ्यास में संचार	167-175
	इकाई - 3 सामुदायिक संगठन अभ्यास में संचार	176-185
	इकाई - 4 सामाजिक क्रिया अभ्यास में संचार	186-198

ज्ञान शांति मैत्री

MSW 15 परामर्श एवं सम्प्रेषण: समाज कार्य परिप्रेक्ष्य

खंड परिचय

प्रिय विद्यार्थियों,

एमएसडब्ल्यू पाठ्यक्रम (चतुर्थ सत्र) के प्रश्नपत्र **MSW 15 परामर्श एवं सम्प्रेषण : समाज कार्य परिप्रेक्ष्य** में आपका स्वागत है। इस प्रश्नपत्र को चार खंडों में विभाजित किया गया है।

पहले खंड में यह बताया गया है परामर्श का अर्थ, अवधारणा और उद्देश्य क्या हैं? इसके पश्चात इसकी प्रक्रिया और अवस्थाओं का उल्लेख किया गया है। समाज कार्य में प्रयुक्त की जाने वाली परामर्श तकनीकों और उपकरणों को रेखांकित करते हुए समाज कार्य में परामर्श अभ्यास को बताया गया है।

दूसरा खंड विभिन्न सामाजिक परिवेशों में परामर्श प्रक्रिया को रेखांकित करता है। इसमें व्यक्तिगत परामर्श, युगल एवं परिवार परामर्श का उल्लेख किया गया है। इसके पश्चात थेरेपी और परामर्श को समझाते हुए इनमें अंतरों को स्पष्ट किया गया है। परामर्शदाता के रूप में सामाजिक कार्यकर्ता की क्या भूमिका होनी चाहिए, इस पर भी प्रकाश डाला गया है।

तीसरे खंड में संचार की अवधारणा को स्पष्ट किया गया है। सर्वप्रथम संचार का अर्थ एवं अवधारणा को प्रस्तुत किया है तत्पश्चात संचार के चरणों और विभिन्न प्रारूपों का उल्लेख किया गया है। संचार सैद्धांतिकी के अंतर्गत विभिन्न पहलुओं को समझाया गया है और अंत में भारत में संचार परिदृश्य को बताया गया है।

चौथे खंड में संचार और समाज कार्य के अंतर्संबंधों को स्पष्ट किया गया है। वैयक्तिक समाज कार्य, समूह कार्य, सामुदायिक संगठन और सामाजिक क्रिया में संचार की क्या भूमिका होती है और किस तरह से संचार का उपयोग किया जाता है, इसका उल्लेख इस खंड में किया गया है।

ज्ञान शांति मैत्री

खंड – 1

परामर्श के मूल तत्व

ज्ञान शांति मैत्री

इकाई : 01 परामर्श : अर्थ अवधारणा और उद्देश्य

इकाई की रूपरेखा

1.0 उद्देश्य
1.1 प्रस्तावना
1.2 परामर्श
1.3 परामर्श का अर्थ
1.4 परिभाषाएं
1.5 परामर्श की अवधारणा
1.6 परामर्श के मुख्य घटक
1.7 परामर्श के लक्ष्य और उद्देश्य
1.8 परामर्श के क्षेत्र
1.9 सारांश
1.10 बोध प्रश्न
1.11 सन्दर्भ एवं उपयोगी ग्रन्थ

1.0 उद्देश्य

इस इकाई के अध्ययन के बाद आप -

1. परामर्श का अर्थ एवं अवधारणा को समझ सकेंगे।
2. परामर्श के लक्ष्य, उद्देश्यों को समझते हुए उसके घटकों के प्रति समझ विकसित कर पाएंगे।

1.1 प्रस्तावना

वर्तमान में विभिन्न सामाजिक परिवर्तनों के कारण मानवीय जीवन शैली में काफी बदलाव आए हैं। बदलते पारिवारिक सन्दर्भों में कुछ जगहें इस तरह खाली हुई है जिसके कारण समाज में उन भूमिकाओं के निर्वहन के लिए संस्थानिक संरचनाओं की आवश्यकता महसूस होने लगी है। उदाहरण के लिए संयुक्त परिवार में या ग्रामीण समाजों में 'सलाह-मशविरे' के लिए एक जगह हुआ करती थी किन्तु शहरीकरण के बोझ, आधुनिकता एवं औद्योगिकीकरण के चलते ये जगहें धीरे-धीरे गायब होने लगी है। तभी इन जगहों के विकल्प के रूप में सलाह-मशविरे के लिए परामर्श का उद्गम एक व्यावसायिक सेवा के रूप में होता है।19वीं सदी के तीसरे-चौथे दशक में विश्वभर में इसका विकास शुरू हो जाता है।

विश्वभर में परामर्श प्रक्रिया की बेहतरी संस्थागत संरचना को बढ़ावा देने के लिए विभिन्न संगठन चलाए जाने लगे हैं। इस कड़ी में ब्रिटेन में *द स्टैंडिंग कौंसिल फॉर द एडवांसमेंट ऑफ़ काउंसेलिंग* (SCAC) 1971 तथा *ब्रिटिश एसोसिएशन फॉर काउन्सेलिंग* (BAC) 1972 जैसे संगठनों का निर्माण हुआ। 2001 में BAC का नाम बदलकर *ब्रिटिश एसोसिएशन फॉर काउन्सेलिंग एंड सायकोथेरेपी* रखा गया। अमेरिका में 1951 में *अमेरिकन सायकोलोजिकल एसोसिएशन* के अंतर्गत *काउन्सेलिंग सायकोलोजी* नाम से नए डिविजन खोले

गए। (McLeod, 2003, p. 5) साथ ही 1952 में अमेरिका परामर्श संबधित शीर्षस्थ संस्थाओं; द *नेशनल वोकेशनल गाइडेंस एसोसिएशन* (NVGA), द *नेशनल एसोसिएशन ऑफ़ गाइडेंस एंड काउंसेलर ट्रेनर्स* (NAGCT), द *स्टूडेंट पर्सोनेल एसोसिएशन फॉर टीचर एजुकेशन* (SPATE) तथा द *अमेरिकन कॉलेज पर्सोनेल एसोसिएशन* ने परामर्श व्यावसायिकों की आवाज बुलंद करने के लिए एक साथ आकर द *अमेरिकन पेर्सोनेल एंड गाइडेंस एसोसिएशन* (APGA) की स्थापना की, बाद में 1983 में इसका नाम बदलकर द *अमेरिकन एसोसिएशन ऑफ़ काउन्सेलिंग एंड डेवलपमेंट* (AACD) रखा गया किन्तु 1 जुलाई 1992 में फिर से इसका नाम बदलकर *अमेरिकन एसोसिएशन ऑफ़ काउन्सेलिंग* रखा गया जो आज भी चल रहा है। (American Counseling Asociation : Our History, 2017) भारत में अभी भी परामर्श को लेकर उतनी जागरूकता नहीं दिखाई देती बावजूद इसके *नेशनल इंस्टिट्यूट ऑफ मेंटल हेल्थ एंड न्यूरो साइंस*, बेंगलुरु तथा *इंडियन इंस्टिट्यूट ऑफ़ काउन्सेलिंग* जैसे संस्थान परामर्श को प्रोत्साहित करते दिखाई देते हैं, साथ ही 2005 में स्थापित *काउन्सेलिंग एसोसिएशन ऑफ इंडिया* एवं 1970 में स्थापित *इंडियन सोसायटी ऑफ प्रोफेशनल सोशल वर्क* जैसे संगठन इसकी व्यावसायिकता को बनाए रखने के लिए प्रतिबद्ध है।

परामर्श भारत में एक उभरता हुआ विषय है। इसके प्रति लोगों का रुझान शुरूआती समय में कम था किन्तु आज कल परामर्श दैनंदिन जीवन की आवश्यकता बन रहा है। यही कारण है कि शैक्षिक परिप्रेक्ष्य में इसकी ओर झुकाव ज्यादा देखा जाने लगा है। *ऑल इंडिया इंस्टिट्यूट ऑफ़ मेडिकल साइंस* के सर्वे के अनुसार चार लाख की जनसंख्या पर एक मनोचिकित्सक काम कर रहा है। भारत में फिलहाल 4000 मनोचिकित्सक, 1000 मनोवैज्ञानिक और 3000 सामाजिक कार्यकर्ता कार्यरत है (Prabhakar & Dubouis, 2017)। वर्तमान में देश स्वास्थ्य क्षेत्र में कार्मिक कमी की समस्या से गुजर रहा है। ऐसे में समाज कार्य इन व्यावसायिकों की कमी को अंशत: पूरी करने की जिम्मेदारी उठाने की क्षमता रखता है। परामर्श के अंतर्गत ही वर्तमान समस्या को सुलझाया जा सकता है इसलिए समाज कार्य पाठ्यक्रम में परामर्श महत्वपूर्ण जगह बनाए हुए है।

ज्ञान शांति मैत्री

1.2 परामर्श

आम तौर पर परामर्श से तात्पर्य होता है- सलाह, मशविरा देना। समाज में रहते हुए मनुष्य के सामने अनेकों ऐसी समस्याएं आती हैं जिसका निबटान करने के लिए उसे किसी और (जो इसके प्रति अनुभव, ज्ञान या विशेषज्ञता रखता हो) के सलाह की आवश्यकता होती है। जैसे- घर-गृहस्थी में निर्णय लेने के लिए बुजुर्गों से सलाह मशविरा किया जाता है। लेकिन जब हम परामर्श की बात करते हैं तो इसमें एक खास अर्थ निर्धारित किया जाता है जिसमें केवल अनुभव, ज्ञान और विशेषज्ञता ही नहीं बल्कि समस्या की समझ, समस्याग्रस्त के व्यक्तित्व आदि के आधार पर एक आचार संहिता में रहते हुए व्यावसायिक तरीके से समस्या सुलझाने के लिए किया गया प्रयास ही परामर्श कहलाता हैं। परामर्श को समझने के लिए हमें उसके अर्थ और विद्वानों द्वारा दी गई परिभाषाओं को समझना होगा।

1.3 परामर्श का अर्थ

परामर्श शब्द की उत्पत्ति ओल्ड फ्रेंच *Conseil* से मानी जाती है जो खुद लैटिन शब्द *Consulere* से बना है जिसका शाब्दिक अर्थ Advice है। हिंदी में अंग्रेजी शब्द *counselling* के विकल्प के रूप में परामर्श शब्द प्रयोग किया जाता है।

मरियम वेबस्टर डिक्शनरी (2017) के अनुसार *counsel* शब्द 14वीं शताब्दी में पहली बार उपयोग में लाया गया। तथा इसके बाद *counseling* शब्द 1927 में उपयोग में लाया गया। आज कल *Counselling* के पर्यायवाची शब्द के रूप में *advise*, *Consult* तथा *treat* जैसे शब्दों का उपयोग किया जाता है।

1.4 परिभाषाएं

मरियम वेबस्टर मेडिकल डिक्शनरी (2017) के अनुसार "परामर्श एक व्यक्ति को दिया जाने वाला व्यावसायिक निर्देशन है जिसके लिए मनोवैज्ञानिक पद्धतियों का उपयोग किया जाता है विशेषत: केस हिस्ट्री में तथ्य संकलन के लिए। साथ ही व्यक्तिगत साक्षात्कार की विभिन्न तकनीकों एवं अभिवृत्ति और हितों के परीक्षण का उपयोग भी इसमें किया जाता है।"

रुथ स्ट्रांग (Ruth Strang, 1956) के अनुसार "परामर्श प्रक्रिया एक संयुक्त प्रयास है। परामर्श प्रक्रिया का सारतत्व इन संबंधों में है जिसमें परामर्श प्राप्त व्यक्ति, स्वयं को पूर्णत: अभिव्यक्त करने के लिए स्वतंत्रता का अनुभव करता है तथा अपने लक्ष्यों, साध्य के बारे में स्पष्टीकरण व साध्य प्राप्ति हेतु सामर्थ्य और समस्या प्रकट होने पर उसके समाधान हेतु प्रयुक्त साधन एवं विधियों के प्रति आत्मविश्वास प्राप्त करता है" (राय & अस्थाना, 2015, पृ. 326)।

ब्रिटिश एसोसिएशन फॉर काउन्सेलिंग (1984) के अनुसार "परामर्श शब्द में व्यक्ति के साथ किए जाने वाले ऐसे कार्य और संबंध निहित है जो शायद विकासात्मक, संकट सहायता, सायकोथेरेप्यूटिक, निर्देशन या समस्या समाधान परक हो... परामर्श कार्य के अंतर्गत 'सेवार्थी' को अन्वेषण एवं खोज का अवसर तथा ज्यादा से ज्यादा संतोषपूर्ण एवं संसाधनयुक्त जीवन जीने की राह का स्पष्टीकरण प्राप्त होता है" (McLeod, 2003, पृ. 7)।

कुल मिलाकर परामर्श एक सम्मिलित प्रयास है जिसमें परामर्शदाता तथा सेवार्थी सम्मिलित रूप से समस्या का समाधान खोजते हैं। परामर्श मूलत: सेवार्थी केन्द्रित प्रक्रिया होती है। इसलिए परामर्श सेवार्थी द्वारा मांगे जाने पर दिया जाता है।

उक्त परिभाषाओं एवं अन्य विद्वानों के मतानुसार परामर्श की निम्नलिखित विशेषताएं दिखाई देती है-

- परामर्श एक प्रक्रिया है।
- परामर्श में परामर्शदाता एवं सेवार्थी के बीच अंत:क्रियात्मक संबंध है।
- परामर्श का स्वरूप विकासात्मक, संकट सहयोग, समस्या समाधान, निरोधात्मक एवं उपचारात्मक होता है।
- परामर्श प्रक्रिया आमने-सामने एवं सेवार्थी केन्द्रित होती है।

- परामर्श प्रक्रिया में विभिन्न अवस्थाएं-पूर्व-तैयारी, आरंभिक, मध्यवर्ती, समापन और अनुवर्ती अवस्थाएं शामिल होती हैं।

1.5 परामर्श की अवधारणा

परामर्श का अर्थ एवं परिभाषा को समझने के पश्चात हम इसकी अवधारणा को समझने की कोशिश करेंगे। वैसे तो अर्थ और परिभाषा में ही परामर्श की अवधारणा का पता चलता है बावजूद इसके यहाँ हम सरल शब्दों में परामर्श के मुख्य घटकों, उपागम एवं क्षेत्र के बारे में संक्षेप में जानकारी प्राप्त करेंगे।

1.6 परामर्श के मुख्य घटक (Components of Counselling)

परामर्श प्रक्रिया में चार घटक महत्वपूर्ण होते हैं जिनके अभाव में परामर्श पूर्ण नहीं हो सकता या सफलता को प्राप्त नहीं कर पाता। वे चार घटक हैं- परामर्शदाता, सेवार्थी, संस्था, सैद्धांतिक उपागम। इन्हें सक्षेप में हम यहाँ समझेंगे।

परामर्शदाता - समस्या ग्रस्त सेवार्थी को परामर्श प्रदान करने वाले व्यावसायिक कर्मी को परामर्शदाता कहा जाता है। परामर्श प्रक्रिया में परामर्शदाता की महत्वपूर्ण भूमिका होती है। परामर्शदाता के अनुभव, दक्षता, व्यावसायिक अभिवृत्ति, नैतिक आचरण आदि की भूमिका महत्वपूर्ण मानी जाती है। परामर्शदाता सेवार्थी की समस्याओं को समझते हुए उसके संज्ञान, अनुभूति, व्यवहार और अंतर्वैयक्तिक संबंधों के क्षेत्र में विभिन्न प्रविधियों के माध्यम से हस्तक्षेप कर समस्याओं के समाधान तथा उचित लक्ष्य प्राप्ति की दिशा में सहयोग प्रदान करता है (राय & अस्थाना, 2015, पृ. 349)।

सेवार्थी - परामर्श प्रक्रिया में समस्याग्रस्त व्यक्ति को सेवार्थी के रूप में व्याख्यायित किया जाता है। इसे परामर्शी भी कहा जाता है। समस्याएं मानसिक, शारीरिक, आर्थिक, मनो-सामाजिक, स्वास्थ्य, घरेलू, शैक्षिक, कार्मिक आदि प्रकार की हो सकती है किन्तु जब तक व्यक्ति को न लगे कि वह उस समस्या से खुद नहीं निबट सकता या दूसरे शब्दों में कहें तो जब तक वह परामर्शदाता के पास आकर अपनी समस्या के प्रति परामर्श की मांग नहीं करता तब तक वह सेवार्थी नहीं हैं। अत: सेवार्थी वह है जो सेवा की मांग करता हो या आवश्यकता महसूस करता हो।

ज्ञान शांति मैत्री

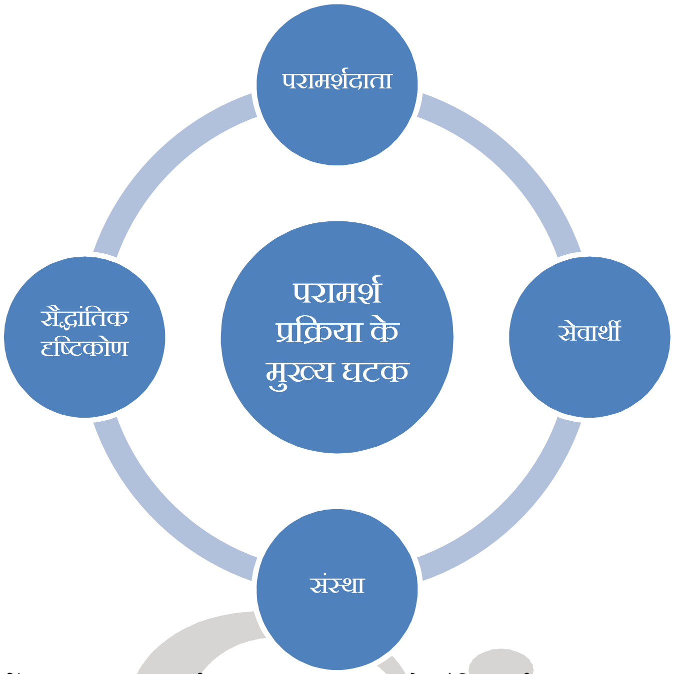

संस्था - समाज कार्य में संस्था महत्वपूर्ण घटक मानी जाती है चूँकि वर्तमान समय संस्थानीकरण का है, ऐसे में परामर्शदाता एवं सेवार्थी के लिए उपयुक्त संरचना के रूप में संस्था को देखा जाता है। जहां सेवार्थी सहजता से परामर्श प्राप्त कर सके। वर्तमान में विद्यालय, पारिवारिक न्यायालय, पुनर्वास केंद्र, अस्पताल, मानसिक अस्पताल आदि ऐसी जगहें हैं जहां सेवार्थी सहजता से परामर्श प्राप्त करता है।

सैद्धांतिक उपागम - परामर्श प्रक्रिया के रूप में क्रियान्वित करने के लिए सैद्धांतिक आधार की आवश्यकता होती है। मूलतः परामर्श मनोविज्ञान से ज्यादा जुड़ाव रखता है इसलिए इसके इतिहास में यह बात रेखांकित की जाती है कि *बीसवीं सदी के मध्य में कार्ल रोजर्स के व्यक्तित्व, मनोचिकित्सा एवं परामर्श संबंधी सिद्धांत और तकनीक का विकास हो पाया* (राय & अस्थाना, 2015, पृ. 325)। माना जाता है कि परामर्श और व्यक्तित्व के सिद्धांतों के बीच गहरा संबंध हैं। इसके साथ ही दर्शन शास्त्र, चिकित्सा विज्ञान, समाज कार्य तथा शिक्षा आदि विषयों के ज्ञान का उपयोग इसमें किया जाता है। परामर्श में मूलतः निम्नलिखित सैद्धांतिक उपागम महत्वपूर्ण है-

सैद्धांतिक उपागम	**संबंधित विद्वान**	**प्रमुख प्रविधि, तकनीक एवं हस्तक्षेप नीति**
मनोविश्लेषणात्मक उपागम	सिग्मंड फ्रायड	मुक्त साहचर्य, स्वप्न विश्लेषण आदि
व्यवहार उपागम	पावलोव, स्किनर, जोसेफ वोल्पे, अल्बर्ट बंडूरा आदि	अभ्यास एवं पुनर्बलन, प्रतिरूप सीखना, अनावृत्ति (Exposure), विसंवेदीकरण, अनुक्रिया परिहार, संज्ञानात्मक व्यवहार थेरेपी, व्यवहार परिमार्जन आदि।
संज्ञानात्मक उपागम	ओरोन बेक, जे. एस. बेक	सोक्रेटिक क्वेश्चनिंग, लागत-लाभ विश्लेषण, रियलिटी टेस्टिंग, अल्टरनेटिव पर्सपेक्टिव

		आदि।
तार्किक-संवेगात्मक व्यवहार उपचार	अल्बर्ट एलिस	शिक्षण, तर्क और विवेक, सुझाव, राजी करना, मुकाबला, सिद्धांत शिक्षण आदि।
अस्तित्ववादी उपागम	ज्यां पॉल सार्त्र एवं अलबर्ट कामू आदि अस्तित्ववादी दार्शनिक तथा विक्टर फ्रैंकल, आर. डी. लैंग आदि परामर्श मनोवैज्ञानिक।	अस्तित्ववादी परामर्शन का लक्ष्य 'अच्छे के लिए' होने के कारण सिद्धांतत: किसी भी प्रविधियों को स्वीकार नहीं करता। हस्तक्षेप नीति में खुलापन, विश्वास आदि मानवीय मूल्यों की मांग रखता है।
व्यक्ति-केन्द्रित उपागम/मानवतावादी उपागम	कार्ल रोजर्स	अप्रतिबंधित सकारात्मक सम्मान, परानुभुतिपूर्ण समझ आदि
गेस्टाल्टवादी उपागम	काफ्का, कोहलर, कर्ट लेविन आदि	शारीरिक बोध पर ध्यान देना, भाषा पर ध्यान देना, ध्रुवों का अन्वेषण, सायकोड्रामा वर्क, निर्देशात्मक बोध प्रयोग आदि।
विभिन्न दर्शन ग्राही समन्वयवादी उपागम	इगन, एंड्रू, गारफील्ड एवं अन्य	संज्ञानात्मक विश्लेषणात्मक उपचार, बहुआयामी उपचार, दक्ष सहयोगी मॉडल आदि

1.7 परामर्श के लक्ष्य और उद्देश्य

परामर्श प्रक्रिया सेवार्थी के हित में होती है जिसमें विभिन्न उपागमों का उपयोग कर परामर्शदाता सेवार्थी को उचित लक्ष्य तक पहुँचने में मदद करता है। इस प्रक्रिया के दौरान विभिन्न लक्ष्य बनाकर उसकी प्राप्ति का कार्य सेवार्थी परामर्शदाता के सहयोग से करता है। इस सामान्य लक्ष्य के बावजूद परामर्श प्रक्रिया के अन्य महत्वपूर्ण लक्ष्य हैं जो निम्नलिखित हैं-

- सहयोग
- सशक्तिकरण
- बहाली (Restitution)
- मनोवैज्ञानिक शिक्षा
- सामाजिक कौशलों का अर्जन
- निर्णय-रचना
- समस्या समाधान
- समायोजन
- आपातकालीन हस्तक्षेप एवं प्रबंधन

- लक्षण उन्मूलन तथा सुधार
- आत्म-बोध का विकास
- आत्म-स्वीकृति का विकास
- आत्म-वास्तविकीकरण या वैयक्तिकरण
- नवजागरण
- समस्या समाधान
- परिवेश एवं स्वयं के प्रति सकारात्मक दृष्टिकोण का विकास
- जीवन में सार्थकता एवं अर्थबोध का विकास
- अपरिहार्य को स्वीकारने हेतु तत्परता का विकास
- संज्ञानात्मक परिवर्तन
- व्यवहार परिमार्जन एवं व्यक्तित्व परिवर्तन
- व्यवस्था, संगठन तथा समाज में परिवर्तन
- उपयुक्त स्वास्थ्य व्यवहार का विकास
- सूझ का विकास
- अन्य के साथ संतोषजनक संबंध स्थापना

परामर्श के उद्देश्य

परामर्श में उपयोगी विभिन्न उपागमों के अपने उद्देश्य हैं जिसे परामर्शदाता सेवार्थी के साथ काम करते समय ध्यान में रखते हुए कार्य करता है। जैसे अस्तित्ववादी उपागम के अनुसार व्यक्ति के 'अच्छे के लिए' सोचना ज्यादा सुविधाजनक रहेगा, मानवतावादी उपागम में मानवीय मूल्यों को उच्च स्थान दिया गया है। वैसे ही व्यवहारवादी उपागम व्यक्ति के सीखने की प्रक्रिया को मजबूत बनाने के उद्देश्य से कार्यरत होता है। किन्तु परामर्श जो इन सभी उपागमों को साथ लेकर चलता है इसके कुछ अपने उद्देश्य हैं। इसे हम निम्नलिखित रूप से देख सकते हैं-

- मानसिक स्वास्थ्य
- व्यक्ति के संसाधन का संवर्धन
- प्रकार्यात्मक दृष्टि से व्यक्ति का विकास सहज बनाना
- स्व-आत्मीकरण
- आत्म-सिद्धि आदि

1.8 परामर्श के क्षेत्र

परामर्श मूलत: व्यक्ति के संपूर्ण विकास की जिम्मेदारी लेता है। विकास के प्रत्येक पड़ाव पर आने वाली प्रकार्यात्मक एवं मनोसामाजिक समस्याओं में सहयोग कर समस्याग्रस्त व्यक्ति को सामान्य वर्ग में परिवर्तित करने की क्षमता यह रखता है और इसी उद्देश्य से वह कार्य करता है।

परामर्शदाता की भूमिका को ग्रहन कर सामाजिक कार्यकर्ता विभिन्न प्रणालियों के अंतर्गत सेवार्थियों को उचित, नियोजित सहायता प्रदान कर सकता है। समाज कार्य के अपने ख़ास क्षेत्र-विषयों के अलावे कुछ अन्य क्षेत्रों में भी परामर्श प्रक्रिया द्वारा उचित सहयोग प्रदान किया जा सकता है। ऐसा देखा गया है कि व्यक्ति अपनी अपूर्ण इच्छाओं के कारण दबाव, तनाव, कुंठा, द्वंद्व आदि रोजमर्रा की समस्याओं को हल करने में आई असफलता के कारण बड़ी समस्या का शिकार हो जाता है। ऐसे में अगर व्यक्ति की इन रोजमर्रा की समस्याओं को यहीं छोटे स्तर पर हल किया जाए तो कम समय और उचित ढंग से सामाजिक कार्यकर्ताओं द्वारा सेवार्थियों की समस्या को हल किया जा सकता हैं। इस सन्दर्भ में रोजमर्रा की कुछ महत्वपूर्ण समस्याएं जिनकी ओर परामर्शदाता को अपना ध्यान आकर्षित करना होगा वे निम्नलिखित हैं-

- मानसिक समस्या- दबाव, आघात, चिंता तथा गंभीर मानसिक समस्याएं;
- स्कूल में बच्चों की समायोजन की समस्याएं;
- कॉलेज में कैरियर संबंधी समस्याएं;
- पारिवारिक जीवन में समायोजन संबंधी समस्याएं;
- वैवाहिक सामंजस्य तथा
- कार्यरत जगहों की समस्याएं आदि

1.9 सारांश

इस इकाई में हमने परामर्श के वैश्विक परिवेश तथा भारतीय परिवेश को देखा जिसमें भारत आज भी काफी दूर खड़ा दिखाई देता है। साथ ही हमने परामर्श का अर्थ तथा विभिन्न विद्वानों द्वारा दी गई परिभाषाओं के सहयोग से परामर्श की अवधारणा को समझा। परामर्श के मुख्य घटकों को समझते हुए इसके लक्ष्य एवं उद्देश्यों को संक्षेप में समझा।

समाज कार्य में परामर्श वैयक्तिक सेवा कार्य में उपयोगी एवं मुख्य प्रविधि के रूप में काम आता है। इस कारण समाज कार्य और परामर्श का संबंध दृढ़ होता दिखाई देता है। हालांकि भारत में परामर्श को एक व्यवसाय के रूप में कितनी जगह मिलती है यह विचारणीय प्रश्न है बावजूद इसके बड़े शहरों में इसकी उपयोगिता को देखा गया है। हाल में मूल भारतीय प्रणालियों-योग, सिद्धा आदि को साथ पश्चिमी परामर्श प्रक्रिया को मिलाकर नए परामर्श पाठ्यक्रम बनाएं जा रहे हैं। समाज कार्य में भी योग एवं प्राकृतिक चिकित्सा आधारित तकनीकों का उपयोग परामर्श प्रक्रिया में किया जा रहा है।

1.10 बोध प्रश्न

1. परामर्श के शाब्दिक अर्थ को समझाएं।
2. परामर्श के मुख्य घटकों पर चर्चा करें।
3. परामर्श से संबंधित विभिन्न संस्थानों को बताएं।
4. परामर्श के लक्ष्य एवं उद्देश्य पर टिप्पणी करें।
5. परामर्श के विभिन्न उपागमों को संक्षेप में बताएं।

1.11 सन्दर्भ एवं उपयोगी ग्रन्थ

American Counseling Asociation : Our History. (2017). Retrieved Feb. 3, 2017, from counseling.org: https://www.counseling.org/about-us/about-aca/our-history

McLeod, J. (2003). *An Introduction To Counselling* (3rd Edition ed.). Jaipur: Ravat Publication.

Prabhakar, A., & Dubouis, K. (2017, June 16). *Finally, a national survey on mental health disorders in India.* Retrieved Feb. 3, 2017, from dnaindia.com: http://www.dnaindia.com/health/report-finally-a-national-survey-on-mental-health-disorders-in-india-1848694

राय, ए., & अस्थाना,ए म. (2015). *निर्देशन एवं परामर्श* (2nd पुनर्मुद्रण ed.). दिल्ली: मोतीलाल बनारसीदास.

Rogers, C. R. (1931). *Client Centered Therapy*. Boston: Houghton Miffin Co.

उपयोगी लिंक

http://timesofindia.indiatimes.com/india/One-in-five-Indians-needs-mental-health-counselling-reveals-govt-statistics/articleshow/16747494.cms

https://www.counseling.org/about-us/about-aca/our-history

https://c.ymcdn.com/sites/www.csi-net.org/resource/resmgr/Research,_Essay,_Papers,_Articles/Counseling_Around_the_World-.pdf

https://www.merriam-webster.com/dictionary/counseling#medicalDictionary

http://www.isca.in/IJSS/Archive/v3/i3/9.ISCA-IRJSS-2014-12.pdf

http://shodhganga.inflibnet.ac.in/bitstream/10603/22182/7/07_chapter%203.pdf

ज्ञान शांति मैत्री

इकाई : 02 परामर्श की प्रक्रिया और अवस्थाएं

इकाई की रूपरेखा

2.0 उद्देश्य
2.1 प्रस्तावना
2.2 परामर्श प्रक्रिया
2.3 प्रक्रिया : परामर्श के सन्दर्भ में
2.4 परामर्श संबंध एवं प्रतिवेश
2.5 परामर्श प्रक्रिया की अवस्थाएं
2.5.1 परामर्श की आरंभिक अवस्था
2.5.2 परामर्श की मध्यावस्था
2.5.3 परामर्श की समापन अवस्था
2.6 सारांश
2.7 बोध प्रश्न
2.8 सन्दर्भ एवं उपयोगी ग्रन्थ

2.0 उद्देश्य

पिछली इकाई में हमने परामर्श की अवधारणा को समझने की कोशिश की थी। इस इकाई में हम परामर्श प्रक्रिया की संरचना तथा उसके चरण एवं अवस्थाओं पर प्रकाश डालेंगे।

इस इकाई के अध्ययन के बाद आप-

1. परामर्श की प्रक्रिया को समझ सकेंगे।
2. परामर्श में संबंध एवं प्रतिवेश (Setting) के महत्त्व को विश्लेषित कर सकेंगे।
3. परामर्श की विभिन्न चरणों एवं अवस्थाओं को समझ सकेंगे।

2.1 प्रस्तावना

परामर्श, जिसमें दो या कभी-कभी दो से अधिक लोग एक साथ आमने-सामने बैठकर समस्या का समाधान या उचित लक्ष्य प्राप्ति की प्रक्रिया को संपन्न करते हैं। इस प्रक्रिया को एक ख़ास संरचना में पूर्ण किया जाता है तथा विभिन्न चरणों एवं अवस्थाओं से गुजरते हुए यह प्रक्रिया पूर्ण होती है। पिछली इकाई में हमने देखा कि परामर्श में मुख्य घटक के रूप में परामर्श के विभिन्न सैद्धांतिक उपागम आते हैं। इन उपागमों में से एक या एकीकृत रूप से कुछ उपागमों का गठजोड़ बनाकर परामर्शदाता सेवार्थी को समस्या सुलझाने में मदद करता हैं। परामर्श तब तक प्रक्रिया का स्वरूप ग्रहण नहीं करता जब तक की उसमें कोई क्रियाकलाप, निश्चित चरण एवं अवस्थाएं न हों। इसके लिए परामर्शदाता को सेवार्थी का व्यक्तित्व और सेवार्थी की समस्या को समझते हुए उसके साथ मिलकर विभिन्न क्रियाकलाप चरणबद्ध तरीके से करने पड़ते हैं। इन क्रियाकलापों को कब

और कैसे करना हैं? उपकरणों एवं तकनीकों का चयन आदि बातों को ध्यान में रखते हुए परामर्शदाता सेवार्थी के साथ क्रियाकलाप करता है। ऐसा करने के पश्चात ही परामर्श एक प्रक्रिया का रूप ग्रहण कर लेता है।
इस इकाई में हम परामर्श की संरचना, चरण एवं अवस्थाओं का अध्ययन करने वाले हैं जिससे परामर्श की प्रक्रिया को समझने में मदद मिलेगी।

2.2 परामर्श प्रक्रिया

समाज कार्य में परामर्श के अंतर्गत सेवार्थी को अधिकतम आवश्यकताओं की पूर्ति हेतु प्रेरित किया जाता है साथ ही उसके मानसिक, सामाजिक, आर्थिक तथा शारीरिक विकास में सहयोग प्रदान किया जाता है। *परामर्श की प्रक्रिया द्वारा व्यक्ति के संज्ञान, व्यवहार, अनुभूति, कल्पना और अंतर्वैयक्तिक व्यवहार से संबंधित कारकों के क्षेत्र में हस्तक्षेप करके उसका विकास संगति, स्व-आत्मीकरण, आत्मसिद्धि तथा सकारात्मक मानसिक स्वास्थ्य की दिशा में सुनिश्चित किया जाता है* (राय & अस्थाना, 2015, पृ. 364)। तीन मुख्य घटकों परामर्शदाता, सेवार्थी तथा उपयुक्त परिवेश सृजन(संस्था) का उचित तालमेल ही परामर्श है। वैसे तो परामर्श में परामर्शदाता और सेवार्थी के बीच साक्षात्कार ही प्रमुख माध्यम होता है, इसके बावजूद ऐसे कई कारक हैं। जिन्हें यथायोग्य तरीके से परामर्शदाता सेवार्थी को सहयोग देने में उपयोग करता है। इसे एक ख़ास पद्धति या रास्ते से पूर्ण किया जाता है इसलिए परामर्श को परामर्श प्रक्रिया के रूप में देखा जाता है। आगे बढ़ने से पहले हम प्रक्रिया शब्द का अधिक गहनता से अध्ययन करेंगे ताकि परामर्श प्रक्रिया को एकरूपता में समझ सकें।

2.3 प्रक्रिया: परामर्श के सन्दर्भ में

परामर्श को समझने से पहले हम 'प्रक्रिया' पर थोडा प्रकाश डालेंगे। साधारणत: प्रक्रिया का शाब्दिक अर्थ है- घटनाओं का एक श्रृंखलाबद्ध तरीके से निश्चित अवधि में घटित होना। अकादमिक साहित्य में प्रक्रिया को समझने के विभिन्न तरीके बताए गए हैं किन्तु वे कभी-कभी भ्रमित कर देते हैं। *जॉन मैक्लोड* अपनी किताब *एन इंट्रोडक्शन टू काउन्सेलिंग* में प्रक्रिया शब्द के चार सरल अर्थ बताते हैं -

1. पहला, एक बड़े क्षितिज के रूप में प्रत्येक क्रियाकलाप जो परिवर्तन के लिए महत्वपूर्ण हैं उसे प्रक्रिया के रूप में परिभाषित किया जाता है। इसके अनुसार प्रक्रिया एक विचार है जो क्रमबद्ध क्रिया की जगह लेता है।
2. दूसरी ओर शोध-साहित्य में प्रक्रिया को जिस तरह परिभाषित किया जाता है; वस्तुत: सेवार्थी पर चिकित्सकीय प्रभाव डालने वाले कारकों के एक बड़े सेट की मौजूदगी के कारण 'आउटकम' एवं 'प्रक्रिया' के बीच अंतर्विरोध पाया जाता है। चिकित्सकीय प्रक्रियाएं एक साधन की तरह आउटकम में भागीदारी निभाती हैं। इन्हें अनुसंधान के अंतर्गत जांच-परख के बाद अनुसंधानकर्ता प्रक्रिया के रूप में क्या रखना है? का निर्धारण करता है। जैसे-लक्ष्य में एकमत, सेवार्थी-भूमिका की तैयारी, फ़ीस स्ट्रक्चर आदि महत्वपूर्ण साधन है।
3. प्रक्रिया का तीसरा अर्थ थेरेपी के मानवतावादी दृष्टिकोण से प्राप्त होता है। यह परिभाषा मनुष्यता के आवश्यक गुणों के रूप में प्रक्रिया को विशेषीकृत करती है। रोजर्स के विचारों पर आधारित यह अर्थ

उसके साहित्य में भी दिखाई देता है जैसे कि वे मानते थे मनुष्य जैसा भी है, वह एक धारा-प्रवाह की तरह है उसके लिए निश्चित परिवर्तन प्रक्रिया नहीं होनी चाहिए।

4. चौथे अर्थ में प्रक्रिया का अर्थ परामर्शदाता सेवार्थी के जीवन के अवरोधित अनुभवों का वर्णन करने तथा उसे और अधिक समझ के साथ व्यक्त करने के लिए प्रयुक्त रास्ते के रूप में हैं। सेवार्थी के कच्चे अनुभवों का अर्थ लगाने की कोशिश इसमें की जाती है। कभी-कभी इसे 'निर्मित प्रक्रिया' (Manufacturing Process) के रूप में देखा जाता है।

उक्त प्रक्रिया के विभिन्न अर्थ हैं जिन्हें परामर्शदाता अपने ख़ास दृष्टिकोण एवं सिद्धांतों के आधार पर प्रयोग में लाते हैं। तुलनात्मक रूप से देखे तो इसमें से कोई भी प्रक्रिया का अधिक सही या गलत अर्थ नहीं हैं बल्कि परामर्शदाताओं द्वारा व्यवहार में ज्यादातर उपयोग में लाए जाने वाले अर्थों के पूंज के रूप में इसे केवल यहाँ दर्शाया गया है। *जॉन मैक्लोड* का यह सुझाव है कि चौथे अर्थ में प्रक्रिया का उपयोग बड़ी मात्रा में किया जता है।

2.4 परामर्श संबंध एवं प्रतिवेश

सफल परामर्श में ऐसे सुसंरचित अभिव्यक्तिपूर्ण संबंध की आवश्यकता होती है जो सेवार्थी को अपने बारे में एक सीमा तक समझ अर्जित करने में सहयोग देता हो जिससे वह नव-अभिमुख प्रकाश में अपने लिए पहल करने में सक्षम हो सके। इसके लिए परामर्शदाता एवं सेवार्थी के बीच बेहतर संबध की आवश्यकता होती है जिसे प्रतिवेश के सृजन के अंतर्गत अधिक प्रगाढ़ किया जाता है। रोजर्स परामर्श प्रक्रिया में व्यक्ति से व्यक्ति के संबंध का वर्णन करते है अर्थात वे परामर्शदाता एवं सेवार्थी के बारे में ही बताते है। दूसरी ओर क्लार्कसन (1995)- कार्यात्मक संबंध, स्थानांतरण संबंध, सुधारक संबंध, व्यक्ति से व्यक्ति का संबध तथा परावैयक्तिक संबंध की बात करते हैं। विद्वानों का मानना है कि परामर्श में परामर्शदाता एवं सेवार्थी का संबंध लचीला, घनिष्ठ और समावेशी होना चाहिए।

परामर्श प्रतिवेश से तात्पर्य है ऐसा वातावरण जिसमें उपचारात्मक उद्देश्यों से प्रेरित विशिष्ट मानवीय संबंधों का विकास, अनुरक्षण और प्रबंधन होता हो यह सारे कार्य परामर्शदाता की योग्यता पर निर्भर है। परामर्शदाता के सामर्थ्य से ही उचित सबंध निर्मिति के लिए प्रतिवेश/परिवेश का सृजन किया जाता है। रोजर्स परामर्श प्रतिवेश की कुछ विशेषताएं बताते हैं जो निम्नलिखित है-

1. दो व्यक्ति संपर्क में हैं।
2. सेवार्थी विसंगति की अवस्था में हैं, वह असुरक्षित या चिंतित है।
3. परामर्शदाता या थेरेपिस्ट **संगति** की अवस्था में हैं।
4. परामर्शदाता क्लायंट के लिए **अप्रतिबंधित सकारात्मक सम्मान** का अनुभव कर रहा है।
5. परामर्शदाता को सेवार्थी की आतंरिक सन्दर्भ के संरचना के बारे में **परानुभूतिक** समझ की अनुभूति हो रही है।
6. सेवार्थी को परामर्शदाता की अनुभूतियों-सकारात्मक सम्मान और परानुभूतिक समझ की न्यूनतम मात्रा में अवश्य ही अनुभूति हो रही है।

उक्त विशेषताओं से तीन पद-संगति, अप्रतिबंधित सकारात्मक सम्मान तथा परानुभूति यह महत्वपूर्ण केन्द्रीय विशेषताओं के रूप में निकलकर सामने आते है। परामर्श प्रक्रिया में प्रतिवेश सृजन के लिए इन तीन बिन्दुओं को महत्वपूर्ण माना गया है।

2.5 परामर्श प्रक्रिया की अवस्थाएं

अब तक के विश्लेषण से हमें यह ज्ञात होता है कि परामर्श की प्रक्रिया में निहित मुख्य तीन घटक है- परामर्शदाता, सेवार्थी और परामर्श प्रतिवेश। इसमें से परामर्श प्रतिवेश को हमने संक्षेप में समझा है और उसके लिए परामर्शदाता की क्या भूमिका होती है? और उसे बेहतर बनाने के लिए उसकी केन्द्रीय विशेषताओं को भी हमने देखा है। प्रक्रिया क्या है? यह जानने के बाद वो कैसे घटित होती है? उसके चरण एवं अवस्थाओं को जानना हमारे लिए आवश्यक बन जाता है। परामर्श प्रक्रिया में उन सभी घटनाओं को शामिल किया जा सकता है जिससे सेवार्थी को उचित सहयोग प्राप्त हो सके किन्तु इसके लिए परामर्शदाता को क्या तैयारियां करनी पड़ती है और किन-किन चरणों एवं अवस्थाओं से गुजरते हुए परामर्श प्रक्रिया को अधिक सफल बनाया जा सकता है, इसे जानना भी हमारे लिए आवश्यक है।

परामर्श प्रक्रिया मूलतः मनोविज्ञान से नियमित होती है बावजूद इसके विभिन्न ज्ञानानुशासनों एवं दैनंदिन समस्याओं की प्रकृति तथा सांस्कृतिक परिवेश के आधार पर इसकी प्रक्रिया में काफी भिन्नता देखी जाती है। इस कारण परामर्श प्रक्रिया के चरण की संख्या से ज्यादा महत्वपूर्ण ये बात है कि वो क्रमगत है कि नहीं। क्योंकि विभिन्न विद्वानों ने चरणों की संख्या में घट-जोड़ किया है किन्तु प्रक्रिया के क्रम में वे सब सही है प्रक्रिया को अधिक सरल बनाने के लिए तथा चरणों को अधिक स्पष्टता से समझने के लिए संख्या का घटाना-बढ़ाना सामान्य बात है। जैसे कि रोजर्स अपने लेखन में सात चरणों की बात करते हैं कुछ विद्वान आठ तथा पांच चरणों को भी मान्यता देते हैं। दूसरी ओर आधुनिक परामर्श मनोविज्ञान के विद्वान चरणों से ज्यादा अवस्थाओं को महत्वपूर्ण मानते है। जिसमें तीन अवस्थाएं महत्वपूर्ण मानते हैं- आरंभिक अवस्था, मध्यावस्था तथा सत्रांत अवस्था। चित्र-01 में हम देख सकते हैं, जिसमें अवस्थाओं एवं चरणों दोनों को दर्शाया गया है। अत: हम परामर्श प्रक्रिया की अवस्थाओं एवं चरणों को समग्रता में देखते हैं।

2.5.1 परामर्श की आरंभिक अवस्था:- परामर्श की यह शुरूआती अवस्था है। इसमें पूर्व-तैयारी चरण या पूर्व-परामर्श सत्र निहित होते हैं। ज्यादातर मामलों में प्रथम संपर्क से पहले ही परामर्श की शुरुआत हो चुकी होती है। एक दूसरे के प्रति विश्वास निर्मिति में सहायक प्रक्रियाएं इस अवस्था में घटित होती है। इसलिए परामर्शदाता एवं सेवार्थी को अपनी-अपनी भूमिका निर्वहन की तैयारी करनी पड़ती है तथा इसी दरम्यान एक दूसरे के प्रति व्यवस्थित समझ भी विकसित करनी पड़ती है। इस अवस्था में जिन पक्षों का महत्त्व होता है वे निम्नलिखित है-

1. परामर्शदाता और सेवार्थी का एक दूसरे के प्रति पूर्व ज्ञान।
2. भूमिका पत्रक।
3. प्रथम संपर्क।
4. भौतिक प्रतिवेश तथा।
5. सेवार्थी के आने से पहले की पूर्व-तैयारी।

यह अवस्था इंट्रोडक्टरी होने के कारण इसमें दोनों (सेवार्थी और परामर्शदाता) एक-दूसरे को परखते हैं। इसी सन्दर्भ में सेवार्थी परामर्शदाता से अपनी अपेक्षाओं की पूर्ति के सन्दर्भ में जानकारी हासिल करने की कोशिश करता है तो दूसरी ओर परामर्शदाता भूमिका पत्रक के साथ समय, धन और सेवार्थी की अपेक्षाओं को जानने की कोशिश कर रहा होता है। प्रथम संपर्क आगे के संबंध पर असर डालता है इस कारण काफी सावधानी एवं तैयारी के साथ संचार (आमने-सामने हो या टेलिफोनिंग) किया जाता है। प्रथम संपर्क की जगह इस अवस्था में महत्वपूर्ण होती है क्योंकि प्रत्येक परिवेश का सेवार्थी के मनोवैज्ञानिक दशा पर असर पडता है, इसलिए शांतिपूर्ण एवं गोपनीयता को बनाए रखने वाले प्रतिवेश को चुनना आवश्यक माना जाता है। और अंतिम में सेवार्थी से साक्षात्कार के समय विभिन्न चीजों को ध्यान में रखने वाले चीजें महत्वपूर्ण मानी जाती है, जैसे सेवार्थी की इसके पहले की कोई केस हिस्ट्री या रेफरल पत्र आदि चीजों की औपचारिकता को इसी अवस्था में पूर्ण किया जाना आवश्यक माना जाता है।

पूर्व-तैयारी के बाद आरंभिक अवस्था में धीरे से प्रवेश करते हुए परामर्श प्रक्रिया की शुरुआत होती है। एक-दूसरे के मूल्यांकन के बाद आमने-सामने बातचीत का दौर शुरू हो जाता है जिसे **सत्र** कहा जाता है। सत्र की शुरुआत अभिवादन एवं स्थान ग्रहण करने से होती है तथा बातचीत के साथ इंट्रोडक्शन की शुरुआत होती है। सत्र के अंतिम में कार्य योजना का निर्धारण किया जाता है। सत्र की शुरुआत में कुछ ध्यान देने योग्य बातें निम्नलिखित हैं-

1. दक्ष उपस्थिति और सुनना।
   - ✓ बातचीत को आगे बढाने में सहयोग
   - ✓ प्रश्न करना
   - ✓ क्लेरिफिकेशन
2. निर्वचन या व्याख्या।
3. दोहराना।
4. संक्षेपीकरण।
5. टकराव।
6. सेवार्थी का सम्मान।
7. बातचीत को संरचित करना, समस्या या अपेक्षाओं का प्राथमिकीकरण करना।
8. कार्य-योजना का निर्धारण करना तथा।
9. परामर्श सत्र को समेटना।

ज्ञान शांति मैत्री

2.5.2 परामर्श की मध्यावस्था:- मध्यावस्था परामर्श प्रक्रिया का सबसे महत्वपूर्ण और बड़ा हिस्सा होता है। मुख्यत: परामर्श के महत्वपूर्ण इसी अवस्था में पूर्ण किए जाते हैं। इसी अवस्था में सेवार्थी की समस्या को समझकर उचित हस्तक्षेप नीति के आधार पर उसे सुलझाने की कोशिश की जाती है। विभिन्न सैद्धांतिक उपागमों के अंतर्गत परामर्शदाता लक्ष्य सिद्धि के लिए सेवार्थी के साथ मिलकर कार्य करता है। इसी कारण इस अवस्था को कार्य अवस्था भी कहा जाता है। विभिन्न सिद्धांतो के अभ्यास में भिन्नता दिखाई देती है जिसके कारण लक्ष्य भी अलग-अलग होते हैं तथा सेवार्थी की समस्या एवं अपेक्षाओं की पूर्ति को ध्यान में

रखकर परामर्शदाता को उचित सिद्धांत का चुनाव करना पड़ता है। मध्यावस्था में कार्य करने की पद्धति एक बड़े लक्ष्य को प्राप्त करने के लिए छोटे-छोटे प्रक्रियागत लक्ष्यों की प्राप्ति के अंतर्गत तय की जाती है। उदाहरण के तौर पर पारिवारिक परामर्श के अंतर्गत आने वाली समस्याओं को देखा जा सकता है। इसमें पति-पत्नी के बीच के द्वंद्व को ख़त्म कर एक साथ एक परिवार के रूप में समायोजित करने का एक

ज्ञान शांति मैत्री

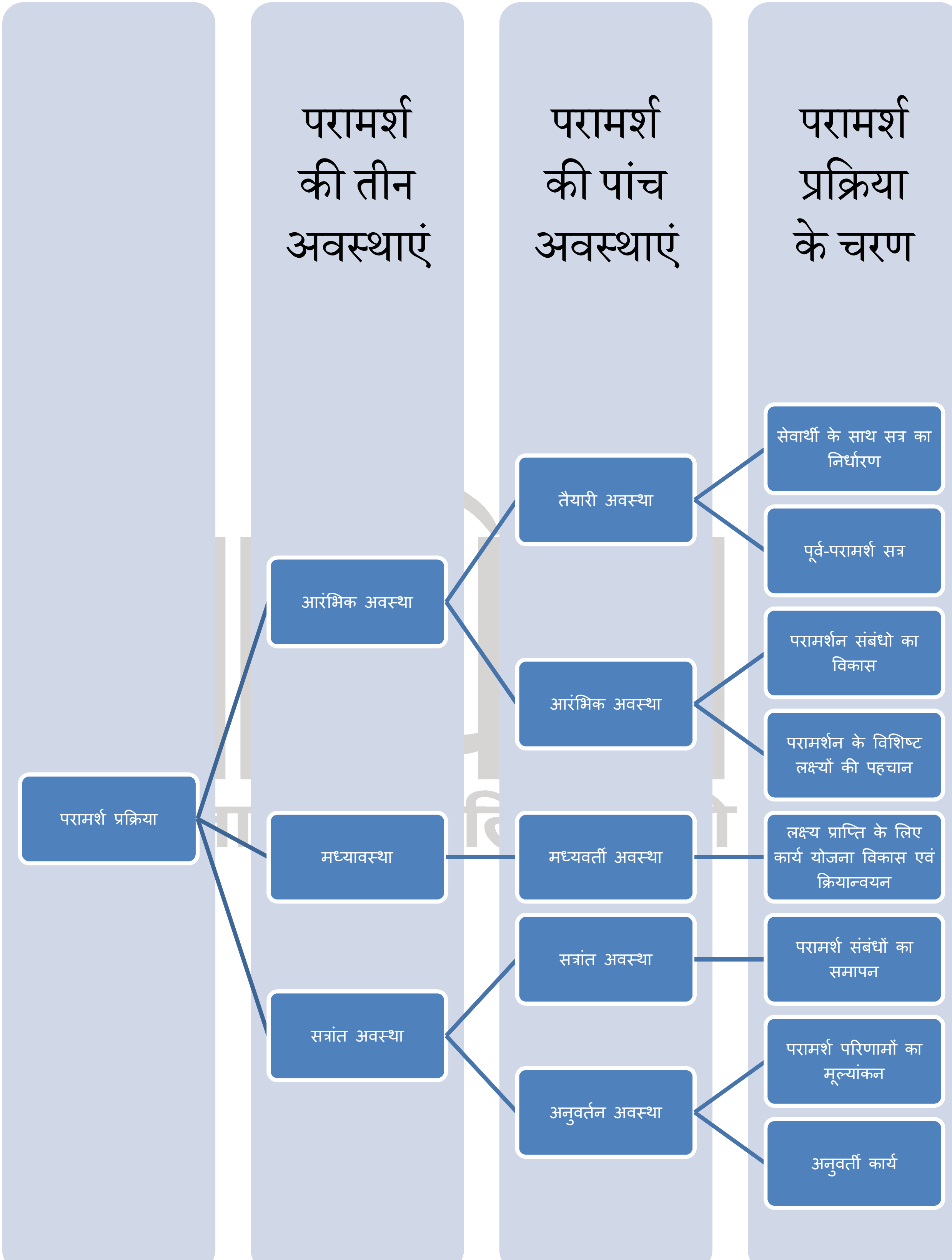

चित्र- 1 परामर्श की प्रक्रिया की अवस्थाएं एवं चरण

बड़ा लक्ष्य होता है किन्तु इस बड़े लक्ष्य की प्राप्ति के लिए छोटे-छोटे लक्ष्य जैसे- पति-पत्नी के बीच बातचीत को बढ़ावा देना, उनकी अलग-अलग अपेक्षाओं को समझकर एक दूसरे के सामने रखना, गलतियों में सुधार लाने के लिए अवसर प्रदान करना आदि लक्ष्य रखकर उसे प्राप्त करने की कोशिश की जाती है। जिससे बड़ा लक्ष्य अपने आप प्राप्त होगा।

इअन हर्टोन (Ian Horton, 2000) ने परामर्श के इस कार्य अवस्था के कुछ महत्वपूर्ण कार्य लक्ष्यों का निर्धारण किया है जो निम्नलिखित है-

1. परामर्शन संबंधों एवं कार्यात्मक संबंधों को और दृढ़ करना।
2. परामर्श संबंध में सेवार्थी की समस्या तथा सेवार्थी के मन में कोई अदृश्य द्वंद्व, प्रश्न हो तो उसके अभिव्यक्ति के लिए झरोखे की तरह उपयोग में लाना।
3. परामर्श के लक्ष्यों और सैद्धांतिक अभिग्रहों के अनुरूप सुसंगत अधिगम और परिवर्तन की प्रक्रिया को सहज बनाना।
4. पूनर्मुल्यांकनसत्रों का आयोजन करना और प्रगति का आकलन करना।

उक्त लक्ष्यों के अंतर्गत मध्यावस्था में यह ध्यान रखा जाता है की जो लक्ष्य रखा गया है वह प्राप्य हो अप्राप्य लक्ष्य नहीं रखे जाते। जिन लक्ष्यों की प्राप्ति के लिए परामर्शदाता सेवार्थी के साथ मिलकर सत्र आयोजित कर रहा है उससे सेवार्थी में क्या परिवर्तन आ रहे हैं? परिवर्तन की दिशा क्या है? सेवार्थी के लिए सहायक एवं बाधक क्या है? वो कौन सी कठिनाइयाँ है जिसके कारण सेवार्थी निश्चित लक्ष्य तक नहीं पहुँच पा रहा है आदि का समालोचन एवं मूल्यांकन और संभव हो तब-तब कार्य योजना में परिवर्तन का सिलसिला मध्यावस्था में चलता है।

2.5.3 परामर्श समापन अवस्था:- परामर्श प्रक्रिया में परामर्शदाता एवं सेवार्थी के बीच के संबंध व्यवसायिक होते हैं, इसलिए इसका आधार एक व्यवसायिक संविदा के अंतर्गत आता है। इसे निश्चित अवधि में पूर्व निर्धारित उद्देश्यों की स्थापना के लिए उपयोग में लाया जाता है। जैसे ही परामर्श के उद्देश्यों के अंतर्गत निर्धारित लक्ष्यों की प्राप्ति हो जाती है उसके बाद धीरे-धीरे परामर्श प्रक्रिया समापन की ओर मार्गक्रमण करती है। जैसे कि इसके पहले की दो अवस्थाओं में हमने देखा-परामर्शदाता सेवार्थी को उचित लक्ष्य प्राप्ति में सहयोग करता है जिसके लिए अन्वेषण के अंतर्गत एक ख़ास तरह के प्रतिवेश का सृजन करता है जिसके भीतर परामर्शदाता सेवार्थी को संप्रेषण के माध्यम से विभिन्न तकनीकों एवं क्रियाओं से अवगत कराता है जिससे सेवार्थी लक्ष्य प्राप्त कर सके। जब परामर्शदाता को लगे कि सेवार्थी अपनी समस्या सुलझाने में समर्थ हो गया है या सेवार्थी को लगे कि वो अब अपने लक्ष्यों को खुद प्राप्त कर सकता है तथा अपेक्षाओं के बीच आने वाले अवरोधों से स्वयं निबट सकता है ऐसे में दोनों एक दूसरे की सहमति से परामर्श समापन करते हैं।

समापन की अवस्था में ध्यान देने योग्य बात यह है कि परामर्शदाता के सहयोग एवं सृजित वातावरण में सेवार्थी को अपनी योग्यताओं पर भरोसा तो आ जाता है किन्तु इसके बाहर जो वास्तविक संसार है जिसमें सेवार्थी को स्वयं कार्य करना है। वहां के लिए उसे एकाएक भेजना उचित नहीं है। क्योंकि समापन के समय के नजदीक आने के साथ ही सेवार्थी में फिर से नई चिंताए उत्पन्न होना शुरू हो जाती है जिसका संबंध बाहरी विश्व से होता है। ऐसे में परामर्शदाता सेवार्थी को शुरूआती परामर्श सत्रों की ओर उसका ध्यान खींचता है और सतर्कता के साथ समापन के लिए सेवार्थी को तैयार करता है। वास्तविक जीवन में वापसी के बीच आने

वाली प्रत्येक दुविधाओं का शमन परामर्शदाता इसी अवस्था में करता है ताकि सेवार्थी उससे प्रेरित हो और सजगता से अपने आप को समाज में समायोजित कर सके। समापन अवस्था में परामर्श प्रक्रिया का मूल्यांकन करने के लिए इअन हर्टोन (Ian Horton, 2000) पांच बिंदु प्रदान करते हैं जो निम्नलिखित हैं-

- परामर्श की उपलब्धियां क्या रही?
- अभी और क्या प्राप्त किया जाना शेष है?
- परिवर्तन क्यों घटित हुआ?
- भविष्य में क्या हो सकता है?
- परामर्श संबंध का स्वरूप क्या रहा ?

इसके अंतर्गत यह सुनिश्चित करना होता है की सेवार्थी को इससे क्या लाभ हुआ और क्या हानि। इस मूल्यांकन के बाद ही परामर्श का सत्र समापन की ओर अग्रसर होता है।

समापन अवस्था में दूसरी महत्वपूर्ण बात यह है कि परामर्श समापन के बाद परामर्शदाता का काम ख़त्म नहीं होता। वास्तविक जीवन में लौटने के बाद सेवार्थी को आने वाली समस्याओं, अवरोधों को समझकर उसे बीच-बीच में प्रेरित करने का काम भी उसको बीच-बीच में करना पडेगा। इस प्रक्रिया को अनुवर्तन (Follow-Up) कहा जाता है। समापन सत्र के पश्चात सांविदिक रूप से सेवार्थी से संबंध ख़त्म हो जाता है बावजूद इसके सेवार्थी अपने जीवन में परामर्श प्रक्रिया के दौरान सिखाए गए तकनीकों का उपयोग किस तरह कर रहा है? उसमें आने वाली तकलीफों से उबरने के लिए वह परामर्शदाता के पास वापस आ सकता है तब परामर्शदाता का यह दायित्व है कि पुन: उसे प्रेरित एवं अधिगम के साथ समायोजन में मदद करें। हालांकि समापन के बाद इन भेटों की मात्रा धीरे-धीरे कम होती जानी चाहिए अन्यथा समापन सत्र के बाद संबंध ख़त्म होने के कारण सेवार्थी में अवसाद की स्थितियां उत्पन्न हो सकती है। ऐसे में समापन के बाद अनुवर्तन आवश्यक बन जाता है। अनुवर्तन कार्य को उद्देश्य के आधार पर दो प्रकारों में विभाजित किया जाता है-

- अनुवर्ती अध्ययन; तथा
- अनुवर्तन सेवा।

अनुवर्ती अध्ययन के अंतर्गत वास्तविक जीवन में लौटने के बाद सेवार्थी का मूल्यांकन किया जाता है। जिसमें यह देखा जाता है कि परामर्श प्रक्रिया से अर्जित लाभ प्राप्त कर सेवार्थी वास्तविक जीवन में किस प्रकार कार्य कर रहा है? उसके जीवन में अब 'उस' समस्या की दर कितनी है। दूसरी ओर अनुवर्तन सेवा के उद्देश्य से किए गए अनुवर्तन में समस्या की पुनरावृत्ति को रोकना होता है। परामर्श समापन के कुछ अंतराल के बाद फिर से सेवार्थी के साथ परामर्श सत्र आयोजित कर शुरूआती परामर्श सत्रों से प्राप्त लाभों को फिर से याद कराया जाता है तथा उन लाभों को पूनर्बलित (Reinforce) किया जाता है जिससे सेवार्थी का आत्मविश्वास अधिक दृढ़ हो जाता है। इन दोनों अनुवर्तन के प्रकारों में से सेवार्थी के लिए लाभकारी अनुवर्तन सेवा है। इससे सेवार्थी को अधिक लाभ प्राप्त होता है। इसलिए ज्यादातर परामर्श प्रक्रिया में अनुवर्तन सेवा को प्राथमिकता दी जाती है।

2.6 सारांश

परामर्श प्रक्रिया एक विशेषीकृत प्रक्रिया है जिसके लिए परामर्शी को विशेष प्रशिक्षण की आवश्यकता होती है। साथ ही विभिन्न सिद्धांतों की समझ भी इसमें महत्वपूर्ण शर्त मानी जाती है। परामर्श प्रक्रिया की सफलता को प्रभावित करने वाले कई कारक होते जिसमें परामर्शदाता की विशेषताएं, योग्यता, दक्षता, समस्या का ज्ञान आदि की उचित समझ को महत्वपूर्ण माना गया है। परामर्शदाता को सेवार्थी की समस्या की प्रकृति, उसकी अपेक्षाओं और व्यक्तित्व के आधार पर ही सिद्धांतों, तकनीकों एवं उपकरणों का उपयोग करना होगा। उसी के आधार पर कार्य-योजना एवं हस्तक्षेप नीति का निर्धारण किया जाना चाहिए। साथ ही परामर्शदाता को प्रतिवेश सृजन/निर्माण में उक्त सभी बिन्दुओं को ध्यान में रखना आवश्यक है। तभी सेवार्थी उचित लक्ष्य तक पहुँच सकता है और परामर्श प्रक्रिया सफल हो सकती है। वे सेवार्थी के साथ काम करते समय विभिन्न व्यवसायिक मार्गदर्शिकाओं का पालन करे और ध्यान रहे कि विभिन्न संस्कृतियों में काम करते समय स्थानीय रीती-रिवाजों एवं भाषा को समझने की कोशिश परामर्शदाता को करनी चाहिए ताकि सेवार्थी के साथ संबंध प्रगाढ़ बन सके। यह मान लेना आवश्यक है कि परामर्श प्रक्रिया में संप्रेषण ही महत्वपूर्ण माध्यम है जिससे आप सेवार्थी को समझ सकते हैं और समझा सकता हैं।

2.7 बोध प्रश्न

1. परामर्श क्या है? अपने शब्दों में लिखे।
2. पारिवारिक परामर्श केंद्र में भेंट देकर उसका वर्णन करे।
3. परामर्श प्रक्रिया की अवस्थाओं को विस्तार से बताएं।
4. परामर्श प्रक्रिया को प्रभावित करने वाले कारकों की संक्षेप में चर्चा करें।
5. आरंभिक अवस्था का वर्णन करें।
6. अनुवर्तन के दो प्रकारों को बताएं।

ज्ञान शांति मैत्री

2.8 संदर्भ एवं उपयोगी ग्रंथ

McLeod, J. (2003). *An Introduction To Counselling* (3rd Edition ed.). Jaipur: Ravat Publication.

Prabhakar, A., & Dubouis, K. (2017, June 16). *Finally, a national survey on mental health disorders in India.* Retrieved Feb. 3, 2017, from dnaindia.com: http://www.dnaindia.com/health/report-finally-a-national-survey-on-mental-health-disorders-in-india-1848694

राय, ए., & अस्थाना,ए म. (2015). *निर्देशन एवं परामर्श* (2nd पुनर्मुद्रण ed.). दिल्ली: मोतीलाल बनारसीदास.

Rogers, C. R. (1931). *Client Centered Therapy*. Boston: Houghton Miffin Co.

https://www.google.co.in/search?q=Counselling+process&source=lnms&tbm=isch&sa=X&ved=0ahUKEwjV2ZOqlcnSAhVBwpQKHYl4DBwQ_AUICCgB&biw=1517&bih=735#tbm=isch&q=stages+in+counselling+process&*&imgrc=op6QJzU46cPvQM:

http://www.psychotherapy.net/data/uploads/5110340dadcda.pdf

https://healthpsychologyconsultancy.wordpress.com/2015/07/26/counselling-process-the-7-stages/

http://www.nlep.nic.in/pdf/Annex%20VIII%20Counselling%20process.pdf

http://www.yoursocialworker.com/p-articles/sexual-abuse-counselling_physcians.htm

इकाई : 03 परामर्श के दृष्टिकोण एवं तकनीक

इकाई की रूपरेखा

3.0 उद्देश्य
3.1 प्रस्तावना
3.2 परामर्श के विभिन्न दृष्टिकोण
3.2.1 मनोविश्लेषणात्मक दृष्टिकोण
3.2.2 विश्लेषणात्मक दृष्टिकोण
3.2.3 एडलरवादी दृष्टिकोण
3.2.4 व्यवहारात्मक दृष्टिकोण
3.2.5 संज्ञानात्मक दृष्टिकोण
3.2.6 तार्किक संवेगात्मक व्यवहार चिकित्सा दृष्टिकोण
3.2.7 व्यक्तिगत निर्मिति दृष्टिकोण
3.2.8 व्यक्ति केन्द्रित दृष्टिकोण
3.2.9 अस्तित्ववादी दृष्टिकोण
3.2.10 गेस्टाल्ट दृष्टिकोण
3.3 अन्य दृष्टिकोण
3.4 परामर्श प्रक्रिया में उपयोगी तकनीक
3.5 सारांश
3.6 बोध प्रश्न
3.7 संदर्भ एवं उपयोगी ग्रन्थ

ज्ञान शांति मैत्री

3.0 उद्देश्य

इस इकाई के अध्ययन के पश्चात आप -

1. परामर्श प्रक्रिया में उपयोगी विभिन्न दृष्टिकोणों की चर्चा कर सकेंगे।
2. परामर्श प्रक्रिया के अंतर्गत उपयोग में लाए जाने वाले तकनीक एवं हस्तक्षेप नीति की व्याख्या कर सकेंगे।

3.1 प्रस्तावना

इसके पहले की दो इकाइयों में हमने परामर्श क्या है, और उसकी प्रक्रिया को समझ लिया है। अब हम परामर्श प्रक्रिया में उपयोगी दृष्टिकोणों के अंतर्गत उपयोग में लाए जाने वाले विभिन्न दृष्टिकोणों एवं तकनीक की बात इस इकाई में करेंगे। आम तौर पर कोई भी कार्य करने के लिए हमें एक निश्चित दृष्टिकोण (Approach) की आवश्यकता होती है और साथ ही कुछ उपकरणों एवं तकनीकों की आवश्यकता होती है। चूँकि कोई भी कार्य बेहतर तभी हो सकता है जब उसमे परिशुद्धता हो। जैसे कि कोई भी ज्ञान तभी विज्ञान होता है जब उसमें

मापन पद्धतियाँ एवं कसौटियां हो। इसी के आधार पर कोई विज्ञान अपने आप को स्थापित कर सकता है। दूसरी ओर विभिन्न व्यवसायों में विभिन्न प्रकार के उपकरणों एवं तकनीकों का उपयोग किया जाता है।
परामर्श प्रक्रिया के विभिन्न अवस्थाओं एवं चरणों के दौरान परामर्शदाता सेवार्थी के सहयोग के उद्देश्य से विभिन्न दृष्टिकोणों के अंतर्गत उपकरणों एवं तकनीकों का उपयोग करता है। इसका उपयोग परामर्शदाता सेवार्थी की समस्या को जानने तथा उससे निबटने के लिए बनाई जाने वाली कार्य योजना में करता है। साक्षात्कार को परामर्श में एक आमने-सामने साक्षात्कार की प्रक्रिया मानना अलग बात है तथा परामर्श प्रक्रिया के अंतर्गत साक्षात्कार को एक उपकरण के रूप में उपयोग में लाना अलग बात है। दोनों समय में साक्षात्कार का स्वरूप अलग होता है।

3.2 परामर्श के विभिन्न दृष्टिकोण

परामर्श प्रक्रिया में सेवार्थी की समस्या समाधान एवं निर्धारित लक्ष्य प्राप्ति के लिए परामर्शदाता द्वारा एक ख़ास सैद्धांतिक दृष्टिकोण का आधार लिया जाता है, जिसमें मूलतः मनोविज्ञान के व्यक्तित्व सिद्धांत, मूलभूत अभिकल्पना या दर्शन, मानव विकास या व्यक्तित्व विकास का सिद्धांत, नैदानिक सिद्धांत तथा परामर्शन/थेरेप्टिक परिचालन और तकनीक शामिल है। परामर्श प्रक्रिया में इन दृष्टिकोणों के अंतर्गत सेवार्थी और समस्या के बीच के संबंध तथा सेवार्थी की प्रकृति एवं समस्या की प्रकृति का विश्लेषण किया जाता है। निष्कर्ष के रूप में इसी के आधार पर परामर्श प्रक्रिया में सेवार्थी की विभिन्न मनोसामाजिक प्रक्रियाओं जैसे-बाहरी पर्यावरण या वास्तविकता के प्रति प्रत्यक्षण, प्रतिरोपण, विश्वास, मूल्य तथा सेवार्थी की निजी वास्तविकता की संरचना का विश्लेषण शामिल है। साथ ही सामाजिक-सांस्कृतिक सन्दर्भों में सेवार्थी की वैयक्तिकता का विश्लेषण भी देखा जाता है। इसे समझने के लिए उक्त सिद्धांतों, अभिकल्पनाओं, परिचालन-तकनीकों का सहारा लिया जाता है। जो अंततः सेवार्थी को समझने का एक विशेष दृष्टिकोण प्रदान करती है। इनमें से कुछ प्रमुख दृष्टिकोणों को संक्षेप में यहाँ समझने की कोशिश करेंगे जो निम्नलिखित हैं-

- मनोविश्लेषणात्मक दृष्टिकोण (Psychoanalytic Approach)
- विश्लेषणात्मक दृष्टिकोण (Analytic Approach)
- एडलरवादी दृष्टिकोण (Adlerian Approach)
- व्यवहारात्मक दृष्टिकोण (Behavioural Approach)
- संज्ञानात्मक दृष्टिकोण (Cognitive Approach)
- तार्किक संवेगात्मक व्यवहार चिकित्सा दृष्टिकोण (Rationale Emotive Behaviour Therapy)
- व्यक्तिगत निर्मिति दृष्टिकोण (Personal Construct Approach)
- व्यक्ति केन्द्रित दृष्टिकोण (Person Centred Approach)
- अस्तित्ववादी दृष्टिकोण (Existential Approach)
- गेस्टाल्ट दृष्टिकोण (Gestalt Approach)

अब हम इन सभी सैद्धांतिक दृष्टिकोणों को सक्षेप में समझने की कोशिश करेंगे। इन दृष्टिकोणों को संक्षेप में समझना मुश्किल होगा इसलिए यहाँ हम केवल इसके प्रतिपादक, समस्या की व्याख्या, लक्ष्य तथा उनके द्वारा

प्रयुक्त तकनीक को समझेंगे। यह दृष्टिकोण सेवार्थी की समस्या को कैसे व्याख्यायित करते हैं? का विश्लेषण समस्या की व्याख्या में हैं। साथ ही उस समस्या के उपाय के लिए परामर्शदाता द्वारा जिन चीजों (व्यवहार, संज्ञान, भावना आदि) में परिवर्तन लाना आवश्यक समझा गया है तथा उसी के आधार पर लक्ष्य का निर्धारण किया जाना आवश्यक माना गया है उसे लक्ष्य के रूप में व्याख्यायित किया गया है। परिवर्तन संबंधी लक्ष्य प्राप्ति के लिए जिन क्रियाकलापों एवं परिवर्तनीय कारकों का उपयोग किया जाना है उसे तकनीक के रूप में दिया गया है। यहाँ प्रत्येक दृष्टिकोण एक दूसरे से अलग है क्योंकि इनके मूलभूत सिद्धांत या विचारों में अंतर है। अत: इन दृष्टिकोणों को निम्नलिखित रूप से समझेंगे-

3.2.1 मनोविश्लेषणात्मक दृष्टिकोण (Psychoanalytic Approach) : यह दृष्टिकोण वियना के प्रसिद्ध तंत्रिकाविज्ञानी सिगमंड फ्रायड के विचारों पर आधारित है। इनका शुरूआती विचार था कि 'बातचीत' से उपचार संभव है। उनका मानना था कि व्यक्ति में ज्यादातर समस्याएं दमन से संबंधित होती हैं, इसलिए इन्होंने समस्या की व्याख्या कुंठा, द्वंद्व, चिंता, विकासात्मक बाधाएं, आघात तथा अहम् रक्षा तंत्र के रूप में की हैं। इसके उपचार हेतु सेवार्थी में परिवर्तन संबंधी लक्ष्य के रूप में वे जिन परिवर्तनों की बात करते हैं वे हैं- अचेतन सामग्री को चेतन में लाना, अंतरण, प्रतिरोध को दूर करना तथा अंतर्दृष्टि का विकास। इन परिवर्तनों के लिए वे मुक्त सहचर्य, स्वप्न विश्लेषण, प्रतिरोध का विश्लेषण, अंतरण की व्याख्या जैसी तकनीकों के उपयोग की बात करते हैं।

3.2.2 विश्लेषणात्मक दृष्टिकोण (Analytic Approach): कार्ल जुंग के विश्लेषणात्मक मनोविज्ञान के विचारों पर आधारित इस दृष्टिकोण का विकास हुआ है। इसी कारण इसे परामर्श से ज्यादा मानसिक उपचार पद्धति के रूप में लोग जानते हैं। इस दृष्टिकोण का मूलभूत विचार यह है कि मानवीय व्यवहार के स्वरूप का निर्धारण व्यक्तिगत एवं जातीय इतिहास तथा उद्देश्यों एवं आकांक्षाओं के द्वारा होता है। जुंग का यह विचार फ्रायड से काफी भिन्न तथा रहस्यवादी लगता है। जुंग समस्या की व्याख्या करते हुए कहते हैं कि मिथकों, स्वप्नों, कर्मकांडों तथा कलात्मक कार्यों के साथ-साथ मनोक्षोभ एवं विकृतियों के रूप में आर्किटाइप्स अभिव्यक्त होते हैं। चेतन और अचेतन मन के संतुलन से व्यक्तित्व में संतुलन बना रहता है। असंतुलन की दशा में व्यक्तित्व विभाजित हो जाता है, जिससे मानसिक समस्याएं उत्पन्न होती हैं। विश्लेषणात्मक दृष्टिकोण इन समस्या से निजात पाने के लिए परिवर्तन संबंधी लक्ष्य के रूप में अचेतन की सामग्री को चेतन द्वारा स्वीकार किया जाना और उसका संपूर्ण व्यक्तित्व के साथ एकीकरण हो, इस बात पर जोर देता है। इसके अंतर्गत भावांतरण एवं प्रति-भावांतरण की प्रक्रिया के अंतर्गत सेवार्थी में परिवर्तन की दिशा नियत की जाती है। विश्लेषणात्मक दृष्टिकोण का प्रमुख उद्देश्य सेवार्थी का व्यक्तित्व एकीकरण एवं स्व सिद्धि है। इसकी प्राप्ति के लिए वे स्वप्न विश्लेषण (फ्रायड से अलग प्रक्रिया के रूप में इसे जुंग ने अपनाया), कला (पेंटिंग आदि) तथा शब्द सहचर्य विधि का अनुमोदन करते हैं। यहाँ यह समझना आवश्यक है कि जुंग द्वारा दी गयी तकनीक फ्रायड की तकनीकों से अधिक परिमार्जित है जिनका वैचारिक आधार बिलकुल भिन्न हैं।

3.2.3 एडलरवादी दृष्टिकोण (Adlerian Approach): अल्फ्रेड एडलर जिन्हें फ्रायड के प्रथम विद्रोही तथा व्यक्तिगत मनोविज्ञान के प्रतिपादक के रूप में भी जाना जाता हैं। एडलर हीनता तथा श्रेष्ठता मनोग्रंथि के आधार पर मानवीय व्यवहार की व्याख्या करते हैं तथा बच्चों के जन्मक्रम में होने वाली त्रुटियों के आधार पर समस्या का विश्लेषण करते हैं। उनका मानना था कि व्यक्ति द्वारा अनुभूत अपूर्णता के कारण हीनता मनोग्रंथि

का विकास होता है। इसकी क्षतिपूर्ति के लिए व्यक्ति में श्रेष्ठता मनोग्रंथि की रचना होती है। एडलर की व्यक्तिगत उपचार प्रणाली का मुख्य लक्ष्य सेवार्थी के अचेतन में स्थित लक्ष्य, विश्वासों एवं विचारों को अनाच्छादित कर उसे चेतन बोध में लाना है। एडलर का दूसरा लक्ष्य सेवार्थी के मांगे जाने पर उपलब्ध करवाया जाता है। एडलर के अनुसार सेवार्थी के जीवन के तीन क्षेत्र व्यवसाय, सामाजिक जीवन तथा अंतरंग संबंध इन तीनों की संतुलित भागीदारी से मानसिक स्वास्थ्य प्राप्त किया जा सकता है। इसलिए वे सलाह देते हैं कि सेवार्थी के सामने वास्तविकतापूर्ण लक्ष्य रखें। इस लक्ष्य तक पहुँचने के लिए वे समानता एवं पारस्परिक सम्मान के आधार पर संबंध की स्थापना, सेवार्थी के साथ लोकतांत्रिक संबंध की स्थापना, जीवन शैली का मूल्यांकन एवं परिवर्तन, आरंभिक स्मृतियों का विश्लेषण तथा सेवार्थी के निजी तर्कों का परीक्षण आदि तकनीकों के उपयोग की सलाह देते हैं। इस दृष्टिकोण में प्रयुक्त तकनीकों का मुख्य आधार सेवार्थी को अन्य लोगों के साथ समानता के सम्बन्ध का अनुभव कराना तथा अपने व्यवहार तथा विश्वासों के विषय में अंतर्दृष्टि का विकास करना होता है।

3.2.4 व्यवहारात्मक दृष्टिकोण (Behavioural Approach): इस सिद्धांत से संबंध रखने वाले विद्वानों में पैवलव, स्किनर, जोसेफ वोल्पे, अल्बर्ट बंडूरा आदि हैं। व्यक्ति की सभी अनुक्रियाएं अर्जित होती है। अधिगम, पुरस्कार एवं दंड तथा प्रयत्न एवं त्रुटियाँ आदि इसकी प्रमुख अभिधारणाएं हैं। इन्ही सिद्धांतों एवं विचारों के आधार पर इस दृष्टिकोण का विकास हुआ है। व्यवहार परिमार्जन के क्षेत्र के साथ-साथ संज्ञानात्मक-व्यवहार दृष्टिकोण का भी विकास हुआ है। इसलिए इन दोनों को एक साथ सम्मिलित भी किया जाता है। इसी के आधार पर समकालीन प्रचलित संज्ञानात्मक-व्यवहार थेरेपी (Cognitive-Behavioural Therapy) का विकास हुआ है। लैंग (Laing, 1979) ने इस दृष्टिकोण के अंतर्गत समस्या की व्याख्या करते हुए त्रिआयामी दृष्टिकोण दिया है जिसे दुश्चक्र के रूप में विश्लेषित किया जाता है। इस दुश्चक्र में परिहार/पलायन, चिंता, परिस्थितियों की भयावहता का अनुभव शामिल है। अत: इस दृष्टिकोण का प्रमुख लक्ष्य इस दुश्चक्र को तोड़ना हैं। जिसके लिए छोटे-छोटे लक्ष्य; समायोजनात्मक अनुक्रियाओं के लिए सकारात्मक पुनर्बलन, कुसमायोजनात्मक अनुक्रियाओं के लिए नकारात्मक पुनर्बलन, सुरक्षित परिवेश में अवसर उपलब्धता तथा परिक्षण का अवसर, शिथिलीकरण संबंधी क्षमता का विकास आदि को शामिल किया जाता है। व्यवहार दृष्टिकोण मूलतः समायोजनात्मक समस्याओं पर ध्यान केन्द्रित करता है। इस कारण इसकी तकनीकों में प्रतिरूप अधिगम, विसंवेदिकरण, अनावृत्ति, अनुक्रिया परिहार, शिथिलीकरण, गृहकार्य, डायरी रखना आदि को शामिल किया जाता है।

3.2.5 संज्ञानात्मक दृष्टिकोण (Cognitive Approach): ऑरोन बेक (Aaron Beck, 1964) द्वारा किए गए चिंतन और विषाद के संबंधो के अध्ययन में उसने नकारात्मक संज्ञान त्रिपद की अभिकल्पना का विकास किया। बाद में यह देखा गया कि मानसिक समस्याओं में भी संज्ञानात्मक विकार प्रदर्शित हो सकता है, इसलिए इसके उपचार के लिए संज्ञान के स्तर पर हस्तक्षेप प्रणाली विकसित की गयी। आज कल के परामर्शदाता एवं थेरेपिस्ट इसका उपयोग CBT (Cognitive Behavioural Therapy) के रूप में करते हैं। संज्ञान से तात्पर्य है बाहरी परिवेश में शारीरिक इन्द्रियों द्वारा किसी घटना, वास्तु के बोध से हैं जिसमें व्यक्ति की व्याख्या, मूल्यांकन एवं निष्कर्ष भी शामिल होते हैं। उदाहरण के तौर पर बाहरी परिवेश में व्यक्ति को किसी घटना का प्रत्यक्षण आतंकित कर देने वाला हो तब व्यक्ति के दैहिक प्रक्रियाओं पर उसका असर पड़ता

है। जैसे- श्वसन गति तीव्र हो जाना आदि जिससे वह क्रोध, आक्रामकता तथा पलायन का व्यवहार करता है। ऐसे में व्यक्ति उस घटना का मूल्यांकन एवं व्याख्या कर स्वयं अपने व्यवहार में संशोधन कर सकता है। बेक ने तीन प्रकार के संज्ञान की चर्चा की है- सूचना संसाधन, स्वचालित विचार तथा स्कीमा। संज्ञानात्मक दृष्टिकोण व्यक्ति की समस्या की व्याख्या विकृत चिंतन प्रणाली के रूप में करता हैं। बेक ने विकृत सूचना संसाधन के तीन रूप बताए हैं- मनमाना निष्कर्ष, द्विभाजी चिंतन तथा वृद्धिकरण एवं अल्पीकरण। इसके उपचार हेतु यह दृष्टिकोण मानता है कि परामर्शदाता को सेवार्थी में समस्या की अवधारणा को विकसित करने का लक्ष्य निर्धारित किया जाना चाहिए। संज्ञानात्मक त्रुटियों को चुनौती देकर परिवर्तन का प्रयास करना, विकृत विचारों का परिमार्जन आदि लक्ष्य रखे जाते हैं। इसके लिए परामर्शदाता सक्रीय-निर्देशात्मक परामर्श पद्धति के अंतर्गत शिक्षक की भूमिका निभाता है। तथा दूसरी ओर अन्य विद्वानों ने इस दृष्टिकोण के अंतर्गत छः संज्ञानात्मक श्रेणियों एवं पांच व्यवहार तकनीकों को उपयोगी माना है। जो क्रमश: है- सोक्रेटिक क्वेश्चनिंग, लागत-लाभ विश्लेषण, सेवार्थी को स्वत: स्फूर्त विचारों, संवेग तथा व्यवहार के प्रभाव को समझने में मदद करना, वैकल्पिक परिप्रेक्ष्य का विकास, वास्तविकता परिक्षण, संज्ञानात्मक अभ्यास, क्रमिक अनावृत्ति, गतिविधियों का प्रबोधन, अतिविधियों की अनुसूची तैयार करना, व्यवहार परिक्षण, विश्रांति प्रविधियां शामिल है।

3.2.6 तार्किक संवेगात्मक व्यवहार चिकित्सा दृष्टिकोण (Rationale Emotive Behaviour Therapy): मनुष्य तार्किक प्राणी है वह अपने आरंभिक अनुभवों के आधार पर तार्किक चिंतन की विशिष्ट शैली का विकास करने में समर्थ है। ऐसी चिंतन शैली व्यक्ति के व्यवहार को भी प्रभावित करती है। इस अभिधारणा को आधार मानकर अलबर्ट इल्लिस (Albert Ellis, 193) ने तर्क, संवेग एवं व्यवहार के गठजोड़ से एक उपचार प्रणाली का विकास किया। इल्लिस का मानना है कि मानवीय समस्याएं व्यक्ति के अतार्किक विश्वास में निहित हैं। इसलिए इस दृष्टिकोण का मुख्य लक्ष्य संज्ञानात्मक, संवेगात्मक, व्यवहारात्मक परिवर्तन का उपयोग कर अतार्किक विश्वासों की जगह नए तार्किक विश्वासों का निवेशन करना है। इस कार्य के लिए शिक्षण, तर्क और विवेक, सुझाव, राजी करना, मुकाबला, सिद्धांत शिक्षण आदि तकनीकों को सेवार्थी के बेहतरी के लिए उपयोग में लाया जाता है।

3.2.7 व्यक्तिगत निर्मिति दृष्टिकोण (Personal Construct Approach): जार्ज केली(George Keley, 1955) के अनुसार अनुभूतियों में चिंतन और व्यवहार वैसे ही निहित होते हैं जैसे कि व्यवहार में अनुभूति एवं चिंतन शामिल होते हैं। इस प्रकार व्यक्तिगत अनुभव सदैव संपूर्णता को समेटे हुए देखे जा सकते हैं। व्यक्ति घटनाओं का जिस रूप में पूर्वनुमान करता है उसी प्रकार से उसकी मानसिक प्रक्रियाएं अपने मार्ग का चयन करती हैं। ऐसे में व्यक्ति की व्यक्तिगत निर्मितियां घटनाओं का भविष्य कथन करने में विफल होने से चिंता उत्पन्न होने लगती है। इसलिए केली ने व्यक्ति के निर्मितियों को पुनर्संरचित करने में तीन सहायक तकनीक बतायी हैं- स्व-चरित्र चित्रण, स्थिर भूमिका उपचार, भंडार ग्रीड तकनीक। इसके बावजूद इस दृष्टिकोण से जुड़े विद्वान गायड़ेनो (Guidano, 1987) आदि ने प्रक्रिया उन्मुख थेरेपी के रूप में महत्वपूर्ण योगदान दिया हैं।

3.2.8 व्यक्ति केन्द्रित दृष्टिकोण (Person Centred Approach): इस दृष्टिकोण को Client-Centred Therapy के रूप में भी जाना जाता है। मानवतावाद पर आधारित इस दृष्टिकोण के प्रतिपादक

कार्ल रोजर्स (Carl Rogers, 1951) हैं। इस दृष्टिकोण में व्यक्ति के स्व को महत्वपूर्ण स्थान प्राप्त हैं। रोजर्स का मानना था कि अनुभव कर रहे प्राणी का आत्मीकरण, अनुरक्षण, और उन्नयन करने की एकमात्र मूलप्रवृत्ति और तत्परता व्यक्ति में होती हैं। इसलिए आत्मनिर्देशन की क्षमता के विकास से व्यक्ति समस्या से निजात पाने में समर्थ हो सकता हैं। रोजर्स मानवतावादी दृष्टिकोण से समस्या की व्याख्या करते हुए लिखते हैं कि व्यक्ति को बाह्य समाज द्वारा अप्रतिबंधित सम्मान प्राप्त नहीं होता है जिससे उसमें विसंगति निर्माण होती हैं। विसंगति की अधिकता होने पर व्यक्ति की सुरक्षा प्रणाली आत्म-संप्रत्यय को पराजित होने से बचा नहीं पाती जिसके कारण व्यक्ति का व्यवहार विध्वंसक, विघटित, अव्यवस्थित हो जाता है। इसके उपचार हेतु रोजर्स ने तीन मूल दशाओं की चर्चा की है जिसे परामर्शदाता को परामर्श के समय में ध्यान रखना होगा; अप्रतिबंधित सकारात्मक सम्मान, परानुभूतिपूर्ण समझ और इन दो मूल दशाओं (अप्रतिबंधित सकारात्मक सम्मान, परानुभुतिपूर्ण समझ) का सेवार्थी तक उचित संप्रेषण शामिल हैं। इसके बावजूद रोजर्स उचित परिवेश निर्माण की सलाह भी देते हैं। उचित परिवेश का सेवार्थी पर काफी गहरा असर पड़ता है। अत: उक्त तीन मूल दशाओं को बनाए रखने से सेवार्थी की संगति की पुनर्स्थापना संभव है।

3.2.9 अस्तित्ववादी दृष्टिकोण (Existential Approach): यह दृष्टिकोण विभिन्न विचारकों के विचार-दर्शन पर आधारित है जिसमें से प्रमुख है- ज्यां पॉल सार्त्र एवं अलबर्ट कामू आदि अस्तित्ववादी दार्शनिक तथा विक्टर फ्रैंकल, आर. डी. लैंग आदि शामिल है। अस्तित्ववादी उपचार या परामर्श की कोई पद्धति नहीं है बल्कि इसके दार्शनिक-चिंतन के आधार पर परामर्श कार्य में अस्तित्ववादी चिंतन परामर्शदाताओं को विभिन्न तरह से सहयोग देता है। इम्मी वान ड्यूसेन (2000) का मानना है कि अस्तित्ववादी दृष्टिकोण व्यक्ति को जीवन की उलझन भरी जटिलताओं के साथ सामंजस्य स्थापित करने में सहयोग प्रदान करता है। वे मानते हैं कि समस्या मानवीय जीवन का अविभाज्य अंग है। इससे संघर्ष की स्थिति में व्यक्ति के जीवन में सृजन, रोमांच का अविर्भाव होता है। किन्तु कुछ लोग जीवन को सरल बनाने के लिए अनुचित मार्ग का चयन कर लेते है। यही से विभिन्न समस्याएं, चिंता, वास्तविकता से विमुख होना आदि समस्याएं उत्पन्न होती हैं। ऐसे में अस्तित्ववादी दृष्टिकोण व्यक्ति को समस्त विरोधाभासी वास्तविकताओं सहित अनुभवों को स्वीकार करने हेतु सक्षम बनाने का लक्ष्य रखता है। इसके सफलता के लिए परामर्श प्रक्रिया में परामर्शदाता परामर्शी को सम्मान, संरक्षण और बोध के साथ स्वीकार करते हुए उसकी अभिवृत्तियों में खुलापन या निष्कपटता विकसित करने के लिए उसे प्रोत्साहित करता है। सेवार्थी के अन्तर्निहित विश्वासों, मूल्यों, आदि को बाहर लाने की कोशिश तथा अन्वेषण का कार्य भी इसमें किया जाता है। यह दृष्टिकोण परामर्शदाता को सेवार्थी के साथ और सेवार्थी के लिए होने का आग्रह रखता है।

3.2.10 गेस्टाल्ट दृष्टिकोण (Gestalt Approach): काफ्का, कोहलर, कर्ट लेविन आदि के सिद्धांत-विचारों को गेस्टाल्ट दृष्टिकोण की आधार शिला माना जाता है। व्यक्ति के व्यवहार को टुकड़ों में बांटकर न देखते हुए उसे संपूर्णता अर्थात समस्त व्यवहार, विचार, अनुभूति और अनुक्रिया के योग के फल के रूप में देखा जाना चाहिए। एक स्वस्थ व्यक्ति में प्राणीगत आत्म नियंत्रण का विकास पाया जाता है। आवश्यकताओं के आधार पर गठन और विघटन या संपर्क और प्रत्याहार का चक्र नियमित चलता रहता है। इस चक्र में व्यवधान उत्पन्न हो जाता है तब व्यक्ति शुरूआत में सृजनात्मक रूप से आने वाले संकटों के साथ समायोजन स्थापना का प्रयास करता है। इस प्रक्रिया में अनियंत्रण के कारण विभिन्न समस्याएं उत्पन्न हो जाती है। ऐसे में

गेस्टाल्ट दृष्टिकोण व्यक्ति की आत्म-नियंत्रण की गेस्टाल्ट प्रक्रिया के पुन:अन्वेषण की बात करता है। परामर्श द्वारा व्यक्ति के अपूर्ण कार्य की पूर्ति का लक्ष्य रखा जाता है। इसके साथ ही इन परिवर्तनों के लक्ष्य प्राप्ति के लिए गेस्टाल्ट दृष्टिकोण परामर्शदाता को निम्नलिखित तकनीकों के उपयोग की सलाह देता हैं- शारीरिक बोध पर ध्यान देना, भाषा पर ध्यान देना, ध्रुवों का अन्वेषण, मनो-नाटक कार्य, निर्देशात्मक बोध प्रयोग आदि।

3.3 अन्य दृष्टिकोण

उक्त महत्वपूर्ण दृष्टिकोणों के अलावे आज कल परामर्श में विभिन्न दृष्टिकोण प्रचलन में हैं। विचारधारात्मक स्तर, नए आयाम एवं हस्तक्षेप निति आदि के विशेषता के रूप में इन नए दृष्टिकोणों का विकास हुआ है। वे निम्नलिखित हैं-

- वृत्तांत दृष्टिकोण (Narrative Approach)
- संव्यवहार विश्लेषण (Transactional Analysis)
- क्लाइन का मनोगत्यात्मक दृष्टिकोण (Klein's Psychodynamics Approach)
- संव्यवहार विश्लेषण (Transactional Analysis)
- आदि-प्रभाव उपचार (Primal Therapy)

साथ ही राय एवं अस्थाना(2015) द्वारा प्रचलित दृष्टिकोणों को दो रूपों में वर्गीकृत किया है, जो निम्नलिखित है-

विविध-दर्शन ग्राही-समन्वयवादी दृष्टिकोण(Eclectic Integrative Approach):

- संज्ञानात्मक विश्लेषणात्मक उपचार
- बहुआयामी उपचार
- दक्ष प्रतिरूप सहयोगी मॉडल
- परा-सैद्धांतिक दृष्टिकोण

ज्ञान शांति मैत्री

तथा परामर्श के विशिष्ट दृष्टिकोण (Special Approach of counseling):

- परामर्श में समूह दृष्टिकोण (Group Approach in Counseling)
- निर्देशात्मक पद्धति (Directive Method)
- नारीवादी प्रतिमान (Feminist Paradigm)
- परिवार एवं सर्वांगी प्रतिमान (Family and Systemic Paradigm)
- परा-वैयक्तिक परिप्रेक्ष्य (Trans-personal Perspective)

3.4 परामर्श प्रक्रिया में उपयोगी तकनीक

परामर्शन के विद्वानों द्वारा परामर्श प्रक्रिया में उपयोगी हस्तक्षेप की प्रमुख तकनीकों को पांच वर्गों में बाँट कर देखा जाता है। वे निम्नलिखित हैं-

परिवर्तन संबंधी कारक	हस्तक्षेप की तकनीक

व्यवहार	• व्यवहार परिमार्जन, अभ्यास, पुनर्बलन (Behaviour Modification, Rehaesal, Reinforcement) • व्यवहार सुघटन (Behaviour Shaping) • विसंवेदीकरण (Desensitization) • अनावरण (Exposure) • अनुक्रिया परिहार (Response Prevention) • शिथिलीकरण (Relaxation) • गृहकार्य (Homework) • डायरी तैयार करना (Preparing Diary) • दृढ़ग्राहिता प्रशिक्षण (Assertiveness Training) • तनाव प्रतिरोध प्रशिक्षण (Stress Inoculation Training)
भावनाएं/अनुभूतियाँ	• परानुभूति के स्टार की अभिव्यक्ति और संप्रेषण • भावनात्मक अभिव्यक्ति (Catharsis) • रिक्त स्थान कार्य (Empty Chair work)
बिंब रूपक	• रूपकों का उपयोग (Use of Metaphors) • संवेगिक बिंब (Emotive Imagery) • स्वप्न कार्य (Dream Work)
संज्ञान	• संज्ञानात्मक पुनर्संगठन (Cognitive Restructuring) • नए परिप्रेक्ष्य का विकास (Development of New Perspectives) • विगत-वर्तमान संबंध की रचना (Making Past and Present Connections) • सकारात्मक गुण अन्वेषण (Positive Asset Search) • लक्ष्य का निर्धारण (Setting the Goal) • शक्ति-क्षेत्र विश्लेषण (Force Field Analysis) • निर्णय-लेना (Decision-Making)
अंतर्वैयक्तिक कारक	• संबंधों में स्थानान्तरण • भावनाओं में स्थानान्तरण

ज्ञान शांति मैत्री

3.5 सारांश

जैसे कि हमने देखा परामर्श प्रक्रिया में सेवार्थी को सहयोग तथा उसकी समस्या को समझने के लिए विभिन्न दृष्टिकोणों द्वारा भिन्न-भिन्न तकनीकों के उपयोग के विकल्प उपलब्ध हैं। किन्तु आज कल बदली हुई जीवन शैली के कारण समस्याओं का स्वरूप जटिल बनता जा रहा है। जिसके परिणामस्वरूप परामर्शदाता को सेवार्थी की समस्या की समझ तथा उसके व्यक्तित्व को समझने में काफी तकलीफों को झेलना पड़ रहा हैं। ऐसे में कुछ परामर्शदाताओं ने विभिन्न दृष्टिकोणों एवं सिद्धांतों को एक साथ मिलाकर एकीकृत दृष्टिकोण अपनाना शुरू किया हैं। दूसरी ओर हम देखते हैं कि जिस तरह से मनोविज्ञान में जिन सिद्धांतों के हवाले ये दृष्टिकोण तैयार हुए थे उनमें से कुछ किशोरावस्था या युवावस्था तक के विकास को समझने में मदद करते हैं। ऐसे में वयस्कावस्था तथा वृद्धावस्था की समस्याओं को समझने के लिए कोई दृष्टिकोण परामर्शदाता के पास उपलब्ध नहीं हैं तब ज्ञान की संरचना को नए सिरे से समझने के लिए नए सिद्धांतों का निर्माण आवश्यक बन गया है। जैसे कि वयस्कावस्था तथा वृद्धावस्था के विकास को समझने के लिए आज हमारे पास लाइफ-स्पैन डेवलपमेंट (life-span Development) का दृष्टिकोण उपलब्ध हैं। इसलिए परामर्शदाता को अद्यतन ज्ञान के संपर्क में रहना बहुत जरूरी होता है। केवल इन तकनीकों से ही नहीं बल्कि ऐसे कुछ संगठन हैं जिन्होंने वैकल्पिक तकनीकों के निर्माण किया हैं जिसमें अमेरिकन एसोशिएशन ऑफ़ काउंसेलिंग महत्वपूर्ण हैं।

साथ ही इस बात को भी ध्यान रखना होगा कि यह दृष्टिकोण एवं तकनीक सभी सामाजिक-सांस्कृतिक परिप्रेक्ष्य में उपयोगी हो ही ऐसा भी नहीं हैं। भारतीय परिदृश्य में परामर्शदाता यह मानते हैं कि जुंगीयन परामर्श तकनीकों का उपयोग यहाँ काफी कारगर हैं। वैसे ही हिन्दू, बौद्ध, जैन आदि धर्मो के दर्शन द्वारा प्राप्त तकनीकों का उपयोग भी यहाँ पर कारगर माना जाता है।

3.6 बोध प्रश्न

1. परामर्श में दृष्टिकोण के महत्व पर प्रकाश डालते हुए मनोविश्लेषणात्मक दृष्टिकोण की चर्चा करें।
2. व्यवहारवादी दृष्टिकोण को समझाएं।
3. व्यक्ति केन्द्रित दृष्टिकोण की चर्चा करते हुए उसमें उपयोगी तकनीक पर प्रकाश डाले।
4. परामर्श प्रक्रिया में अस्तित्ववादी दृष्टिकोण की चर्चा करें।
5. परामर्श प्रक्रिया जिन कारकों में परिवर्तन की मांग होती है उन्हें संक्षेप में समझाएं।
6. व्यक्ति में परिवर्तन के प्रमुख तकनीकों को चिन्हित करें।

3.7 संदर्भ एवं उपयोगी ग्रन्थ

राय, ए., & अस्थाना,ए म. (2015). *निर्देशन एवं परामर्श* (2nd पुनर्मुद्रण ed.). दिल्ली: मोतीलाल बनारसीदास.

Rogers, C. R. (1931). *Client Centered Therapy*. Boston: Houghton Miffin Co.

ज्ञान शांति मैत्री

इकाई : 04 समाज कार्य में परामर्श अभ्यास

इकाई की रूपरेखा

4.0 उद्देश्य
4.1 प्रस्तावना
4.2 समाज कार्य में परामर्श अभ्यास की आवश्यकता
4.3 सामाजिक वैयक्तिक सेवा कार्य में परामर्श अभ्यास
4.4 समूह परामर्श
  4.4.1 स्त्रोत
  4.4.2 अवस्थाएं
4.5 समाज कार्य के प्रमुख क्षेत्रों में परामर्श अभ्यास
4.6 अन्य क्षेत्र
4.7 सारांश
4.8 बोध प्रश्न
4.9 सन्दर्भ एवं उपयोगी ग्रन्थ

4.0 उद्देश्य

इस इकाई के अध्ययन के बाद आप -

- समाज कार्य में परामर्श की आवश्यकता को समझ सकेंगे।
- समकाज कार्य के विभिन्न कार्यक्षेत्रों में परामर्श की पहचान कर सकेंगे।

ज्ञान शांति मैत्री

4.1 प्रस्तावना

19 वीं शताब्दी के शुरूआत में समाज कार्य अपनी एक ठोस आधार संरचना के साथ विषय के रूप में विकसित हुआ। समाज कार्य के उद्गम में ही इस मूल अवधारणा के बीज थे कि यह समुदाय के सहयोग के लिए कार्य करेगा। इसीलिए इसके उद्देश्यों में भी इसकी झलक दिखती है जैसे कि शुरूआती समय में समाज कार्य का मुख्य उद्देश्य सामाजिक पक्षपात से पीड़ितों का सशक्तिकरण तथा सहयोग रखा गया था। व्यक्ति की श्रेष्ठता तथा उनके सामाजिक समावेशन के मद्देनजर उनके जीवन में आने वाली मनोसामाजिक समस्याएं तथा उन समस्याओं को समझने के लिए आवश्यक दैहिक एवं चिकित्सकीय ज्ञान समाज कार्य द्वारा अपनाया गया है। इस ज्ञान को समाज उपयोगी बनाने के लिए समाज कार्य लगातार नवीन तकनीकों, पद्धतियों एवं दृष्टिकोणों से अपनी ज्ञान सरंचना को समृद्ध करता रहा है।

वस्तुत; देखा जाए तो समाज कार्य और परामर्श की उद्गम स्थिति एक समान है। ये दोनों विषय विभिन्न विषयों एवं व्यवसायों की ज्ञान संरचना पर आधारित है। ठीक वैसे ही इन दोनों विषयों में मनोविज्ञान और इससे संबंधित विषयों का बहुतायत में उपयोग किया जाता है। इसलिए इन दोनों का गहरा संबंध देखा जाता है।

दोनों ही स्वतन्त्र रूप से व्यवसाय होने के बावजूद एक-दूसरे के सहयोगी भी है। अत: इस बात को ध्यान में रखते हुए हम इस इकाई में समाज कार्य में परामर्श का अभ्यास या समाज कार्य अभ्यास में परामर्श को समझने की कोशिश करेंगे।

4.2 समाज कार्य में परामर्श अभ्यास की आवश्यकता

समाज कार्य की शुरूआत भले ही सामुदायिक सहयोग से हुई हो किन्तु धीरे-धीरे समस्याओं के निर्धारण में मुख्य रूप से व्यक्ति आता गया। अन्य विषयों तथा समाज कार्य अभ्यास के विद्वानों को यह समझने के लिए देर नहीं लगी कि समस्याओं की जड़ मूलतः व्यक्ति के तनावपूर्ण परिस्थितियों, तकलीफदेह अनुभवों में है जो भावनाएं, संबंध, बेरोजगारी, कार्यस्थिति, अकार्यक्षमता, भेदभाव, दुर्व्यवहार, आर्थिक समस्याएं, घरेलू हिंसा, गरीबी एवं सामाजिक बहिष्करण आदि से संबंधित होती हैं। ऐसे में जब समस्याओं की बहु-श्रेणियों के कारण समाज कार्य अभ्यास की कुछ सीमाएं आगे आने लगती है तब व्यावहारिकता के धरातल पर यह आवश्यक हो जाता है कि हम भी अपनी व्यावहारिक तकनीकी श्रेणी को नए सिरे से विकसित करे। इसमें मुख्यत: तीन बिन्दुओं की बात आती हैं-

तकनीकों एवं कुशलताओं की विभिन्नता (Variety);

ऐसी प्रविधि विकसित करना जिससे विभिन्नतापूर्ण तकनीकों एवं कुशलताओं का सामाजिक कार्यकर्ता तक हस्तांतरण हो सके तथा

विभिन्नतापूर्ण प्रतिवेशों (Settings); स्कूल, कॉलेज, परिवार, अस्पताल, कारागृह, सुरक्षा गृह, तथा प्रशिक्षण एवं सामुदायिक केन्द्रों में समाज कार्य को पहुंचाने के लिए कार्यप्रणाली (Procedure) का विकास करना (Patron, 1996)।

समाज कार्य अभ्यास ख़ास तौर से लाभार्थियों/सेवा उपयोगकर्ता की समस्याओं को सुलझाने पर अपना ध्यान केंद्रित करता है। चूँकि उन लाभार्थियों के सामाजिक, मानसिक, शारीरिक तथा सामाजिक दशा के सुधार और अनुरक्षण पर ही समाज कार्य हस्तक्षेप की प्रभाविता निर्भर है (Miller, 2005)। ज्यादातर लाभार्थी जो समाज कार्य द्वारा सहयोग प्राप्त करते हैं वे सामाजिक एवं आर्थिक रूप से पिछड़े हुए होते हैं और इस भेद्यता (Vulnerability) में सेवा प्रदाताओं के की प्रकृति और उनके साथ लाभार्थी के संबंध से बनी परिस्थितियां महत्वपूर्ण भागीदारी निभाती है (Miller, 2005)। ऐसे में समाज कार्य विभिन्न ज्ञानानुशासनों से बड़े पैमाने पर सूचनाएं तथा ज्ञान अर्जित कर उसे उपयोग योग्य बनाता है; पहले तो इस अर्जित ज्ञान और कुशलताओं का उपयोग समाज कार्य अपने अभ्यास को सशक्त बनाकर लाभार्थियों को जुटाता है और बाद में उनके अवांछित मनोदशाओं और व्यावहारिक अभिवृत्तियों या उनके सामाजिक अक्षमतापूर्ण प्रस्थिति में सकारात्मक परिवर्तन लाता है (Miller, 2005)।

परामर्श का स्वरूप समाज कार्य अभ्यास के प्रमुख तख्तियों (Planks) में से एक है साथ ही यह एक तरह से लाभार्थियों से सीधे जुड़ने का सरल मार्ग (Chief Mode) है; परामर्श ही लाभार्थियों के बीच समाज कार्य के क्रियाकलापों का जनवादी चेहरा एवं क्रिया के एकत्रित कार्यक्रम का निर्धारण करता है, साथ ही यह भी निर्धारित करने में मदद होती है कि कौन भेद्यातापूर्ण है और किसे सहयोग की जरुरत है, इन्हें एक परामर्शदाता कैसे प्रशिक्षित और शिक्षित करने में सहयोग दे सकता है। केवल परामर्श में ही ऐसी जगह मिलती है जहां

परामर्शदाता और लाभार्थी परामर्श क्रियाकलापों के माध्यम से आमने-सामने अंत:क्रिया में पहुँचते हैं। इससे आगे जाकर परामर्श की उचित योजनाओं द्वारा ही सीधे लाभार्थी पर प्रभाव पड़ता है। अब यह बात अलग है कि कुछ ख़ास स्थितियों में किस तरह के हस्तक्षेपीय दृष्टिकोण को अपनाना है और कौन से क्रियाकलाप करने है इसका निर्धारण लाभार्थीयों की प्रतिपुष्टि के आधार पर परामर्शदाता निर्धारित करता है।

4.3 सामाजिक वैयक्तिक सेवा कार्य में परामर्श अभ्यास

वस्तुत; देखा जाए तो समाज कार्य और परामर्श की उद्गम स्थिति एक समान है। ये दोनों विषय विभिन्न विषयों एवं व्यवसायों की ज्ञान संरचना पर आधारित है। ठीक वैसे ही इन दोनों विषयों में मनोविज्ञान और इससे संबंधित विषयों का बहुतायत में उपयोग किया जाता है। रौलैंड (Rowland, 1993) के अनुसार समाज कार्य और परामर्श मनोचिकित्सा एवं इससे संबंधित उपयोगी तकनीकों ख़ास कर साक्षात्कार में लोगों के निजी, सामाजिक, व्यावसायिक, चिकित्सकीय तथा शैक्षिक आयाम को छूते हुए इसके बीच के अंतर को पाटता है। पीस एंड फूक (Pease and Fook, 1999) के अनुसार, समाज कार्य के कुछ आलोचनात्मक सिद्धांतों (Principles) के साथ परामर्श का अच्छा संबंध बनता है, ख़ास कर मनुष्य का सम्मान तथा व्यक्ति के अन्तर्निहित मूल्यों की पहचान के सन्दर्भ में। साथ ही वे कहते हैं कि ऐसे कई पक्ष पाए जाते हैं जिनसे परामर्श और वैयक्तिक सेवा कार्य में उचित संबंध दिखाई देते हैं। आम तौर पर इन दोनों के घटक और प्रक्रियाएं अलग अलग दिखाई देती हैं बावजूद इसके वे एक-दूसरे के लिए सहयोगी है, ख़ास कर तब जब दोनों को ही किसी व्यक्ति को सेवा और सहयोग देनी हो। ऐसे में वैयक्तिक सेवा कार्यकर्ता इन दोनों की मदद से सेवार्थी के सहयोग क्रिया को बेहतरी से पूरा करता है। इससे से भी आगे जाकर उनका कहना है कि एक वैयक्तिक सेवा कार्यकर्ता में परामर्शदाता की भूमिका अन्तर्निहित होती हैं, जिसे सामाजिक कार्यकर्ता सेवार्थी की समस्या, व्यक्तित्व, व्यवहार के अनुसार अपने भूमिका में परिवर्तन कर लेता है। उदाहरण के लिए वैयक्तिक सेवा कार्य में रोजर्स की परामर्श संबंधी विशेष बाते (संगती, अप्रतिबंधित सकारात्मक सम्मान तथा परनुभुतिक समझ) उतनी ही महत्वपूर्ण है जितनी वैयक्तिक सेवा कार्य के लिए।

उक्त चर्चा से कुछ ख़ास बिंदु निकलकर सामने आते हैं जो वैयक्तिक समाज कार्य एवं परामर्श के बीच संबध स्थापना एवं समाज कार्य में परामर्श की उपयोगिता को दर्शाते हैं-

- परामर्श और वैयक्तिक सेवा कार्य दोनों ही सेवार्थी को सेवा एवं सहयोग देने में उपयोगी क्रियाकलाप शामिल करते हैं।
- वैयक्तिक सेवा कार्य और परामर्श में साक्षात्कार को महत्वपूर्ण तकनीक के रूप में मान्यता प्राप्त है।
- व्यक्तिगत मूल्यों एवं व्यक्ति के सम्मान तथा श्रेष्ठता के संबंध में परामर्श और वैयक्तिक सेवा कार्य में समानता दिखती है।
- परामर्श वैयक्तिक सेवा कार्य को आवश्यक परामर्शन का दृष्टिकोण प्रदान करता हैं तथा
- वैयक्तिक सेवा कार्यकर्ता में परामर्शदाता की भूमिका अन्तर्निहित होती हैं।

4.4 समूह परामर्श

समाज कार्य की प्राथमिक प्रणाली में से एक के रूप में समूह कार्य को देखा जाता है। दूसरी और परामर्श में विशिष्ट दृष्टिकोण के रूप में समूह कार्य को देखा जाता है। परामर्श से संबंध रखने वाले विद्वानों का मानना है कि द्वितीय विश्वयुद्ध के बाद दुनिया की परिस्थितियाँ काफी खराब हुई थी जिसमें व्यक्ति की विभिन्न एवं नवीन समस्याओं को सुलझाने के लिए सेवा प्रदाता, थेरेपिस्ट, सामाजिक कार्यकर्ता तथा परामर्शदाता की बड़ी मांग पैदा हुई। ऐसे में प्रत्येक व्यक्ति को अलग-अलग सेवा देने में समस्या प्रकट होने लगी जिसके निवारण के रूप में समूह परामर्श जैसी विधि का विकास हुआ जो काफी किफायती एवं बचतपूर्ण साबित हुई। दूसरी ओर समाज कार्य में समूह कार्य को प्रणाली बनने से पूर्व एक आंदोलन के रूप में देखा जाता था। समाज कार्य के इतिहास पर तीन बड़े चरणों पर ध्यान केन्द्रित करके समूह कार्य के विकास को समझा जा सकता है-

- 1930 के दशक में समूह कार्य एसोसिएशन की संरचना,
- 1950 के दशक में समूह कार्य एसोसिएशन का समाज कार्यकर्ताओं की राष्ट्रीय एसोसिएशन में विलय, और
- 1970 के दशक में समूह कार्य की पुन: उत्पत्ति।

अर्थात उद्विकास की अवधि के रूप में सामाजिक समूह कार्य और परामर्श में समूह कार्य का प्रारूप समकालीन ही दिखाई पड़ते हैं। इतना ही नहीं ये दोनों एक ही स्त्रोत, सामाजिक मनोविज्ञान के समूह गत्यात्मकता दृष्टिकोण के प्रभाव से आगे विकसित हो पाए हैं।

4.4.1 स्त्रोत

मूलतः फ्रेंच मनोवैज्ञानिक ली बॉन (Le Bon, 1910) ने सर्वप्रथम इसकी पहचान की कि समूह में लोग एक-दूसरे से भिन्न प्रतिक्रिया करते हैं वस्तुत: वे वैसे नहीं होते हैं। इसके कारणों की खोज के रूप में उसने समूह में होने वाली पारस्पारिक संपर्क शक्ति को महत्वपूर्ण माना जिसे वे 'समूह संसर्ग' तथा 'समूह विचार' के रूप में स्पष्ट करते हैं। बाद में इस विचार का प्रभाव फ्रायड की किताब Group Psychology and the Analysis of the Ego (1921) में दिखाई देता है जिसके आधार पर समूह गत्यात्मकता दृष्टिकोण का विकास हुआ। यह दृष्टिकोण जितना समूह कार्य के लिए उपयोगी है उतना ही समूह परामर्श के लिए भी महत्वपूर्ण है।

4.4.2 अवस्थाएं

परामर्श में समूह कार्य दृष्टिकोण के अंतर्गत परामर्शन हेतु कुछ अवस्थाएं बतायी गई है जो सामाजिक समूह कार्य से काफी मिलती जुलती है इन्हें हम निम्नलिखित रूप से देख सकते हैं-

- प्रत्येक सदस्य के लक्ष्य की पहचान
- समूह का गठन
- संचार संबंधों की स्थापना तथा वार्ता का आरंभ करना
- सदस्यों के मध्य संबंध का विकास
- स्थापित सदस्यों की सदस्यता का समापन एवं

- परामर्श की सफलता का मूल्यांकन।

ठीक इसी तरह से समाज कार्य में भी समूह कार्य के अंतर्गत सेवार्थी समूह की समस्या को सामूहिक संबधों द्वारा हल किया जाता है। जैसे-फॉर्मिंग (आकार देना), स्टोर्मिंग (हमला बोलना), नोर्मिंग (मानकीकृत करना), परफोर्मिंग (कार्य-निष्पादन) इन चार अवस्थाओं के साथ एक पांचवी अवस्था फॉलो अप (अनुवर्ती कार्य) को भी जोड़ा जाता है।

समूह में अन्य सदस्यों के साथ संबंध स्थापना के कारण व्यक्ति समस्या का स्वरूप, प्रकृति तथा उनसे निबटने की क्षमता जल्दी ग्रहण कर लेता है। इसके लिए विभिन्न कार्यक्रमों का आयोजन तथा भूमिका निर्वहन, मनोनाटक आदि तकनीकों का उपयोग किया जाता है।

4.5 समाज कार्य के प्रमुख क्षेत्रों में परामर्श अभ्यास

समाज कार्य का क्षेत्र बड़ा व्यापक है। चूँकि व्यक्ति की मनोसामाजिक समस्याओं का अध्ययन और उसमें सेवा सहायता इसकी विभिन्न प्रणालियों द्वारा की जाती है इसलिए नवीन क्षेत्र भी इसमें लगातार जुड़ते देखे जाते हैं। समाज कार्य से संबंधित विभिन्न क्षेत्र जिन्हें अब तक चिन्हित किया गया है वे निम्नलिखित है-

- महिला एवं बाल
- श्रमिक
- चिकित्सा
- मानसिक स्वास्थ्य
- वृद्ध
- युवा
- आपदा प्रबंधन तथा
- परिवार एवं युगल आदि

ज्ञान शांति मैत्री

इन सभी क्षेत्रों में इन भेद्यतापूर्ण समूहों को शिक्षित, जागरूक करने के लिए समकालीन समय में समूह परामर्श की सहायता ली जा रही है। स्कूलों, कॉलेज, हॉस्पिटल, कारखाने, मानसिक हॉस्पिटल, वृद्धाश्रम, छात्रावास, पारिवारिक न्यायालय आदि संस्थाओं में सामाजिक कार्यकर्ता के पद भरे जा रहे हैं। जिनमे परामर्श की क्षमता हो ऐसे लोगों द्वारा परामर्श प्रक्रिया के माध्यम से लोगों की समस्याओं को सुना-समझा एवं उचित सलाह मशविरा प्रदान किया जाता है।

4.6 अन्य क्षेत्र

भारत एक विशाल देश है जहां सबको सभी सुविधाएं पहुंचा पाने में स्वयं सरकार भी खुद को असमर्थ पाती है। ऐसे में एकीकृत रूप से परामर्श प्रक्रिया के माध्यम से ही उन लाभार्थी, सेवा उपभोगकर्ता तक पहुँचने का एकमात्र सस्ता रास्ता दिखाई देता है। परामर्शदाता की भूमिका को स्वीकार कर सामाजिक कार्यकर्ता विभिन्न प्रणालियों के अंतर्गत सेवार्थियों को उचित, नियोजित सहायता प्रदान कर सकता है। समाज कार्य के अपने

ख़ास क्षेत्र-विषयों के अलावे कुछ अन्य क्षेत्रों में भी परामर्श प्रक्रिया द्वारा उचित सहयोग प्रदान किया जा सकता है। ऐसा देखा गया है कि व्यक्ति अपनी अपूर्ण इच्छाओं के कारण दबाव, तनाव, कुंठा, द्वंद्व आदि रोजमर्रा की समस्याओं को हल करने में आई असफलता के कारण बड़ी समस्या का शिकार हो जाता है। ऐसे में अगर व्यक्ति की इन रोजमर्रा की समस्याओं को यहीं छोटे स्तर पर हल किया जाए तो कम समय और बचतपूर्ण ढंग से सामाजिक कार्यकर्ताओं द्वारा सेवार्थियों की समस्या को हल किया जा सकता है। इस सन्दर्भ रोजमर्रा की कुछ महत्वपूर्ण समस्याएं जिनकी और परामर्शदाता को अपना ध्यान आकर्षित करना होगा वे निम्नलिखित हैं-

- मानसिक समस्या- दबाव, आघात, चिंता तथा गंभीर मानसिक समस्याएं
- स्कूल में बच्चों की समायोजन की समस्याएं
- कॉलेज में कैरियर संबंधी समस्याएं
- पारिवारिक जीवन में समायोजन संबंधी समस्याएं
- वैवाहिक सामंजस्य
- कार्यरत जगहों की समस्याएं तथा
- वैयक्तिक, सांस्कृतिक तथा संरचनात्मक भेदभाव, असमानता एवं पूर्वाग्रह (Thomson,2001 PCS model)

इन क्षेत्रों के साथ-साथ थाम्सन (Thomson,2001) का विचार था कि भेदभाव, असमानता एवं पूर्वाग्रह को समाप्त करना सामाजिक कार्यकर्ता का लक्ष्य होना चाहिए। उनके अनुसार भेदभाव, असमानता एवं पूर्वाग्रह तीन स्तरों पर निर्मित होता है- वैयक्तिक, सांस्कृतिक तथा संरचनात्मक। और यह प्रत्येक व्यक्ति में दूसरों के प्रति समान रूप से देखा जाता है। जैसे समूह के बाहरी लोग, रंगभेद, जातिभेद, धार्मिक एवं भाषाई आधार पर यह असमानता, भेदभाव और पूर्वाग्रह निर्माण होते रहते हैं। कभी कभार अन्य के लिए तैयार वैयक्तिक मत सांस्कृतिक धरातल पर पहुँचने से पूर्वाग्रह में तब्दील हो जाता है। इसी से शोषक एवं शोषित की श्रृंखला विकसित हो जाती है। इस श्रृंखला को तोड़ने का कार्य परामर्श प्रक्रिया द्वारा सामाजिक कार्य बेहतरी से कर सकता है।

4.7 सारांश

परामर्श एक जटिल और मांगपरक प्रक्रिया है। यह प्रक्रिया उचित ज्ञान और कौशल प्राप्त लोगों की मांग रखती है। परानुभुतिक समझ तथा व्यक्ति एवं उसकी समस्या की समझ आदि इससे अछूते नहीं हैं। किन्तु यह सारे क्रियाकलाप एक तरह से समाज कार्य के एकत्रित घटक है जो सामाजिक कुशल (Social Good) के लिए आवश्यक हैं। इसमें परामर्श सिद्धांत पिछले आधे दशक के बाद शामिल हुए हैं; जिनके विभिन्न उद्गमस्थान है, इसके कारण इसके स्वरूप में जटिलता देखी जाती है किन्तु इसके बावजूद समाज कार्य और परामर्श में काफी समानताएं भी है जिन्हें बस सेवार्थी की आवश्यकता अनुसार स्वीकार करने की देर हैं। हालांकि इन सिद्धांतों को अंगीकृत करना एवं व्यवहार में लाना आसान कार्य नहीं है। इसके लिए यह आवश्यक है कि उन सिद्धांतों को उन्नत ढंग से समझकर व्यवहार योग्य बनाना जिससे परामर्श कार्य प्रभावपूर्ण बने। इसकी पूरी जिम्मेदारी

उस परामर्शदाता की होगी कि वो अपनी योग्यता, क्षमता और अपनी प्रकृति के आधार पर सेवार्थी को मूल्योचित संबंध स्थापित कर उसपर गहरा प्रभाव डाले।

भारतीय संदर्भ में देखे तो समाज कार्य और परामर्श का उद्गम एक ही दशक में माना जाता है। 1936 में समाज कार्य और 1938-40 के आस-पास परामर्श की विधिवत स्थापना भारत में हुई। कुछ ख़ास क्षेत्रों जैसे शिक्षा, व्यवसाय आदि को छोड़कर दोनों का ही विकास मनोवांछित ढंग से नहीं हो पाया। ग्रामीण क्षेत्रों से ज्यादा शहरी ख़ास तौर पर महानगरों तक ये दोनों विधाएं सीमित दिखाई देती है। किन्तु परामर्श भारतीयता को ग्रहन करने के पश्चात काफी लोकप्रिय विधा साबित हो रही है। योग, मेडिटेशन तथा अन्य भारतीय तकनीकों में भारतीय विश्वास को नए से प्राप्त कर लिया है। अध्ययन बताते हैं कि मानसिक समस्याओं को कम करने में योग एवं मेडिटेशन काफी महत्वपूर्ण भूमिका निभाते हैं। ऐसे में इन तकनीकों को समझकर समाज कार्य को परामर्श की कुशलताओं को आत्मसात कर आगे बढना आवश्यक है।

4.8 बोध प्रश्न

समाज कार्य में परामर्श की आवश्यकता पर प्रकाश डाले।

वैयक्तिक समाज कार्य में परामर्श अभ्यास को समझाएं।

समूह परामर्श की विवेचना करें।

समाज कार्य के प्रमुख क्षेत्रों में परामर्श अभ्यास के महत्व को समझाएं।

4.9 संदर्भ एवं अन्य उपयोगी ग्रन्थ

Miller, L. (2005). *Counselling Skills for Social Work.* Lomdon: Sage Publication.

Patron, N. (1996). *Social Theory, Social Chnage and Social Work.* (N. Patron, Ed.) London: Routledge.

Pease, B. & Fook, J. (1999). *Transforming Social Work Practice: Postmodern Critical Perspectives.* London: Routledge.

Thompson, N. (2001) *Anti-Discriminatory Practice*. Third Edition, London: Palgrave.

Dryden, W. (2006). *Counselling in a nutshell*. London: Sage Publications Ltd.

Dryden, W. & Mytton, J. (1999). *Four Approaches to Counselling and Psychotherapy*. London: Routledge.

Feltham, C. (1995). *What Is Counselling? The Promise and Problem of the Talking Therapies*. London: Sage Publications Ltd.

Rowland, N, 1993, Chapter 3 What is Counselling? In Counselling in General Practice, Corney, R. & Jenkins, R. (Eds.) (pp. 17-30) London: Routledge.

राय, ए., & अस्थाना,ए म. (2015). *निर्देशन एवं परामर्श* (2nd पुनर्मुद्रण ed.). दिल्ली: मोतीलाल बनारसीदास.

https://www.ukessays.com/essays/socialwork/counsellinginsocialwork.php

ज्ञान शांति मैत्री

खंड – 2

परामर्श प्रक्रिया

ज्ञान शांति मैत्री

इकाई-1 वैयक्तिक परामर्श

इकाई की रूपरेखा

1.0 उद्देश्य
1.1 प्रस्तावना
1.2 व्यक्तिगत परामर्श
1.3 वैयक्तिक परामर्श की मान्यताएँ
1.4 वैयक्तिक परामर्श कार्य अभ्यास के सिद्धांत
1.5 वैयक्तिक परामर्श कार्य में कार्यकर्ता-सेवार्थी संबंध
1.6 वैयक्तिक परामर्श के अवयव
1.7 सारांश
.18 बोध प्रश्न
.19 संदर्भ एवं उपयोगी ग्रंथ

1.0 उद्देश्य

इस इकाई के अध्ययन के पश्चात आप -

1. व्यक्तिगत परामर्श की अवधारणा को समझ सकेंगे
2. व्यक्तिगत परामर्श की प्रक्रिया से संबंधित ज्ञान प्राप्त कर सकेंगे
3. समाज कार्य में वैयक्तिक परामर्श के महत्त्व को प्रतिपादित कर सकेंगे

1.1 प्रस्तावना

मानवीय समाज ने अपने विकास क्रम में जीवन निर्वाह के लिए परिवार, समूह, समुदाय आदि संरचनाओं का निर्माण किया था। बदलते समाज में इन निर्मित संस्थाओं का स्वरूप भी बदलता गया। सभ्यता-संस्कृति जैसे भारी-भरकम शब्दों के साथ-साथ फैशन जैसे नई दुनियावी शब्द जुड़ने लगे।आधुनिक समय में व्यक्तिवादिता के सूत्रपात ने व्यक्ति-व्यक्ति के बीच सीमारेखा खींचने का काम किया और उत्तर-आधुनिक समाज में तो व्यक्तिगत समस्याओं का स्वरूप और भी जटिल होता गया।यहाँ सारी संरचनाएँ ढह-सी गई हैं और जीवन शैलीगत नई समस्याओं का उभार इससे होने लगा है। वैश्वीकरण में आर्थिक स्वतंत्रता के बावजूद सीमित समझ की समस्या के कारण छोटी-छोटी चीजों के लिए व्यक्ति को किसी और (सेवा प्रदाता संस्था, संगठन, या कोई अथॉरिटी आदि) पर निर्भर होना पड़ रहा है। इन सबके बावजूद परिवार या युगल के रूप में रहते समय या कार्य की जगह पर व्यक्ति को अन्य के साथ सामंजस्य बनाए रखने के लिए काफी जद्दोजहद करनी रही पड़ती है। इस तरह से जब समस्याओं का स्वरूप बदल रहा है, ऐसे में समाज कार्य को अपनी सेवा प्रणाली में परामर्श को अनिवार्य रूप से जगह देने की मांग भी जोर पकड़ने लगी। द्वितीय विश्वयुद्ध के पश्चात इसका आविर्भाव संपूर्ण विश्व में देखा जा सकता है।

आधुनिकता ने मानवीय समाज को 'व्यक्तिवादिता' में इतना गहरा उलझा दिया है कि मनुष्य खुद को 'अन्य' से अलग-थलग महसूस कर रहा है। 'सामूहिक जीवन' को तिलांजलि देकर जिस तरह से मनुष्य ने वैयक्तिक जीवन को चुना है,उससे समस्याओं में काफी बढ़ोतरी हुई है। मनुष्य के इस चुनाव ने मानवीय समस्याओं में आमूल परिवर्तन किया है। इस परिवर्तन को विभिन्न ज्ञान शाखाओं ने अलग से समझने एवं उसके निवारण के लिए काफी सराहनीय कार्य किया है, जिसमें मनोविज्ञान, समाजशास्त्र एवं समाज कार्य आदि अग्रणी शाखाएं हैं। व्यक्ति, व्यक्तित्व, व्यक्तिगत इच्छा और आकांक्षाएं आदि के समन्वय तथा असमायोजन की समस्या के समाधान के लिए परामर्श का उद्भव हुआ है।समस्या की प्रकृति के आधार पर परामर्श को विभिन्न प्रकारों में बाँटा जाता है जैसे कि व्यक्तिगत समस्याओं के लिए व्यक्तिगत परामर्श, युगल एवं परिवार से संबंधित समस्याओं के लिए युगल एवं पारिवारिक परामर्श आदि। इस इकाई में हम व्यक्तिगत परामर्श को समझेंगे।

1.2 व्यक्तिगत परामर्श

व्यक्तिगत परामर्श का संबंध सीधे व्यक्तिगत समस्याओं से होता है। इसलिए व्यक्ति के जीवन में आनेवाली विभिन्न मनो-सामाजिक समस्याओं को हल करने का कार्य व्यक्तिगत परमर्श के माध्यम से किया जाता है।समाज कार्य में परामर्शन की शुरुआत करने का श्रेय बर्था रेनोल्ड्स (1932) को जाता है।

वैयक्तिक परामर्श की कुछ विद्वानों द्वारा दी गयी परिभाषाएँ:

मेरी रिचमण्ड (1915) ने वैयक्तिक परामर्श को विभिन्न व्यक्तियों के साथ सहयोग करते हुए उनकी अपनी तथा समाज की एक साथ भलाई करने हेतु उनके साथ विभिन्न प्रकार के कार्यों को करने की कला रूप में परिभाषित किया है। लेकिन बाद में 1922 में इसमें कुछ परिवर्तन करते हुए कहा कि यह ऐसी प्रक्रिया से है जो व्यक्तियों एवं उनके सामाजिक पर्यावरण के बीच एक चेतन रूप से लाये गए समायोजन के माध्यम से व्यक्तित्व का विकास करती है।

टेफ्ट (1922) ने वैयक्तिक परामर्श को परिभाषित करते हुए कहा है कि व्यक्ति के व्यवहार, व्यक्तित्व और सामाजिक सम्बन्धों को समझने तथा एक अधिक अच्छे सामाजिक एवं वैयक्तिक समायोजन लाने में उसकी सहायता करने के प्रयास युक्त कुसमायोजन व्यक्ति का सामाजिक सम्बन्धों को समझने तथा एक अधिक अच्छे सामाजिक एवं वैयक्तिक समायोजन लाने में उसकी सहायता करने के प्रयास युक्त कुसमायोजित व्यक्ति का सामाजिक उपचार है।

स्वीथन बोवर्स (1949) के अनुसार वैयक्तिक परामर्श ऐसी कला है जिसके अंतर्गत मानव संबंधों में ज्ञान तथा संबंध की निपुणता का प्रयोग व्यक्ति की उपयुक्त क्षमताओं तथा समुदाय के संसाधनों की सेवार्थी तथा उसके संपूर्ण पर्यावरण के समस्त अंगों अथवा किसी अंग के बीच अधिक अच्छे समायोजन के लिए गतिशील बनाने हेतु किया जाता है।

देसाई (1956) वैयक्तिक परामर्श व्यक्ति की न केवल यथास्थिति के साथ समायोजन करने बल्कि परिवर्तन तथा नए-नए स्तरों पर अपने परिवर्तित होते हुए पर्यावरण के साथ समायोजन करने की प्रक्रिया में सक्रिय भागीदार बनने में सहायता प्रदान करने की प्रक्रिया है।

उक्त विद्वानों की परिभाषाओं के विश्लेषण के आधार पर कहा जा सकता है कि वैयक्तिक परामर्श की परिभाषा के मूल तत्व निम्नलिखित हैं:

अ) वैयक्तिक परामर्श एक पद्धति है।

आ) वैज्ञानिक ज्ञान एवं कौशल से युक्त प्रशिक्षित समाज कार्यकर्ता द्वारा इसे प्रयोग में लाया जाता है।

इ) इस पद्धति का प्रयोग एक प्रक्रिया के रूप में निजी एवं सार्वजनिक अभिकरणों द्वारा किया जाता है।

ई) इसके माध्यम से समाज में असमायोजित एवं समस्याग्रस्त लोगों की इस प्रकार सहायता की जाती है कि वे बेहतर सामाजिक समायोजन के साथ व्यक्तिगत रूप से संतोषप्रद एवं अपेक्षित श्रेष्ठ जीवन को प्राप्त कर सकें तथा समाज की उन्नत रचना में सक्रिय भागीदारी प्रदान कर सकें।

1.3 वैयक्तिक परामर्श की मान्यताएँ

वैयक्तिक सेवाकार्य के विभिन्न अंग है जिन्हें विद्वानों ने अपने-अपने मत के अनुसार परिभाषित किया है। बालेश्वर पाण्डेय (2017) ने अपनी किताब 'परामर्श के नए आयाम' में हैमिल्टन (Hamilton) और हॉलिस (Hollis) के मौलिक मान्यताओं की चर्चा कि है जो निम्नलिखित है:

हैमिल्टन के अनुसार

अ) व्यक्ति एवं समाज अन्योनाश्रित होते हैं।

आ) सामाजिक शक्तियाँ व्यवहार एवं मनोवृत्तियों को प्रभावित करती हैं और जिस संसार में हम रहते हैं, उसके प्रति अपना योगदान देने तथा आत्म विकास के लिए अवसर प्रदान करती हैं।

इ) सम्पूर्ण समस्याएँ न केवल मनौवैज्ञानिक, आंतरिक व बाह्य होती है लेकिन अधिकतम वैयक्तिक परामर्श की समस्याएँ अंतर-वैयक्तिक होती हैं, यानि व्यक्ति के उपचार में एक से अधिक व्यक्तियों के शामिल किए जाने की संभावना होती है, इसलिए वैयक्तिक परामर्श में परिवार इकाई विशेष रूप से शामिल होती है।

ई) अपनी समस्या को हल करने के लिए सेवार्थी प्रत्येक स्तर पर एक जिम्मेदार सहभागी होता है।

उ) उपचार के लक्ष्यों हेतु वैयक्तिक परामर्श प्रक्रिया का केंद्र कार्यकर्ता सेवार्थी संबंध का सचेतन एवं नियंत्रित प्रयोग होता है।

हॉलिस के अनुसार

अ) वैयक्तिक परामर्श मानव व्यक्तित्व,सामाजिक मूल्यों व लक्ष्यों के प्रति कुछ मौलिक मान्यताओं पर आधारित है।

आ) सर्वप्रथम वैयक्तिक परामर्श मानव मूल्य,व्यक्ति की अद्वितीय विशेषता (Uniqueness)तथा अपनी संतुष्टि के अनुसार विकास एवं समायोजन करने की कुशलता पर आधारित है।

इ) वैयक्तिक परामर्श की यह धारणा है कि सामाजिक संरचना का लक्ष्य व्यक्ति को उत्तम जीवनयापन के योग्य बनाना है। राज्य की रचना व्यक्ति के कल्याण के लिए की जाती है। व्यक्ति और समाज का हित एक-दूसरे के पूरक एवं अन्योन्याश्रित है।अतः व्यक्ति के कल्याण में ही पूरे समाज का कल्याण निहित

है। व्यक्ति,वैयक्तिक एवं सामूहिक स्तर पर एक-दूसरे के कल्याण के लिए जिम्मेदार होते हैंऔर इसके साथ ही साथ अपने उद्देश्यों भी प्राप्ति कर सकते हैं।

1.4 वैयक्तिक परामर्श कार्य अभ्यास के सिद्धांत

वैयक्तिक परामर्श कार्य अभ्यास में प्रयुक्त किए जाने वाले सिद्धांतों की सूची बनाना कठिन कार्य लगता है क्योंकि इस संबंध में विद्वानों में मतभेद है। बालेश्वर पाण्डेय ने अपनी किताब 'परामर्श के नए आयाम' में वैयक्तिक परामर्श के सिद्धांतों का वर्णन किया है जो निम्नलिखित है:

स्वीकृति का सिद्धांत

सेवार्थी संकटग्रस्त, कमजोर होता है और कार्यकर्ता व्यावसायिक ज्ञान, अनुभव, योग्यता से परिपूर्ण होता है। दोनों जब सर्वप्रथम मिलते हैं तब उन दोनों के मध्य सहानुभूति का सामना करने का स्वरूप, उसकी अहम शक्ति की स्थिति आदि का ज्ञान कार्यकर्ता में विद्यमान होता है। इसी ज्ञान के परिप्रेक्ष्य में वह सेवार्थी को एक व्यक्ति के रूप में आदर-सम्मान प्रदान करता है। इसी ज्ञान व आदर-सम्मान के व्यवहार से ही वह सेवार्थी के व्यवहार एवं तत्संबंधी कारणों को समझकर उसके प्रति एक अनिर्णयात्मक दृष्टिकोण बनाता है। कार्यकर्ता सेवार्थी में रुचि लेकर तथा उसकी दशा के बारे में चिंतित होकर कारणों की जानकारी एवं उनमें परिवर्तनीय सुधार करने का प्रयास करता है। कठिनाइयों से जूझ रहे सेवार्थी को जिस भी स्थिति में होता है, उसे कार्यकर्ता एक व्यक्ति के रूप में वैसे ही स्वीकार कर लेता है। कार्यकर्ता सेवार्थी की भावनाओं एवं मनोवृत्तियों का अध्ययन करता है जिसके आधार पर वह सेवार्थी को समझने का प्रयत्न करता है। सेवार्थी को कार्यकर्ता द्वारा स्वीकार कर लिए जाने पर वह अपनी आत्मरक्षण प्रवृत्तियों को छोड़ देता है और अपनी बातें सहजता से बता देता है क्योंकि उसे यह विश्वास हो जाता है कि उसे वर्तमान स्थितियों सहित कार्यकर्ता ने स्वीकार कर लिया है।

ज्ञान शांति मैत्री

संचार का सिद्धांत

समस्या समाधान की प्रक्रिया के अंतर्गत कार्यकर्ता और सेवार्थी के बीच अंतःक्रियाएं होती हैं। यद्यपि इसके पूर्व दोनों एक-दूसरे से अनजाने होते हैं और सेवार्थी में कुछ संकोच बना होता है लेकिन प्रारम्भ में कार्यकर्ता सेवार्थी के व्यक्तित्व, समस्या व परिस्थितियों का गहन अध्ययन कर उसके साथ घनिष्ठ व विश्वसनीय संबंध स्थापित कर विशिष्ट संकेतों, चिन्हों, भाषा व हाव-भाव का प्रयोग करते हुए समझाता है। दोनों के बीच किसी विषय पर सहमति-असहमति हो सकती है, लेकिन धीरे-धीरे उनमें एक समझ बननी आवश्यक है। उन्हें एक-दूसरे की भूमिका की पूर्ण जानकारी होनी चाहिए। अतः कार्यकर्ता और सेवार्थी के बीच अंतःक्रिया संचार द्वारा होती है तथा भावनाओं व तथ्यों का आदान-प्रदान सम्यक ढंग से होता है। सही जानकारी पाने हेतु कार्यकर्ता उसकी समुचित सहायता करता है। संस्था कैसे उसकी सहायता कर सकती है और इसके एवज में संस्था सेवार्थी से क्या उम्मीद रखती है, इसका स्पष्टीकरण कार्यकर्ता द्वारा किया जाता है। सेवार्थी के अंदर सही ढंग से भावनाओं का आदान-प्रदान न हो पाने की दशा में कार्यकर्ता कुछ बातों को दृष्टिगत रखते हुए संचार के सिद्धांत का पालन करता है।

वैयक्तिकरण का सिद्धांत

इस सिद्धांत के अंतर्गत परामर्शदाता यह स्वीकार करता है कि यद्यपि प्रत्येक व्यक्ति में कुछ ऐसी विशेषताएँ होती हैं जो दूसरे से मिलती है तथापि हर व्यक्ति की कुछ ऐसी विशेषताएँ भी होती हैं जो दूसरों में नहीं पायी जाती है। इस आधार पर हर व्यक्ति दूसरे से अलग किया जा सकता है अर्थात प्रत्येक व्यक्ति अपने व्यक्तिगत विशेषताओं के आधार पर एक-दूसरे से भिन्न रहता है। वैयक्तिकरण का सिद्धांत इन्हीं भिन्नताओं को समझने पर ज़ोर देता है। प्रत्येक व्यक्ति की समस्याएँ होती हैं लेकिन एक व्यक्ति की समस्या से दूसरे की समस्या में भिन्नता दिखाई देती है। समस्या एक सी ही क्यों न हो लेकिन उनके कारणों में भिन्नता दृष्टिगोचर होती है। साथ ही एक ही समस्या का प्रभाव अलग-अलग व्यक्तियों पर उनके वैयक्तिक गुण-दोष के आधार पर भिन्न-भिन्न रूपों में दिखाई दे सकती है। इसके अतिरिक्त समस्या के समाधान भी भिन्न होते हैं।

सहभागिता का सिद्धांत

समस्या समाधान की प्रक्रिया के प्रयास में सेवार्थी की प्रत्येक स्थान पर सक्रिय भागीदारी होनी चाहिए, यही इस सिद्धांत की मूल भावना है। कार्यकर्ता इस सिद्धांत का अनुसरण करते हुए सेवार्थी के लिए ऐसा अवसर प्रदान करता है कि वह अपनी यथार्थ स्थिति को स्पष्ट करते हुए समस्या के निदान में सहभाग करे, इससे सेवार्थी की आत्म शक्ति में वृद्धि हो सकती है। अतः समस्या समाधान प्रक्रिया के अंतर्गत सेवार्थी कार्यकर्ता संबंधों की परिधि में कार्यकर्ता सेवार्थी की सक्रिय भागीदारी करने का प्रयत्न करता है।

आत्म-चेतना का सिद्धांत

सेवार्थी की तरह कार्यकर्ता भी जटिल संप्रेरणाओं से युक्त एक मानव प्राणी होता है। उसके अंदर सांस्कृतिक विश्वासों एवं मूल्यों की छाप होती है। कार्यकर्ता के संवेग एवं मनोवृत्तियाँ एवं साक्षात्कार की अवधि में विभिन्न सेवार्थियों के संबंधों को प्रभावित कर सकती हैं, इसलिए आत्म-चेतना के सिद्धांत के अनुसार कार्यकर्ता की व्यक्तिगत भावनाएँ, मनोवृत्तियाँ एवं संप्रेरणाएँ कार्यकर्ता-सेवार्थी संबंधों में दखल न दें, ऐसी कार्यकर्ता से अपेक्षा रहती है। कार्यकर्ता- सेवार्थी संबंधों में कार्यकर्ता की व्यक्तिगत जीवन संबंधी प्रवृत्तियों, झुकावों, अवेगों व भावनाओं का कोई स्थान नहीं होना चाहिए। आत्म-चेतना के सिद्धांत से तात्पर्य है कि सेवार्थी कार्यकर्ता संबंधों में कार्यकर्ता को अपनी सकारात्मक व नकारात्मक व्यक्तिगत भावनाओं का निरीक्षण कर उन्हें नियंत्रित रखना चाहिए। कार्यकर्ता से अपेक्षा की जाती है कि वह अपने प्रशिक्षण के दौरान ही व्यावसायिक व्यक्तित्व में यह निपुणता लाए। अतः कार्यकर्ता को सेवार्थी के साथ अपने संबंधों का उपयोग उसकी अहम शक्ति के विकास हेतु करने का प्रयत्न करना चाहिए।

गोपनीयता का सिद्धांत

वैयक्तिक परामर्श कार्य का यह प्रमुख सिद्धांत है जिसके अंतर्गत कार्यकर्ता सेवार्थी के साथ घनिष्ठ संबंध स्थापित कर उसे यह विश्वास दिलाता है कि संस्था की नीति के अनुरूप साक्षात्कार के माध्यम से मिली सूचनाएँ एवं तथ्य गुप्त रखे जाएंगे। विश्वास अर्जित करने के बाद ही सेवार्थी अपनी समस्याओं के समाधान के लिए कार्यकर्ता को स्वीकार कर उससे अपनी आंतरिक मनोभावों एवं संकटपूर्ण स्थिति का

रहस्योद्घाटन कर सहभाग करता है। सेवार्थी द्वारा दी गयी सूचनाएँ आवश्यक सहायता हेतु अभिकरण के अंदर व बाहर मात्र व्यावसायिक संबंधों की सीमा रखी जाती है। सेवार्थी के वृत्ति-अभिलेख (caserecord) गुप्त रखे जाते है, अभिकरण के अंदर या बाहर अन्य व्यावसायिक कार्यकर्ता को कोई सूचना सेवार्थी की अनुमति से ही दी जाती है। गोपनीयता के सिद्धांत की मौलिक अनिवार्यता यह है कि इन सूचनाओं के दुरुपयोग से सेवार्थी को पूर्ण वैज्ञानिक सुरक्षा प्रदान की जाती है। इस प्रकार जिम्मेदारीपूर्वक सेवार्थी की मनोसामाजिक परिस्थितियों का आंकलन कर तत्पश्चात अभिकरण की नीतियों के अनुसार उसका समाधान ढूंढ़ा जाना चाहिए।

सेवार्थी की मनोदशा के अनुसार कार्यारम्भ का सिद्धांत

शुरूआत में कार्यकर्ता सेवार्थी के लिए अनजान रहता है। ऐसी परिस्थिति में यदि सेवार्थी की मनोदशा के अनुरूप ही कार्यकर्ता वार्तालाप करना शुरू करता है तो सहज रूप से सेवार्थी कार्यकर्ता की तरफ आकर्षित हो जाता है। तदनुरूप रुचि का प्रदर्शन करता है। इस तरह धीरे-धीरे संबंध बनने लगते है, जिससे सेवार्थी कार्यकर्ता से भावनात्मक निकटता व विश्वास की अनुभूति करता है, फलस्वरूप कार्यकर्ता सहायता हेतु योजना बनाना शुरू कर देता है। कभी-कभी प्रारंभ में सेवार्थी की मनोदशा की जानकारी नहीं होती है तो कार्यकर्ता सेवार्थी को अपनी बात कहने के लिए प्रोत्साहित करता है और फिर उस आधार पर सेवार्थी की मानसिक दशा एवं क्षमता की जानकारी प्राप्त कर अनुकूल वातावरण में कार्य करता है।

सहायता कार्य के दौरान आवश्यक साधनों के उपयोग का सिद्धांत

परामर्श की प्रक्रिया के अंतर्गत कार्यकर्ता से यह अपेक्षा की जाती कि अभिकरण व समुदाय में उपलब्ध विभिन्न साधनों की विधिवत जानकारी उसे अवश्य होनी चाहिए और आवश्यकतानुसार सेवार्थी की क्षमता वृद्धि हेतु उनका सही उपयोग होना चाहिए। इसके अतिरिक्त और बातें ध्यान देने योग्य है कि कार्यकर्ता साधनों के प्रयोग के समय सदैव सेवार्थी को उन साधनों का ज्ञान कराते रहें तथा सेवार्थी को स्वयं के द्वारा साधनों के प्राप्ति हेतु प्रोत्साहित करे। लेकिन सेवार्थी साधनों के चयन में असफल होता है तो ऐसी परिस्थिति में कार्यकर्ता अपने स्वयं के प्रयासों द्वारा सेवार्थी के लिए आवश्यक साधनों की उपलब्धि करा देता है और इस प्रकर सफलता हासिल हो जाती है।

सहकार का सिद्धांत

यह सिद्धांत प्रजातंत्र व स्वावलंबन की भावना से ओतप्रोत है। कार्यकर्ता हमेशा इस दृढ़ विश्वास से कार्य करता है कि वह उसके साथ (with) कार्य कर रहा है न कि उसके लिए (for) कार्य कर रहा है (एहसान नहीं)। इससे सेवार्थी में परावलम्बन की भावना कम हो जाती है और आगे भविष्य में वह अपने स्वयं करने सक्षम हो जाता है व सफलता प्राप्त करता है। इस प्रकार समस्या समाधान प्रक्रिया के अंतर्गत योजना बनाने व उसे क्रियान्वित करने में सेवार्थी का सक्रिय सहभाग मिलता है। ऐसी व्यवस्था में कार्यकर्ता का विशेष ध्यान रहता है।

संबंध स्थापन का सिद्धांत

ज्ञान शांति मैत्री

वैयक्तिक परामर्श प्रक्रिया में कार्यकर्ता एवं सेवार्थी के मध्य संबंध का अति महत्वपूर्ण स्थान होता है। प्रो. राजाराम शास्त्री के अनुसार सेवार्थी के साथ स्थापित संबंध ही एक ऐसा उपकरण होता है जिसके माध्यम से कार्यकर्ता-सेवार्थी के उपचार की योजना के कार्यान्वयन में लगता है। कार्यकर्ता सेवार्थी की समस्या एवं उसके आंतरिक एवं बाहर के वातावरण से संबंधित जानकारी समुचित संबंध स्थापन के उपरांत ही प्राप्त कर सकता है। साथ ही विषयगत एवं वस्तुगत दोनों तरह की भावनाएँ संबंध स्थापन में समाहित होती है। कौशल से कार्यकर्ता अपने 'स्व' का सचेतन उपयोग कर अपनी भावनाओं के प्रति सदैव सचेत रहता है। साथ ही वास्तविक व स्थानांतरित भावनाओं को भी सदैव ध्यान में रखकर उनका समुचित नियंत्रण और उपयोग करता है। कार्यकर्ता का दिमाग संबंधों के व्यावसायिक पक्ष की तरफ भी केन्द्रित होता है। इसमें संबंध व्यावसायिक किसी विशिष्ट लक्ष्य प्राप्ति से स्थापित होते है। इन संबंधों के बीच कार्यकर्ता की व्यक्तिगत बातें गौण हो जाती हैं। इस तरह के संबंध में परस्पर-जिम्मेदारी, परस्पर एक-दूसरे की मान्यता और मतभेदों की स्वीकृति शामिल होती है। ताकि कार्यकर्ता सेवार्थी को आदर-सम्मान देता है, इसलिए सेवार्थी महसूस करता है कि उसकी भावनाओं को स्वीकृति प्रदान की गयी है और इसके साथ ही सेवार्थी के अन्तर्मन में कार्यकर्ता के प्रति एक विश्वास की भावना भी जाग्रत होती है, फलस्वरूप सेवार्थी अपनी कठिनाइयों को स्पष्ट रूप से कार्यकर्ता को व्यक्त कर देता है और कार्यकर्ता की सलाह को भी स्वीकार करने लगता है।

विभेदक सिद्धांत

फ्रिडलैंडर (friedlander) ने स्वीकृति, संचार, वैयक्तिकरण, सहभागिता, आत्मचेतना एवं गोपनीयता के सामान्य सिद्धांतों के अतिरिक्त सामाजिक वैयक्तिक परामर्श के विभेदक सिद्धांतों का भी उल्लेख करते हुए यह स्पष्ट है कि विभिन्न परिस्थितियों में उपचार की अलग-अलग विधियाँ होती है। कुछ परिस्थितियाँ में उपचार की कुछ विशिष्ट विधियाँ हैं तो इसके प्रतिकूल कुछ अन्य परिस्थितियों में उपचार की विशिष्ट विधियाँ होती हैं। कार्यकर्ता सेवार्थी के संबंध में उसकी समस्या का अध्ययन व निदान करके उसकी समस्या के निराकरण की विधियों को निर्धारित करता है जो अन्य दूसरे किसी सेवार्थी के संबंध में उपयुक्त भी नहीं हो सकती है। अतः यह कहा जा सकता है कि एक सेवार्थी की अपेक्षा दूसरे सेवार्थी हेतु उपचार की विधियाँ अलग होती है। सेवार्थियों में भिन्नता के कारण विभेदक सिद्धांतों का प्रयोग किया जाता है। उपचार योजना चयन में सहायता पहुंचाने के साथ-साथ उपचार-प्रक्रिया के दौरान इसमें जरूरी बदलाव लाने में यह विभेदक सिद्धांत सहायक सिद्ध होता है।

1.5 व्यक्तिगत परामर्श प्रक्रिया

परामर्श प्रक्रिया अभीष्ट लक्ष्यों (व्यक्ति के मानसिक स्वास्थ्य, आत्म निर्णय और आत्मसिद्धि की क्षमता में वृद्धि आदि) की दिशा में आरंम्भ से अंत तक एक सूत्र में बंधी होती है। प्रक्रिया का अर्थ यह है कि कई घटनाएँ एक श्रृंखला में एक निश्चित अवधि में घटित होती है। यह अवधि तीस या चालीस मिनट का सत्र हो सकती है या कई माह की अवधि में अनेक सत्रों में फैली हो सकती है। व्यक्तिगत परामर्श प्रक्रिया अभीष्ट लक्ष्यों की प्राप्ति के मार्ग में कुछ मध्यवर्ती लक्ष्यों को प्राप्त करने का प्रयत्न करती है। प्रक्रिया लक्ष्यों का स्वरूप आरंभिक लक्ष्य को अर्जित किए बिना अगले लक्ष्य को अर्जित नहीं किया जा सकता है इसलिए परामर्श की

प्रक्रिया को कुछ सुनिश्चित चरण एवं अवस्थाओं के माध्यम से सुनिश्चित क्रम में अग्रसर होना चाहिए। साधारणतया व्यक्तिगत परामर्श प्रक्रिया के आठ चरण बताए जाते है:

1) सेवार्थी के साथ समय सत्र का निर्धारण
2) पूर्व-परामर्श सत्र
3) परामर्श संबंध का विकास
4) परामर्श के विशिष्ट लक्ष्यों की पहचान
5) लक्ष्य सिद्धि के लिए कार्य योजना का विकास और क्रियान्वयन
6) परामर्श संबंधों का समापन
7) परामर्श के परिणामों का मूल्याकंन और
8) अनुवर्ती कार्य।

परामर्श के चरण को बहुधा पाँच अवस्थाओं की संरचना में विभाजित किया जाता है: तैयारी अवस्था; आरंभिक अवस्था; मध्यवर्ती अवस्था; सत्रांत अवस्था; अनुवर्तन अवस्था। परामर्श प्रक्रिया के चरण एवं अवस्था के बारे में 'परामर्श एवं थेरेपी' इकाई में विस्तार से चर्चा की है। व्यक्तिगत परामर्श प्रक्रिया में चरण एवं अवस्था के संरचना द्वारा लक्ष्य की प्राप्ति करते हुए व्यक्ति के समायोजन में निर्माण समस्या का निदान कर सहायता की जाती है।

1.6 वैयक्तिक परामर्श कार्य में कार्यकर्ता-सेवार्थी संबंध

वैयक्तिक परामर्श एक ऐसी प्रक्रिया है जो वैज्ञानिक ज्ञान और मानव संबंधों की निपुणता पर आधारित है। परामर्श कार्य अभ्यास में व्यावसायिक संबंध की एक महत्वपूर्ण भूमिका होती है। कार्यकर्ता सेवार्थी के साथ उद्देश्यपूर्ण व्यावसायिक संबंध की स्थापना करता है। समस्त संबंधों के विज्ञान और कला पर ही वैयक्तिक परामर्श कार्य, सामूहिक परामर्श और सामुदायिक परामर्श आधारित होते हैं। कार्यकर्ता और सेवार्थी अभिकरण के साधनों तथा अन्य सामुदायिक साधनों से प्रभावित होते हैं। वैयक्तिक परामर्श के अभ्यास के दौरान सेवार्थी की सहायता करने के लिए कार्यकर्ता- सेवार्थी संबंध व्यावसायिक होता है तथा यह मैत्री संबंध स्थापन की दृष्टि से ही नहीं स्थापित किया जाता, बल्कि व्यावसायिक लक्ष्य की प्राप्ति के लिए और आत्मीयता स्थापित करने के लिए बनाया जाता है ताकि सेवार्थी की समस्या के समाधान सफलतापूर्ण हो सके। इसके लिए हमें सेवार्थी के साथ संबंध स्थापित करने के लिए किन-किन बारीकियों को ध्यान में रखना आवश्यक होता है वे निम्नलिखित हैं-

कार्यकर्ता-सेवार्थी संबंध के सिद्धांत

समस्या समाधान की प्रक्रिया में कार्यकर्ता-सेवार्थी संबंध की महत्वपूर्ण भूमिका होती है।इस संपूर्ण प्रक्रिया में समस्याग्रस्त/सेवार्थी के सहयोग की अपेक्षा तभी की जा सकती है जब कार्यकर्ता-सेवार्थी संबंध अति घनिष्ठ हों। वैयक्तिक परामर्श प्रक्रिया में कार्यकर्ता-सेवार्थी के संबंधों पर बीस्टेक द्वारा दी गए सिद्धांत निम्नवत हैं:

व्यक्तीकरण का सिद्धांत

सेवार्थी जब कार्यकर्ता के पास समस्या समाधान के लिए आता है तो वह समाज का एक सदस्य एवं व्यक्ति होता है। समाज में नए-नए परिवर्तन होते रहते हैं,इसमें व्यक्ति को समायोजन में बाधाएँ निर्माण होती है,जिसमें उसकी समस्याएँ विशिष्ट एवं व्यक्तिगत होती हैं,जिसे अच्छी तरह समझकर सहायता प्रदान करने के लिए लाभार्थी का अलग-अलग सामाजिक परिस्थितियों में व्यक्तीकरण करना आवश्यक हो जाता है। व्यक्तीकरण अर्थात समस्याग्रस्त व्यक्ति के विशेष गुणों की क्रमबद्ध तरीके से जानकारी जुटाना,उसकी समस्याओं का मनोसामाजिक अध्ययन व निदान कर उपचार हेतु वैयक्तिक परामर्श के सिद्धांतों,प्रक्रियाओं व प्रविधियों का उपयोग करके उसकी समस्या का समाधान कर सहायता करना, ताकि वह अपनी सामाजिक परिस्थितियों व पर्यावरण के साथ उच्चतम सामंजस्य कर सके।

लक्ष्यपूर्ण अभिव्यक्ति का सिद्धांत

वैयक्तिक परामर्श कार्य में कार्यकर्ता द्वारा सेवार्थी को अपनी भावनाओं की अभिव्यक्ति का संपूर्ण अवसर एवं स्वतंत्रता प्रदान कीजाती है। सेवार्थी की भावनाएँ चाहे नकारात्मक या सकारात्मक हो दोनों तरह की भावनाओं को व्यक्त करने से कार्यकर्ता न रोकता है न ही उसकी निंदा करता है। बल्कि सेवार्थी के समस्त बातों को ध्यानपूर्वक सुनता है। उसकी भावनाओं की अभिव्यक्ति करने में सहायता प्रदान करता है,ताकि इन भावनाओं के उद्देश्यपूर्ण अभिव्यक्तिकरण से लाभार्थी के उपचार में महत्वपूर्ण सहायता मिलती है। अतः भावनाओं का उद्देश्यपूर्ण प्रकटन सार्थक होता है।

नियंत्रित संवेगात्मक संबंध का सिद्धांत

कार्यकर्ता द्वारा यह प्रयास किया जाता है कि लाभार्थी जिन भावनाओं को अभिव्यक्ति करता है उसको ग्रहण करके व्यावसायिक लक्ष्यों के अनुरूप ही उनका प्रत्युत्तर दे। इस सिद्धांत के अनुपालन में कार्यकर्ता सेवार्थी की भावनाओं के प्रति जो भावना प्रकट करता है वह पूर्णतः नियंत्रित होनी चाहिए। ताकि सेवार्थी को लगे कार्यकर्ता उसके बातों पर ध्यानपूर्वक सुन रहा है। कार्यकर्ता-सेवार्थी संबंध नियंत्रित संवेगों के घेरे में व्यावसायिक लक्ष्यों की पूर्ति हेतु ही बने होने चाहिए।

स्वीकृति का सिद्धांत

सेवार्थी जैसा है या जिस भी प्रकार की परिस्थिति में है उसे उसी रूप में स्वीकार करके उसकी वर्तमान दशा के अनुरूप उसके साथ व्यवहार किया जाना चाहिए। सेवार्थी वर्तमान परिस्थितियों को सम्मुख रखकर ही उसके प्रति मत बनाया जाए। सेवार्थी की योग्यता,क्षमता,शक्तियों अथवा कमजोरियों एवं विघटनकारी मनोवृत्तियों एवं व्यवहार को ध्यान में रखकर कार्यकर्ता को अपने व्यवहार का निर्धारण करना चाहिए। सेवार्थी के वैयक्तिक मूल्यों से भी कार्यकर्ता का व्यवहार प्रभावित होना चाहिए। कार्यकर्ता सेवार्थी को बिना पक्षपात व अपने संवेगों,भावनाओं,विश्वासों,मूल्यों व पूर्वाग्रहों का समावेश किए यथार्थ रूप में उसी प्रकार स्वीकार करता है और स्वीकृति समस्या-समाधान हेतु आवश्यक होती है।

अनिर्णयात्मक मनोवृत्ति का सिद्धांत

वैयक्तिक परामर्श प्रक्रिया के दौरान कार्यकर्ता की मनोवृत्तियाँ सेवार्थी के गुण-दोष के संबंध में अनिर्णयात्मक होनी चाहिए। उसे सेवार्थी के किसी व्यवहार की न तो निंदा करनी चाहिए और न ही उसके गुण-दोष के संबंध में कोई निर्णय भी लेना चाहिए। कार्यकर्ता अपने ज्ञान एवं अनुभव के सहायता से लाभार्थी की मनोवृत्ति, क्रियाकलापों व व्यवहारों आदि का वस्तुनिष्ठ रूप से मूल्याकंन करता है। इस मूल्याकन में समाज के मूल्यों, परम्पराओं, आदर्शों व विश्वासों आदि का भी ख्याल रखा जाता है। इस मूल्याकंन का आधार नैतिक न होकर उसका ज्ञान, निपुणता व अनुभव होता है।

सेवार्थी के आत्म-निर्देशन का सिद्धांत

सेवार्थी को अपनी समस्या के बारे में और निदान में सहभागी की तरह शामिल होने एवं अपनी रुचि के अनुसार संबंधित समस्या के समाधान का पूर्ण अधिकार होता है। आत्म-निर्देशन सिद्धांत के अंतर्गत यह पूर्ण अधिकार है कि सेवार्थी कि समस्या का जिस भी प्रकार समाधान किया जाए, समस्या के समाधान में जिन साधनों का उपयोग किया जाए तथा सेवार्थी व उसके समस्या के संबंध में जो भी निर्णय लिया जाए वह सेवार्थी का स्वयं निर्णय होना चाहिए। समस्या समाधान की प्रक्रिया में लाभार्थी को अपनी अहम सहमति के विकास का मौका प्रदान किया जाना चाहिए ताकि वह अपने जीवन संबंधित निर्णय लेने में समर्थ हो सके। सेवार्थी के लिए इसका महत्त्व सर्वाधिक है।

गोपनीयता का सिद्धांत

वैयक्तिक परामर्श प्रक्रिया में सेवार्थी की सहायता के दौरान कार्यकर्ता को यह आवश्यक है कि सेवार्थी के संबंध में जो भी महत्वपूर्ण सूचनाएँ एवं तथ्य ज्ञात है उन्हें पूर्णतः गोपनीय रखना चाहिए ताकि कार्यकर्ता- सेवार्थी के बीच विश्वासपूर्ण संबंधों का विकास हो और संबंधों का समस्या के अध्ययन, निदान और उपचार में सफलतापूर्वक प्रयोग किया जा सके। सेवार्थी अपने व्यक्तिगत जीवन से संबंधित रहस्यों, निजी बातों एवं संवेगात्मक भावनाओं को सहज रूप से व्यक्त करता है इसलिए कार्यकर्ता का नैतिक एवं व्यावसायिक कर्तव्य बनता है कि वह सेवार्थी संबंधी सभी सूचनाएँ गुप्त रखे। साथ ही सेवार्थी को यह विश्वास भी हो कि उससे संबंधित सभी सूचनाएँ गोपनीय रखी जाएंगी। इस तरह से गोपनीयता का विश्वास होने पर सेवार्थी निःसंकोच अपनी समस्या की तह में जाकर सभी पक्षों को उजागर करता है।

1.7 वैयक्तिक परामर्श के अवयव

वैयक्तिक परामर्श के चार प्रमुख अवयव है। जो निम्नलिखित है:

1) व्यक्ति
2) समस्या
3) स्थान
4) प्रक्रिया

1) **व्यक्ति (Person):** व्यक्ति से अभिप्राय उस सामान्य व्यक्ति से है जो सामाजिक मूल्यों, मान्यताओं,आदर्शों व परम्पराओं आदि के अनुरूप समांजस्य स्थापित कर अपनी प्रस्थिति एवं भूमिका के समुचित निर्वहन का प्रयत्न करता हो, जिसमें उसके स्वयं के एवं पूरे समाज के विकास व कल्याण की अभिरुचि विद्यमान हो। यदि ऐसी संभावना दिखे कि व्यक्ति में ऐसी अभिरुचि का अभाव हो तो इस दशा में व्यक्ति के संबंध में समूह के दूसरे सदस्यों से जानकरी प्राप्त की जा सकती है। कभी-कभी किसी व्यक्ति के समाज विरोधी कार्यों व व्यवहारों की स्थिति में भी इसे सहायतार्थ स्वीकार कर समाज की मुख्य धारा से जोड़कर उसे उपयोगी सदस्य बनाने का प्रयास किया जा सकता है।
2) **समस्या (Problem):** व्यक्ति के जीवन में कुछ ऐसी बाधाएँ एवं अवरोध उत्पन्न हो जाते हैं जिनके कारण उसकी कार्य करने की शक्ति प्रभावित हो जाती है। वह ऐसे किसी कार्य को करने में असमर्थ हो जाता है जिससे उसके तनावों व दबावों में कमी आ सके, ऐसी परिस्थिति में व्यक्ति समस्या से ग्रस्त कहा जाता है। ऐसे समस्याग्रस्त व्यक्ति की समस्याओं के समाधान हेतु किसी बाह्य सहायता की आवश्यकता पड़ती है जो संस्था/अभिकरण के माध्यम से प्रदान की जाती है।
3) **स्थान (Place):** वैयक्तिक परामर्श कार्य की प्रक्रिया सम्पन्न करने के लिए किसी स्थान विशेष की आवश्यकता होती है जहां पर प्रशिक्षित कार्यकर्ता एक विशिष्ट प्रक्रिया द्वारा एक अवधि में एक समस्याग्रस्त का समाधान कर सहायता प्रदान करता है। सामान्य रूप से इस कार्य की संपन्नता के लिए कुछ आवश्यक उपकरण, विशेषज्ञों की सेवाएँ, कुछ भौतिक वस्तुएँ या रूपए पैसे आदि का प्रबंध भी इसी स्थान पर अपेक्षित होता है। इस तरह के स्थान को संस्था/अभिकरण कहते है। पर्लमैन के मतानुसार फॉर पी (4Ps) का तीसरा तत्व अभिकरण/संस्था है। संस्था वह स्थान है जहां व्यावसायिक कार्यकर्ता समस्याग्रस्त व्यक्ति की पक्षपात के बिना सहायता प्रदान करता है ताकि समस्याग्रस्त व्यक्ति अपनी समस्या का समाधान करके समाज में समायोजित होकर अपना व समाज का कल्याण कर सके। वैयक्तिक परामर्श प्रक्रिया में उन्हीं अभिकरणों को शामिल किया जा सकता है जो मानव हित व कल्याण की लक्ष्यपूर्ति हेतु स्थापित होते हैं तथा समस्या समाधान में सहायक होते है।
4) **प्रक्रिया (Process):** प्रक्रिया से तात्पर्य उन क्रमागत क्रियाओं से है जिसके द्वारा समस्या के समाधान हेतु वैज्ञानिक आधार पर व्यावसायिक विधियों एवं प्रविधियों का सदैव प्रयोग किया जाता है। जिसमें कार्यकर्ता और सेवार्थी के बीच उचित संचार होता है। कार्यकर्ता सेवार्थी से लक्ष्यपूर्ण संबंध स्थापित कर व्यक्ति की समस्याओं का अध्ययन एवं निदान करता है, उन समस्याओं व उनके कारणों की जानकारी व्यक्ति को भी कराता है। साथ ही, उनकी आंतरिक व बाह्य क्षमताओं/योग्यताओं को उत्प्रेरित करता है ताकि अपनी समस्याओं को हल करने व क्षमताओं के विकास के क्रम में समुचित प्रयास हेतु योग्य बन सके और अधिकतम सुखमय व संतोषप्रद जीवनयापन कर सके।

   इस प्रक्रिया के अंतर्गत समान्यतः समस्याग्रस्त व्यक्ति को किसी अभिकरण के माध्यम से प्रशिक्षित कार्यकर्ता द्वारा वैयक्तिक सेवा कार्य की विभिन्न प्रविधियों व सिद्धांतों का उपयोग कर सहायता प्रदान की जाती है। कार्यकर्ता प्रक्रिया में सेवार्थी की समस्या, उसका व्यक्तित्व और सामाजिक पर्यावरण के संबंध में तथ्यों का अध्ययन करता है। निदान में समस्या की उत्पत्ति पर व्यक्तित्व व सामाजिक पर्यावरण का

ज्ञान शांति मैत्री

प्रभाव और इसे कैसे दूर किया जाए उसकी कार्य योजना बनाता है। साथ ही विभिन्न बाह्य एवं आंतरिक साधनों के उपयोग से समस्या का उपचार करता है।

.18 सारांश

इस इकाई में हमने समाज कार्य में वैयक्तिक परामर्श कार्य के स्वरूप को समझा। इसे समझने के लिए हमने समस्याग्रस्त व्यक्ति के साथ जिन बिन्दुओं पर कार्यकर्ता को ध्यान देने की आवश्यकता होती है उनको भी समझा।कार्यकर्ता समस्याग्रस्त व्यक्ति के समस्या समाधान के लिए वैयक्तिक परामर्श के सिद्धांतों का अनुपालन कर उसके उपचार की ओर बढ़ता है। इसी के साथ ही सफल उपचार के लिए कार्यकर्ता और सेवार्थी में किस जिन संबंधों की आवश्यकता होती है उन संबंधों को भी समझा। साथ ही वैयक्तिक परामर्श के महत्वपूर्ण अवयव के बारे में भी हमने जानकारी प्राप्त करने की कोशिश की है।

.19 बोध प्रश्न

1. वैयक्तिक परामर्श की अवधारणा को स्पष्ट कीजिए।
2. हैमिल्टन एवं हॉलिस द्वारा व्यक्त वैयक्तिक परामर्श की मान्यताओं का उल्लेख कीजिए।
3. वैयक्तिक परामर्श कार्य के सिद्धांतों की चर्चा करें।
4. वैयक्तिक परामर्श प्रक्रिया में कार्यकर्ता-सेवार्थी संबंध की महत्ता को रेखांकित कीजिए।
5. वैयक्तिक परामर्श कार्य के महत्वपूर्ण अवयव को स्पष्ट कीजिए।

1.10 संदर्भ एवं अन्य पुस्तकें

1. पाण्डेय, बालेश्वर (2017). परामर्श के नए आयाम जयपुर: रावत पब्लिकेशन.
2. राय,अमरनाथ एवं अस्थाना, मधु (2010) आधुनिक परामर्शन मनोविज्ञान. दिल्ली: मोतीलाल बनारसीदास.
3. राय,अमरनाथ एवं अस्थाना, मधु (2003) निर्देशन एवं परामर्शन (संप्रत्यय, क्षेत्र एवं उपागम). दिल्ली: मोतीलाल बनारसीदास.
4. दुग्गल, सत्य पाल (2007). निर्देशन और परामर्श (संस्क.पंचम). पंचकूला: हरियाणा साहित्य अकादमी.

इकाई-2 युगल और परिवार परामर्श

इकाई की रूपरेखा

2.0 उद्देश्य
2.1 प्रस्तावना
2.2 युगल परामर्श
2.3 युगल संबंध का व्यवहारात्मक पक्ष
2.4 परिवार परामर्श
2.5 सारांश
2.6 बोध प्रश्न
2.7 संदर्भ एवं अन्य पुस्तकें

2.0 उद्देश्य

इस इकाई के अध्ययन पश्चात आप-

1. युगल परामर्श और उसकी प्रक्रिया को विस्तारपूर्वक समझ सकेंगे
2. युगल परामर्श प्रक्रिया में व्यवहारात्मक पक्ष की भूमिका को जान सकेंगे
3. परिवार परामर्श की प्रक्रिया से संबंधित जानकारी प्राप्त कर सकेंगे

2.1 प्रस्तावना

मानव जीवन में परिवार का तथा युगल जीवन में यौनिक संबंध का विशेष महत्व है। विवाह पारिवारिक जीवन का आधार बिन्दु है, हमारे जीवन में पारिवारिक एवं वैवाहिक संबंध की विशेषताओं का व्यापक प्रभाव पड़ता है। यदि वैवाहिक संबंध में किसी प्रकार की समस्या हो तो जीवन की गुणवत्ता में तथा जीवन के विविध पक्षों से संबंधित सुखानुभूति में कमी आती है। परिवार हमारे अंतरंग, अतिघनिष्ट संबंध का पारंपरिक रूप है।

2.2 युगल परामर्श

प्रेमपूर्ण रिश्ते हमारे जीवन में सबसे अहम होते हैं। एक साथी का चयन करना और जीवनभर एकत्रित रहना शायद ही कभी सरल होता है। जब हम अपनी पसंद से शादी करते हैं और परिवार के साथ रहते हैं, तो आश्चर्यजनक रूप से केवल जटिलता से ही जुड़ते हैं।इस जटिलता में कुछ सकारात्मक एवं नकारात्मक अनुभूतियां मुख्य भूमिका निभाती है।जिसमें युगल के आपसी संबंध, जीवन साथी के लिए उत्साह की मात्रा, यौनिक संबंध में संतुष्टि, आय, गृहस्वामित्व, शिक्षा, सामाजिक समानता, सहयोगात्मक एवं देखभाल पूर्ण व्यवहार आदि की आवश्यकता होती है,किन्तु संबंधों में प्रतिस्पर्धा, स्वार्थ, धोखा, जोर-जबरदस्ती/बलप्रयोग,वैवाहिक संबंध में असंतुष्टि,असहयोगात्मक एवं सहयोगात्मक व्यवहार न होना आदि कारणों से उत्पन्न तनाव मानसिक समस्याओं को जन्म देता है। एक-दूसरे के प्रति द्वेषभाव वातावरण का

निर्माण हो जाता है तथा आपसी संवाद का अभाव होता है; एक- दूसरे के विचारों या भावनाओं को हम समझते नहीं हैं तब संबंधों में दूरियां बढ़ने लगती है और संबंध विघटन की ओर बढ़ता जाता है।

युगल संबंधों में स्थायित्व की व्याख्या करने के लिए लागत-लाभ विश्लेषण संबंधी दो उपागम महत्वपूर्ण होते हैं। प्रथम, आर्थिक मॉडल जो युगल संबंधों के लागत-लाभ और विकल्पों के लागत-लाभ की गणना एवं तुलना को युगल संबंधों के भविष्य का संकेतक मानता है। दूसरा, थीबॉट और केली (1959) का सामाजिक विनिमय सिद्धान्त जिसमें लागत और लाभ के स्थान पर वैवाहिक/युगल संबंधों में प्राप्त हो रहे पुरस्कार (सकारात्मक एवं नकारात्मक अनुभूतियों) की तुलना को आधार बनाया जाता है। लेविंजर (1979) ने सामाजिक विनिमय सिद्धान्त के विस्तार में यह कहा है कि युगल संबंधों में कुछ आकर्षण के स्त्रोत होते हैं, जो संबंधों को मजबूती प्रदान करते हैं तथा कुछ अन्य ऐसे कारक होते हैं जो इसे विघटित होने से रोकते हैं। संबंधों को मजबूती प्रदान करने वाले आकर्षण के घटकों में सकारात्मक अनुभूतियाँ जैसे- जीवन साथी के लिए उत्साह की मात्रा, यौनिक संबंध में संतुष्टि, आय, गृहस्वामित्व, शिक्षा, सामाजिक समानता आदि को देखा जाता है। इसके विपरीत धर्म, बच्चे, वैधानिक एवं आर्थिक बाधा, परिवार एवं समाज/समुदाय के प्रभाव युगल संबंधों को विघटित होने से रोकते हैं।

युगल परामर्श क्या है?

युगल परामर्श (इसको विवाह परामर्श के रूप में उपयोग किया जा सकता है) यह एक ऐसी चिकित्सा है जो संवाद को बेहतर बनाने और अंतरंग संबंध (IntimateRelationship) की समस्या का समाधान में सहायता प्रदान करता है। युगल संबंधों की समस्या को परामर्श द्वारा समझौता में,पूर्णतः व्यक्तिगत सत्रों के माध्यम से,पूर्ण किया जा सकता है। बातचीत चिकित्सा (Talktherapy) में युगल परामर्श टर्म (Term) को दो व्यक्तियों के बीच संबंध के लिए उपयोग में लाया जाता है।

युगल परामर्श की एक महत्वपूर्ण विशेषता यह है कि इसमें सेवार्थी पति या पत्नी अथवा सहवासी नहीं अपितु उनके मध्य का संबंध और उस संबंध की विशेषताएँ होती है। परामर्शदाता का ध्यान व्यक्ति नहीं, प्रणाली पर केंद्रित होता है। अन्य प्रकार के परामर्श में व्यक्ति (संज्ञान, अनुभूति, अनुक्रिया आदि) में परिवर्तन की अपेक्षा की जाती है किन्तु युगल परामर्श में दो व्यक्तियों के बीच के संबंध में परिवर्तन अपेक्षित होता है। इस बात को ध्यान में रखकर परामर्शदाता चिकित्सा की ऐसी पद्धति को अपनाता है जो प्रासंगिक प्रशिक्षण से युगल की गतिशीलता में सहायता करती है। युगल परामर्श के समय परामर्शदाता के अनुसार आदर्श रूप से युगल एकत्रित सत्रों के लिए अनुकूल होने की स्थिति में एकत्रित सत्रों की सहायता लेता है। समस्या की पहचान होने के उपरांत युगल परामर्श को व्यक्तिगत सत्रों में विभाजित कर सहायक बनाता है।

युगल परामर्श में समस्या पहचान द्वारा संबंधों की गत्यात्मकता का पता लगाया जाता है। युगल जीवन में आने वाली समस्याओं का कारण पक्ष केवल संबंधित व्यक्तियों तक सीमित नहीं रहता है। व्यक्ति से बाहर उसके संपर्क में आने वाले सामाजिक समूह उसके द्वारा प्रभावित होते हैं तथा उसे प्रभावित भी करते हैं। इस प्रकार युगल जीवन को प्रभावित करने वाली प्रणालियों के तीन स्तर होते हैं: व्यक्ति, युगल एवं सामाजिक समूह। इन तीन स्तर के प्रभाव स्वतंत्र नहीं, परस्पर अन्योनाश्रित होते हैं। इन कारणों के पारस्परिक कारणात्मकता (MutualCausality) या चक्रानुगत संबंध परामर्श की दृष्टि से महत्वपूर्ण है।

इसके पश्चात दूसरा महत्वपूर्ण पक्ष परामर्श कार्य में प्रयुक्त होने वाले विविध परिप्रेक्ष्य हैं। परामर्शदाता युगल या एक सदस्य को अनेक उपागमों की सहायता से लाभ पहुंचा सकता है। समस्याओं के स्वरूप के अनुरूप कभी व्यवहारात्मक उपागम द्वारा किसी अनुक्रिया/आदत का पुनर्बलन या विलोपन किया जा सकता है। सर्वांग उपागम के माध्यम से युगल सदस्यों के समूह (परिवार) में व्याप्त शक्ति संतुलन को परिमार्जित किया जा सकता है। जिन अनुक्रियाओं का मूल आरंभिक जीवन के अवदमित अनुभव हो, उन्हें मनोगत्यात्मक उपागमों के माध्यम से लाभान्वित किया जा सकता है। अवदमित अनुभवों के कारण अवांछित एवं अतार्किक अनुक्रियाओं का विकास होता है अतः ऐसे अनुभवों को व्यक्ति के चेतन स्तर पर बाहर लाकर औचित्यपूर्ण अनुक्रियाओं को विकसित करना संभव हो पाता है। परामर्शदाता अनेक उपागमों के मध्य विद्यमान सामान्य तत्वों को ध्यान में रखकर उनके उपयुक्त योग को भी प्रयुक्त करते हैं।

2.3 युगल परामर्श प्रक्रिया

परामर्श प्रक्रिया अभीष्ट लक्ष्यों (व्यक्ति के मानसिक स्वास्थ्य, आत्म निर्णय और आत्मसिद्धि की क्षमता में वृद्धि आदि) की दिशा में आरम्भ से अंत तक एक सूत्र में बंधी होती है। प्रक्रिया का अर्थ यह है कि कई घटनाएँ एक श्रृंखला में एक निश्चित अवधि में घटित होती है। यह अवधि तीस या चालीस मिनट का सत्र हो सकती है या कई माह की अवधि में अनेक सत्रों में फैली हो सकती है। युगल परामर्श प्रक्रिया अभीष्ट लक्ष्यों की प्राप्ति के मार्ग में कुछ मध्यवर्ती लक्ष्यों को प्राप्त करने का प्रयत्न करती है। प्रक्रिया लक्ष्यों का स्वरूप आरंभिक लक्ष्य को अर्जित किए बिना अगले लक्ष्य को अर्जित नहीं किया जा सकता है। इसलिए परामर्श की प्रक्रिया को कुछ सुनिश्चित चरण एवं अवस्थाओं के माध्यम से निर्धारित क्रम में अग्रसर होना चाहिए। साधारणतया युगल परामर्श के आठ चरण बताए जाते हैं:

1) सेवार्थी के साथ समय सत्र का निर्धारण
2) पूर्व-परामर्श सत्र
3) परामर्श संबंध का विकास
4) परामर्श के विशिष्ट लक्ष्यों की पहचान
5) लक्ष्य सिद्धि के लिए कार्य योजना का विकास और क्रियान्वयन
6) परामर्श संबंधों का समापन
7) परामर्श के परिणामों का मूल्यांकन और
8) अनुवर्ती कार्य।

परामर्श के चरण को बहुधा पाँच अवस्थाओं की संरचना में विभाजित किया जाता है:

ज्ञान शांति मैत्री

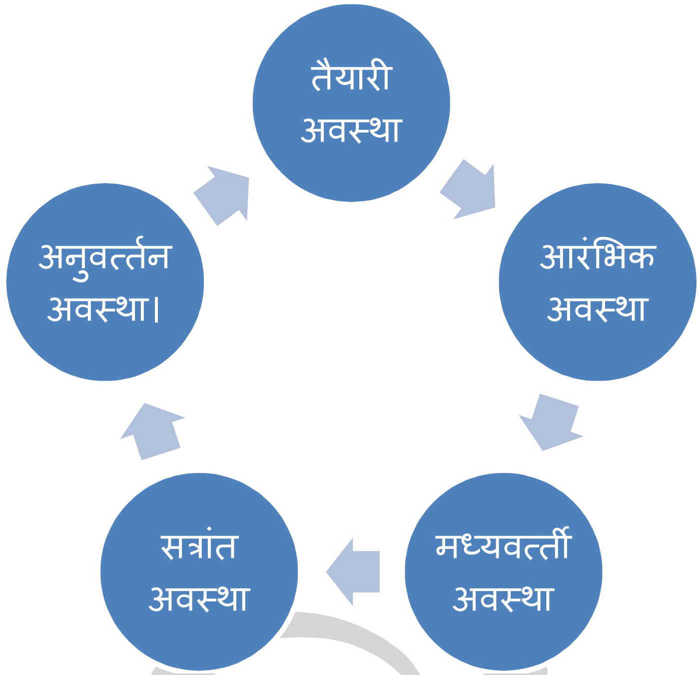

तैयारी अवस्था; आरंभिक अवस्था; मध्यवर्ती अवस्था; सत्रांत अवस्था; अनुवर्तन अवस्था। परामर्श प्रक्रिया के चरण एवं अवस्था के बारे में 'परामर्श एवं थेरेपी' इकाई में विस्तार से चर्चा की गई है। युगल परामर्श प्रक्रिया में चरण एवं अवस्था की संरचना द्वारा लक्ष्य की प्राप्ति करते हुए युगल संबंधों में निहित समस्या का निदान कर सहायता की जाती है।

2.3 युगल संबंध का व्यवहारात्मक पक्ष(Behavioral Aspects of Couple)

मनोवैज्ञानिक के लिए युगल के सामाजिक पक्ष की तुलना में व्यवहारात्मक पक्ष अधिक महत्वपूर्ण है। विभिन्न समाज वैज्ञानिकों द्वारा व्यवहार के सेट आयामों की पहचान की गई है; इनमें से तीन : सहचारिता (companionship) वैवाहिक भूमिका निष्पादन (Marital Role Performance) एवं अंतर्क्रिया का भावात्मक गुण को ह्यूस्टन एवं अन्य (1987) ने वैवाहिक संबंध की विशेषता से संबंधित बताया है। जबकि अन्य चार:- मूल परिवार एवं अन्य परिजनों के साथ संलिप्तता (Involvement With Family of Origin and other Kins), मित्रों सहकर्मियों एवं अन्य गैर परिजनीय संबंधों में संलिप्तता,बच्चों के साथ संलिप्तता एवं सामुदायिक गतिविधियों में संलिप्तता का संबंध सामाजिक संदर्भ या अंतरवैयक्तिक संबंध तंत्र से है। ह्यूस्टन एवं अन्य (1987) ने अपने शोधकार्य में पति/पत्नी एवं युगल के जीवन की घटनाओं के आत्म-वर्णन (Self-Report)के आंकड़ों के आधार पर समस्त गतिविधियों को

अ) गृह कार्य

ब) विश्राम-काल गतिविधियाँ

स) सकारात्मक एवं नकारात्मक घटना की श्रेणी में विभाजित किया है।

परिवार एवं युगल की वैवाहिक समस्याओं को समझने की दृष्टि से इन सकारात्मक एवं नकारात्मक घटनाओं का वर्णन महत्वपूर्ण है। जो निम्नवत हैं-

सकारात्मक/सुखदायी व्यवहार (Positive/Pleasing Behaviors)

- ❖ आपके पति/पत्नी ने आपका अथवा आपके द्वारा किए गए कार्य का अनुमोदन किया।
- ❖ आपके पति/पत्नी ने कुछ ऐसा किया अथवा कहा जिस पर आप हँसे।
- ❖ आपके पति/पत्नी ने आपसे 'आई लव यू' कहा।
- ❖ आपने एक-दूसरे से ऐसे विषय में बात की जो उस समय घटित हुआ जबकि आप अलग थे।
- ❖ शारीरिक संबंध बनाने।
- ❖ आपने शारीरिक संबंध बनाते समय शरीर की भाषा में स्नेह प्रदर्शित किया, यथा चुंबन, आलिंगन आदि जुगाली।
- ❖ अपनी भावनाओं, अनुभूतियों या समस्याओं के विषय में एक-दूसरे से बात की।
- ❖ पति/पत्नी ने आपके साथ शारीरिक संबंध बनाने के लिए पहल की।
- ❖ पति/पत्नी ने आपके प्रति कुछ ऐसा अच्छा किया जिसके विषय में आपने अपेक्षा नहीं की थी।

नकारात्मक/दुखदायी व्यवहार (Negative/Displeasing Behaviors)

- ❖ पति/पत्नी आपकी बातचीत से बोर या उसमें रुचि न लेते हुए प्रतीत हुए।
- ❖ पति/पत्नी आपकी वार्ता में वर्चस्व स्थापित कर रहे थे, आपको बोलने से रोक रहे थे या आपको बोलने का अवसर नहीं दे रहे थे।
- ❖ पति/पत्नी ने अपनी ऊंची आवाज, चिल्लाकर, फटकार कर आपके प्रति क्रोध या अधीरता प्रकट की।
- ❖ आपने जो कुछ किया अथवा नहीं भी किया उसकी आपके पति/पत्नी ने आलोचना या शिकायत की।
- ❖ पति/पत्नी ने आपकी शारीरिक संबंध बनाने के विषय में पहल को नकार दिया।
- ❖ पति/पत्नी ने वह नहीं किया जिसकी आपने उनसे अपेक्षा की थी।
- ❖ पति/पत्नी ने कुछ ऐसा किया जिसके विषय में उन्हें ज्ञात था कि इससे आपको झुंझलाहट होगी जैसे- कोई आदत, बिजली जलती छोड़ देना, अपने कपड़े ठीक से न रखना आदि।

वैवाहिक संबंध में समस्याएँ

डेरेक हिल्ल ने (DerekHill,2000) पति-पत्नी के संबंध में निम्नलिखित प्रमुख समस्याओं का उल्लेख किया है:

1) आपसी संवाद की समस्या
2) आवश्यकताओं का द्वंद्व एवं पार्थक्य
3) विवाहेतर प्रेम प्रसंग

ज्ञान शांति मैत्री

4) यौनिक समस्याएँ
5) माता-पिता के रूप में द्वंद्व
6) बलपूर्वक स्थापित भूमिका में बदलाव
7) आक्रामकता औषधि/पदार्थ दुरुपयोग
8) ईर्ष्या/स्वत्वबोध (पजेसिवनेस)

यौनिक समस्याओं के तीन रूप होते हैं-

i. नारी यौनिक प्रकार्यात्मकता के दोष- शारीरिक संबंध में रुचि एवं उत्तेजना का अभाव, आर्गाज्म (चरम सुख) की प्राप्ति न होने की समस्या, आदि।

ii. पुरुषों की यौनिक प्रकार्यात्मकता के दोष- शारीरिक संबंध में रुचि का अभाव, लिंगस्तम्भन एवं शीघ्र पतन की समस्या आदि।

दंपत्ति स्तर की समस्या- दोनों सदस्यों की शारीरिक संबंध बनाने संबंधी रुचि की मात्रा में अंतर, संवाद की समस्या आदि।

2.4 परिवार परामर्श

व्यक्ति सामाजिक संबंधों का अभिन्न अंग है। संबंधों से पृथक वह न तो मनोवैज्ञानिक एकरूपता प्राप्त कर सकता है और न ही मानवीय दशाओं को समझने की योग्यता उत्पन्न कर सकता है। उसका अस्तित्व, विकास तथा व्यवहार उसके तथा पर्यावरण के मध्य अन्तरक्रिया पर निर्भर होता है। वह एक जैविकीय मनोसामाजिक जटिलता है जिसके तीनों अंगों का पृथ्क्कीकरण असम्भव है अर्थात व्यक्ति के तीन अभिन्न अंग हैं: 1) जैविकीय 2) मनोवैज्ञानिक 3) सामाजिक। वह मनोसामाजिक स्वरूप परिवार की इकाई के माध्यम से प्राप्त करता है।

आदिकालीन सरल समाजों से लेकर वर्तमान जटिल समाजों तक परिवार सामाजिक संगठन की एक आवश्यक इकाई रहा है। इसका जन्म संभवतः तभी हुआ जब व्यक्ति का हुआ क्योंकि मानव समाज में परिवार ही एक ऐसी सामाजिक आधारभूत इकाई है जिसके अंतर्गत तथा जिसके द्वारा व्यक्ति पाशविक प्रवृत्तियों का शोधन तथा समाजीकृत कर सामाजिक प्रकृति प्राप्त करने में सफल हो सका है। व्यक्ति का अस्तित्व परिवार में ही संभव होता है। बच्चा परिवार में न केवल जन्म लेता है बल्कि यहीं वह सामाजिक गुणों का विकास कर समाज का एक विभिन्न अंग बनाता है। उसके व्यक्तित्व का विकास परिवार में ही होता है। परिवार के अंतर्गत ही समाज के रीति-रिवाजों, प्रथाओं, रीतियों, व्यवहारों, मान्यताओं, आदर्शों तथा विश्वासों को सीखता है तथा उन मूल्यों के अनुकूल अपने-अपने व्यवहार को ढालने का प्रयत्न करता है। अतः परिवार एक सार्वभौमिक संस्था है और जिसका विकास सामाजिक जीवन से संबंधित आवश्यकताओं की पूर्ति के अनिवार्य साधन के रूप में हुआ है।

परिवार परामर्श का अर्थ:

नाथन अकरमैन, (1958) के अनुसार, परिवार परामर्श का तात्पर्य उस उपचारात्मक अभिगम से है, जिसके द्वारा उन पारिवारिक संबंध व्यवस्थाओं में परिवर्तन तथा संशोधन लाया जाता है जो परिवार तथा

इसके सदस्यों के दिन-प्रतिदिन के कार्यों में व्यवधान उत्पन्न करती है। परिवार चिकित्सा में चिकित्सा का केंद्र बिन्दु व्यक्ति न होकर परिवार स्वयं होता है। यद्यपि व्यक्ति की आवश्यकताओं तथा विशेषताओं को ध्यान में रखा जाता है परंतु परिवार की अन्तरक्रिया व्यवस्था पर विशेष रूप से ध्यान केंद्रित किया जाता है।

परिवार परामर्श एक उपचारात्मक अभिगम है जो सेवार्थी के पारिवारिक संबंध व्यवस्थाओं तथा उनका सदस्यों पर चेतन व अचेतन प्रभाव का अध्ययन करता है। अतः वह मनोविश्लेषणात्मक सिद्धान्त से काफी मिलता-जुलता है। यह अभिगम व्यक्ति को ही पूर्णता में न देखकर व्यवस्था के एक अंग के रूप में देखता है। यह एक सामूहिक अभिगम (GroupApproach) है जो परिवार के एक व्यक्ति के स्थान पर कई व्यक्तियों पर अपना ध्यान केंद्र करता है तथा लघु समूह गत्यात्मक सिद्धांतों तथा प्रविधियों का उपयोग करता है।

प्रारंभिक स्तर: परामर्श की प्रक्रिया लोकतांत्रिक सिद्धांतों पर आधारित है। अतः परामर्शदाता तभी हस्तक्षेप करता है जबकि उसे ऐसा करने के लिए आमंत्रित किया जाता है। सर्वप्रथम सेवार्थी को परामर्श की आवश्यकता का बोध होना चाहिए; उसे अपने व्यवहार में किसी समस्या का प्रत्यक्षण और बाहरी सहायता की आवश्यकता अनुभव होनी चाहिए। कार्यकर्ता सेवार्थी के लक्षणों के आधार पर यह निश्चित करता है कि प्रथम साक्षात्कार किससे करना है तथा किन-किन लोगों को उसमें सम्मिलित करना है। यह कार्यकर्ता की कार्यशैली पर निर्भर करता है कि वह किस प्रकार कार्य प्रारम्भ करता है। कुछ कार्यकर्ता पहले माता-पिता का साक्षात्कार करते हैं, कुछ कार्यकर्ता सम्पूर्ण परिवार के सदस्यों का परिचय प्राप्त कर लेना निदान प्रक्रिया के लिए आवश्यक समझते हैं। साधारणतया जिस प्रकार की शिकायत अथवा समस्या होती है, उसी आधार पर प्रारंभिक कार्य का निर्धारण होता है। जैसे यदि समस्या का संबंध विवाह से है तो वैवाहिक जोड़े का साक्षात्कार प्रथम होगा और यदि समस्या का संबंध बच्चों से है तो सम्पूर्ण परिवार को सम्मिलित किया जाएगा।

परिवार से साक्षात्कार का उद्देश्य परिवार तथा परिवार के सदस्यों से समस्या की प्रकृति, लक्षण, स्रोत आदि से अवगत कराना है। इससे उपचारात्मक प्रक्रिया के लिए बल मिलता है तथा परिवार के सदस्यों में समस्या समाधान की क्षमता बढ़ती है। कार्यकर्ता तथा सेवार्थी के परिवार के मध्य सर्वप्रथम चिकित्सात्मक समझौता होता है। इससे गतिरोध में कमी आती है तथा नयी दिशा एवं स्फूर्ति जाग्रत होकर दोनों में विश्वासपूर्ण संबंध स्थापित होते हैं। परिवार को यह विश्वास होता है कि कार्यकर्ता वास्तव में समस्या का समाधान करना चाहता है तथा कार्यकर्ता को भी विश्वास होता है कि परिवार उसकी सहायता का इच्छुक है। इस समझौते के कारण ही दोनों में सांवेगिक संबंध स्थापित होते हैं और अपने-अपने उत्तरदायित्वों का ग्रहण, लगन तथा इच्छा से होता है।

पाण्डेय, बालेश्वर एवं सिंह, कीर्ति विक्रम (2017) ने अपनी किताब 'परामर्श के नए आयाम' में परामर्श हेतु परिवार इकाई से साक्षात्कार के निम्नवत उद्देश्य बताए हैं:

1. वर्तमान समस्या के संदर्भ में परिवार के सदस्य क्या भूमिका निभा रहे हैं तथा क्या समझ रहे हैं। इसको प्रदर्शित करना जिससे वे परिवार की समस्या की जटिलता एवं प्रभावात्मकता को समझ सकें।
2. एक-दूसरे की भावनाओं तथा उनके व्यवहार पर प्रभावों को प्रदर्शित करना।
3. अकार्यात्मक प्रविधि तथा उसके निरंतर उपयोग को परिवार के समक्ष उपस्थित करना।

4. पारिवारिक चिकित्सा संबंध का विकास करना।
5. इस तथ्य को बताना कि क्यों परिवार के सभी सदस्यों को चिकित्सा प्रक्रिया में साक्षात्कार करने की आवश्यकता है।

मूल्यांकन(Assessment):

निम्नलिखित आधारों पर मूल्यांकन किया जाता है:

1) **विषयवस्तु (Content)-** परिवार का परिचय, परिवार सदस्य संख्या, प्रत्येक सदस्य की आयु, संबंध, कार्य, शिक्षा, आर्थिक, स्तर, धार्मिक रूचि आदि। वर्तमान समस्या, शिकायत, प्रार्थना, प्रार्थना-पत्र देने का कारण, समस्या की प्रकृति, समस्या जिससे संबंधित है, कब से समस्या है, परिवार के सदस्यों की समस्या के प्रति क्या प्रतिक्रियाएँ हैं, समान तथा विभेदी विषय कौन-कौन से हैं आदि।
2) **पारिवारिक संरचना तथा प्रतिक्रियाएँ (Family Structure and Processes)-** I) उम्र तथा भूमिका के आधार पर उत्तरदायित्व का बंटवारा दिन-प्रतिदिन के कार्यों को पूरा करने के पारिवारिक तरीके। II) अभिज्ञान के तरीके तथा भूमिका निर्वाह, भूमिका के आधार पर पारिवारिक संबंध।
3) **उद्देशीय संबंधों की प्रकृति-** सदस्य किस प्रकार एक-दूसरे की आवश्यकताओं का ध्यान रखते हैं, संतोष प्राप्त करने का प्रयास करते हैं, परिवार के सदस्यों को कहाँ तक वैयक्तिक रुचि पूरी करने की छूट है, आयु के आधार पर कितनी निर्भरता, अलगाव, आत्मनिर्भरता है।
4) परिवार की भावनाओं को किस प्रकार समझा जाता है, भावनाओं की अभिव्यक्ति की क्या प्रकृति है, कितनी सहनशीलता है, नियंत्रण कितना है, आत्मीयता, उग्रता, लैंगिकता, चिंता, प्रतिगमन, धार्मिक रीति-रिवाज आदि का क्या रूप है। सदस्यों को प्रत्येक क्षेत्र में कितनी स्वतन्त्रता है, वे कितना नियंत्रण स्वीकार करते हैं आदि।
5) वास्तविक प्रत्यक्षीकरण की कितनी क्षमता है, आत्म अवलोकन की क्या प्रत्यक्षीकरण है, परिवार में मनो-सुरक्षात्मक यंत्रों का कहाँ तक उपयोग होता है, अवरोध कौन-कौन से हैं आदि।
6) **संघर्ष एवं समाधान के तरीके-** परिवार में निर्णय प्रक्रिया, तनाव दूर करने के तरीके, समस्या समाधान के तरीके, विचारों की भिन्नता वाले विषय।
7) **परिवार के मूल्य-** सांस्कृतिक तथा सामाजिक प्रभाव, नैतिक, धार्मिक दृष्टिकोण का स्थान तथा उनके हस्तांतरण के तरीके, सामाजिक आकांक्षाएँ तथा इच्छाएँ, परिवार का समाज में स्थान।
8) **संचार के तरीके-** सांस्कृतिक प्रभाव, मौलिक एवं अ-मौलिक संचार प्रक्रिया की शैली, संचार का प्रभाव तथा उद्देश्य, संचार का द्विस्तर, स्वीकृति तथा अस्वीकृति के क्षेत्र, भाषा का उपयोग तथा उसकी स्पष्टता।
9) **परिवार का इतिहास-** समस्या से संबंधित आवश्यक आंकड़े जैसे- वैवाहिक जीवन का इतिहास, बाल विकास, महत्वपूर्ण घटनाएँ, परिवार में भूमिका का परिवर्तन, बीमारियाँ, हानि आदि सामाजिक अनुकूलन तथा सामाजिक आवश्यकताएँ।
10) **सदस्यों का इतिहास-** व्यवहार, लक्षण, स्वास्थ्य, अनुकूलन, परिवार में कठिनाईयाँ आदि।

ज्ञान शांति मैत्री

11) समस्या समाधान हेतु उपलब्ध शक्ति- प्रत्येक सदस्य में समस्या से लड़ने की शक्ति तथा संक्रामकता, वैयक्तिक रूचि तथा योग्यता, समस्या पर कार्य करने की इच्छा, वैवाहिक संबंधों के प्रति भय, चिंता, परिवार में घनिष्ठता तथा अलगाव की इच्छा तथा प्रकृति आदि।

परामर्शदाता उपर्युक्त निर्देशन बिन्दुओं का उपयोग करके विषय-वस्तु, प्रक्रिया, पारिवारिक संरचना आदि का ज्ञान होने पर उपचार की योजना बनाता है। उद्देश्य निर्धारित करता है तथा विशिष्ट कार्य-प्रणाली बनाता है। इन बिन्दुओं के माध्यम से निम्न जानकारी प्राप्त होती है:

1. वर्तमान समस्या का केंद्र बिन्दु क्या है, क्या यह अंतरवैयक्तिक संबंधों में स्थिर है; पूरे परिवार से संबंधित है या किसी एक व्यक्ति से संबंधित है अथवा परिवार से बाहर इसका कोई संबंध है।
2. परिवार के स्थायित्व में क्या बाधाएँ हैं तथा स्थायित्व क्यों नहीं बन पा रहा है।
3. उपचारात्मक प्रक्रिया में कितना सहयोग मिलने की आशा है, किस व्यक्ति को प्रत्यक्ष रूप से चिकित्सा प्रक्रिया में लगाना है आदि।
4. किन-किन विधियों तथा प्रविधियों का उपयोग लघु तथा दीर्घकालीन उद्देश्य की प्राप्ति के लिए करना है। उद्देश्य कुछ भी हो, कार्यकर्ता तथा परिवार दोनों की स्वीकृति आवश्यक है।

पारिवारिक परामर्श का उद्देश्य

पारिवारिक परामर्श में परिवार की संबंध व्यवस्था में संशोधन तथा परिवर्तन करती है। यद्यपि व्यवस्थाएँ स्थायी होती हैं परंतु किसी कारणवश सदस्यों की रूचियाँ एवं इच्छाओं को पूरा करने में असमर्थ होती हैं। वे दिन-प्रतिदिन के कार्यों में बाधा उत्पन्न कर देती हैं। सहायता उस समय की जाती है जब परिवार की शक्ति कम होती है तथा चिंता अधिक होती है। परिवार में प्रतिकूलित भूमिका के सुधार के लिए उचित भूमिका स्थापित करने के लिए इसका उपयोग होता है। इस प्रक्रिया का अंतिम उद्देश्य परिवार के संबंधों में स्थायित्व तथा घनिष्ठता उत्पन्न करना है। साथ ही परिवार के सदस्यों की सहायता करना जिससे वे एक-दूसरे को अच्छे तरीके से समझ सकें, भावनाओं का आदर करें, आवश्यकता पूर्ति में सहायता करें, संचार प्रक्रिया सकारात्मक हो, उसमें स्पष्टता हो तथा वास्तविक उद्देश्यों की प्राप्ति संभव हो सके।

2.5 सारांश

इस इकाई में हमने युगल एवं परिवार परामर्श की प्रक्रिया को समझा साथ ही युगल के बीच अंतरंग संबंध से संबंधित समस्या को किस तरह सहायता दी जाती है, को जाना। युगल संबंध के व्यवहारात्मक पक्ष को जानने के लिए परामर्शदाता को किन बिन्दुओं पर ध्यान देना चाहिए उसे रेखांकित किया गया है। परिवार परामर्श में चिकित्सा का केंद्र बिन्दु व्यक्ति न होकर परिवार स्वयं होता है।पारिवारिक संबंध व्यवस्थाओं में परिवर्तन तथा संशोधन की प्रक्रिया में परामर्शदाता की दक्षता को समझा साथ ही पारिवारिक परामर्श के उद्देश्य को देखा।

ज्ञान शांति मैत्री

2.6 बोध प्रश्न

1. युगल परामर्श की अवधारणा को स्पष्ट कीजिए।
2. युगल परामर्श में व्यवहारात्मक पक्ष की चर्चा करें।
3. परिवार परामर्श प्रक्रिया को विस्तार से समझाएँ।
4. परिवार परामर्श में मूल्यांकन के बिन्दुओं चर्चा करें।

2.7 संदर्भ एवं उपयोगी ग्रंथ

1. पाण्डेय, बालेश्वर (2017). *परामर्श के नए आयाम*. जयपुर: रावत पब्लिकेशन.
2. राय,अमरनाथ एवं अस्थाना, मधु (2010) *आधुनिक परामर्शन मनोविज्ञान*. दिल्ली: मोतीलाल बनारसीदास.
3. राय,अमरनाथ एवं अस्थाना, मधु (2003) *निर्देशन एवं परामर्शन (संप्रत्यय, क्षेत्र एवं उपागम)*. दिल्ली: मोतीलाल बनारसीदास.
4. दुग्गल, सत्य पाल (2007). *निर्देशन और परामर्श*. पंचकूला: हरियाणा साहित्य अकादमी.

ज्ञान शांति मैत्री

इकाई-3 परामर्श एवं थेरेपी: अंतरसंबंध

इकाई की रूपरेखा

3.0 उद्देश्य
3.1 प्रस्तावना
3.2 परामर्श : एक परिचय
3.3 परामर्श के लक्ष्य और उद्देश्य
3.4 सायकोथेरेपी: एक परिचय
3.5 सायकोथेरेपी के प्रमुख घटक
3.6 सायकोथेरेपी की प्रक्रिया को प्रभावित करनेवाले प्रमुख कारक
3.7 सायकोथेरेपी की प्रक्रिया
3.8 परामर्श एवं सायकोथेरेपी के बीच संबंध
3.9 सारांश
3.10 बोध प्रश्न
3.11 संदर्भ एवं उपयोगी ग्रंथ

3.0 उद्देश्य

इस इकाई के अध्ययन के पश्चात आप -

1. परामर्श और थेरेपी के अंतर्संबंध को समझ सकेंगे।
2. परामर्श और थेरेपी के बीच के अंतर को स्पष्ट कर सकेंगे।

3.1 प्रस्तावना

विद्वानों का मानना है कि परामर्श तथा अन्य चिकित्सा विज्ञान अपने इतिहास और अपने महत्वपूर्ण बिन्दुओं के आधार पर अलग हैं। बावजूद इसके इन दोनों ज्ञानानुशासनों का एक दूसरे के साथ का संबंध एवं अंत:क्रिया लगातार देखने को मिलती है। चिकित्सा विज्ञान के अलावे अन्य सहायक प्रणालियाँ जैसे मनोचिकित्सा और नैदानिक मनोविज्ञान मूलरूप से गंभीर संवेगात्मक व्यवहारों के परिवर्तन पर ध्यान देती हैं। जैसे कि समाज कार्य मूल रूप से दूसरों की सहायता करने में सामाजिक और विधिक पक्ष को ध्यान में रखता है तथा चिकित्सा विज्ञानों से अलग परामर्श शिक्षा एवं अल्पकालिक उपचार के माध्यम से वैयक्तिक विकास तथा मानसिक स्वास्थ्य समस्याओं की रोकथाम पर ध्यान देता है। इन सबका अपना-अपना एक लक्ष्य है परंतु इन सब विज्ञानों का अंतिम लक्ष्य मानव को उचित सेवा प्रदान करना है। इसकी प्राप्ति के लिए यह सभी प्रवृत्तियां एक दूसरे को सहयोग करती दिखाई देती है।

पिछले कुछ दशकों में मानसिक स्वास्थ्य के क्षेत्र में बड़े बदलाव हुए हैं। मानसिक विकृतियों, रोगों के वर्गीकरण का प्रचलन काफी बढ़ा परिणामत: न्यूरोसिस (Neurosis) और सायकोसिस (Psychosis) में मानसिक स्वास्थ्य से संबंधित बीमारियों का बंटवारा हुआ.

न्यूरोसिस में उन विकृतियों और बीमारियों को रखा गया जिसे सामान्यत: सामाजिक पर्यावरण में ही ठीक किया जा सकता है। उदाहरण के लिए चिंता, दबाव, कुंठा आदि। किंतु सायकोसिस से संबंधित बीमारियों के लिए हॉस्पिटल एवं फार्माकोलोजी की आवश्यकता को महसूस किया जाता है। उदाहरण के लिए स्किजोफ्रेनिया, बायोपोलर डिसऑर्डर आदि।

यही समय था जब केस मैनेजमेंट के अंतर्गत बहु-व्यवसायी, बहु-ज्ञानानुशासनात्मक टीम के रूप में सेवार्थी को सेवा मुहैया कराने का प्रचलन बढ़ गया। ऐसे में ख़ास कर न्यूरोसिस से संबंधित बीमारियों एवं विकृतियों से निजात पाने में थेरेपी एवं परामर्श जैसी शुरूआती सहयोग प्रक्रियाओं का प्रचलन काफी बढ़ गया है। व्यक्ति की बदली हुई जीवन शैली को समझने एवं उनकी समस्याओं की जटिलता को समझते हुए समस्या से निबटान में परामर्श और सायकोथेरेपी (Psychotherepy) जैसी प्रक्रियाएं एक दूसरे को सहयोग करती हुई दिखती है।

इस इकाई में हम पहले परामर्श की समुचित प्रक्रिया को समझेंगे तथा उसके बाद सायकोथेरेपी की प्रक्रिया को समझने की कोशिश करेंगे। साथ ही परामर्श और सायकोथेरेपी के बीच अंतर्संबंध की चर्चा करेंगे और अंत में इन दोनों के बीच भेद के कारकों की चर्चा करेंगे।

3.2 परामर्श : एक परिचय

मरियम वेबस्टर मेडिकल डिक्शनरी (2017) के अनुसार "परामर्श एक व्यक्ति को दिया जाने वाला व्यावसायिक निर्देशन है जिसके लिए मनोवैज्ञानिक पद्धतियों का उपयोग किया जाता है विशेषत: केस हिस्ट्री में तथ्य संकलन के लिए। साथ ही व्यक्तिगत साक्षात्कार की विभिन्न तकनीकों एवं अभिवृत्ति और हितों के परिक्षण का उपयोग भी इसमें किया जाता है।"

रुथ स्ट्रांग के अनुसार "परामर्श प्रक्रिया एक संयुक्त प्रयास है। परामर्श प्रक्रिया का सारतत्व इन संबंधों में है जिसमें परामर्श प्राप्त व्यक्ति, स्वयं को पूर्णत: अभिव्यक्त करने के लिए स्वतंत्रता का अनुभव करता है तथा अपने लक्ष्यों, साध्य के बारे में स्पष्टीकरण व साध्य प्राप्ति हेतु सामर्थ्य और समस्या प्रकट होने पर उसके समाधान हेतु प्रयुक्त साधन एवं विधियों के प्रति आत्मविश्वास प्राप्त करता है" (राय & अस्थाना, 2015, पृ. 326)।

ब्रिटिश एसोशिएशन फॉर काउन्सेलिंग (1984) के अनुसार "परामर्श शब्द में व्यक्ति के साथ किए जाने वाले ऐसे कार्य और संबंध निहित है जो शायद विकासात्मक, संकट सहायता, सायकोथेरेप्यूटिक, निर्देशन या समस्या समाधान परक हो... परामर्श कार्य के अंतर्गत 'सेवार्थी' को अन्वेषण एवं खोज का अवसर तथा ज्यादा से ज्यादा संतोषपूर्ण एवं संसाधनयुक्त जीवन जीने की राह का स्पष्टीकरण प्राप्त होता है" (McLeod, 2003, पृ. 7)।

कुल मिलाकर परामर्श एक सम्मिलित प्रयास है जिसमें परामर्शदाता तथा सेवार्थी सम्मिलित रूप से समस्या का समाधान खोजते हैं। परामर्श मूलत: सेवार्थी केन्द्रित प्रक्रिया होती है। इसलिए परामर्श सेवार्थी द्वारा मांगे जाने पर दिया जाता है।

उक्त परिभाषाओं एवं अन्य विद्वानों के मतानुसार परामर्श की निम्नलिखित विशेषताएं दिखाई देती है-

- परामर्श एक प्रक्रिया है।

ज्ञान शांति मैत्री

- परामर्श में परामर्शदाता एवं सेवार्थी के बीच अंत:क्रियात्मक संबंध है।
- परामर्श का स्वरूप विकासात्मक, संकट सहयोग, समस्या समाधान, निरोधात्मक एवं उपचारात्मक होता है।
- परामर्श प्रक्रिया आमने-सामने एवं सेवार्थी केन्द्रित होती है।
- परामर्श प्रक्रिया में विभिन्न अवस्थाएं-पूर्व-तैयारी, आरंभिक, मध्यवर्ती, समापन और अनुवर्ती अवस्थाएं शामिल होती हैं।

परामर्श के मुख्य घटक (Components of Counselling)

परामर्श प्रक्रिया में चार घटक महत्वपूर्ण होते हैं जिनके अभाव में परामर्श पूर्ण नहीं हो सकता या सफलता को प्राप्त नहीं कर पाता। वे चार घटक हैं- परामर्शदाता, सेवार्थी, संस्था, सैद्धांतिक उपागम। (अधिक जानकारी हेतु देखें MSW 15 खंड 01 की इकाई -01)।

3.3 परामर्श के लक्ष्य और उद्देश्य

परामर्श प्रक्रिया सेवार्थी के हित में होती है जिसमें विभिन्न उपागमों का उपयोग कर परामर्शदाता सेवार्थी को उचित लक्ष्य तक पहुँचने में मदद करता है। इस प्रक्रिया के दौरान विभिन्न लक्ष्य बनाकर उसकी प्राप्ति का कार्य सेवार्थी परामर्शदाता के सहयोग से करता है। इस सामान्य लक्ष्य के बावजूद परामर्श प्रक्रिया के अन्य महत्वपूर्ण लक्ष्य हैं जो निम्नलिखित हैं-

- सहयोग
- सशक्तिकरण
- बहाली (Restitution)
- मनोवैज्ञानिक शिक्षा
- सामाजिक कौशलों का अर्जन
- निर्णय-रचना
- समस्या समाधान
- समायोजन
- आपातकालीन हस्तक्षेप एवं प्रबंधन
- लक्ष्यण उन्मूलन तथा सुधार
- आत्म-बोध का विकास

ज्ञान शांति मैत्री

- आत्म-स्वीकृति का विकास
- आत्म-वास्ताविकीकरण या वैयक्तिकरण
- नवजागरण
- समस्या समाधान
- परिवेश एवं स्वयं के प्रति सकारात्मक दृष्टिकोण का विकास
- जीवन में सार्थकता एवं अर्थबोध का विकास
- अपरिहार्य को स्वीकारने हेतु तत्परता का विकास
- संज्ञानात्मक परिवर्तन
- व्यवहार परिमार्जन एवं व्यक्तित्व परिवर्तन
- व्यवस्था, संगठन तथा समाज में परिवर्तन
- उपयुक्त स्वास्थ्य व्यवहार का विकास
- सूझ का विकास
- अन्य के साथ संतोषजनक संबंध स्थापना

परामर्श के उद्देश्य

- मानसिक स्वास्थ्य
- व्यक्ति के संसाधन का संवर्धन
- प्रकार्यात्मक दृष्टि से व्यक्ति का विकास सहज बनाना
- स्व-आत्मीकरण
- आत्म-सिद्धि आदि

परामर्श के क्षेत्र

- मानसिक समस्या- दबाव, आघात, चिंता तथा गंभीर मानसिक समस्याएं
- स्कूल में बच्चों की समायोजन की समस्याएं
- कॉलेज में कैरियर संबंधी समस्याएं
- पारिवारिक जीवन में समायोजन संबंधी समस्याएं

ज्ञान शांति मैत्री

- वैवाहिक सामंजस्य तथा
- कार्यरत जगहों की समस्याएं आदि

3.4 सायकोथेरेपी: एक परिचय

मनुष्य का व्यक्तिगत जीवन अपने आस-पास घटने वाली परिघटनाओं से काफी जुड़ा रहता है यही कारण है कि उन सब का असर व्यक्ति के जीवन पर चिंता, तनाव, अवसाद आदि के रूप में दिखने लगता है। ऐसे में व्यक्ति के रक्षा तंत्र मजबूत रूप से काम कर रहें हो तो ठीक है, परंतु कभी-कभी एक साथ कई समस्याओं का जीवन में प्रवेश करना व्यक्ति को भ्रमित अथवा दबाव में डाल सकता है। ऐसे में इन समस्याओं से निजात पाने में कुछ तात्कालिक सुझावों एवं चिकित्सा प्रणालियों की सहायता ली जा सकती है। परामर्श एक लंबी चलने वाली प्रक्रिया है जिसमें धन और समय ज्यादा खर्च भी होता है ऐसे में सायकोथेरेपी के अंतर्गत समय और धन को बचाते हुए कम समय में निबटान किए जाने वाली समस्याओं से निजात पाई जाती है।

साइकोथेरेपी शब्द की व्युत्पत्ति, प्राचीन ग्रीक शब्द *साइकी* से हुई है, जिसका अर्थ होता है श्वास या आत्मा और *थैरैपिया* का अर्थ होता है, परिचर्या करना या उपचार करना. इस शब्द के प्रथम प्रयोग का उल्लेख 1890 के आसपास मिलता है। इसे एक विशिष्ट सिद्धांत या प्रतिमान पर आधारित माध्यम के प्रयोग द्वारा चिंता से आराम दिलाया जाता है। इस तरह के उपचार का संपादन करने वाले प्रतिनिधि के पास इसके निष्पादन के लिए किसी (ख़ास) प्रकार का प्रशिक्षण प्राप्त होना चाहिए। अंत के दोनों बिंदु सायकोथेरेपी को परामर्श और देखरेख के अन्य प्रारूपों से अलग करते हैं।

मेरियम-वेबस्टर डिक्शनरी (2017) के अनुसार "सायकोथेरेपी शब्द का अर्थ ऐसी चिकित्सा से लगाया जाता है जहां मानसिक या सांवेगिक बीमारियों में मेडिसिन अथवा दवाइयों की अपेक्षा *समस्या संबंधी बातचीत* पर जोर दिया जाता हो (Merriam-Webster, 2017)।"

इसी डिक्शनरी में मेडिकल पदावली के अंतर्गत सायकोथेरेपी को परिभाषित किया गया है:

"एक ऐसी चिकित्सा जिसमें मनोवैज्ञानिक अर्थों में मानसिक, सांवेगिक विकृतियाँ तथा कुसमायोजन का उपचार किया जाता हो, ख़ास कर वाचिक संचार (इसके अंतर्गत मनोविश्लेषण, अनिर्देशित सायकोथेरेपी, पुनःशिक्षा या सम्मोहन आदि) द्वारा (Merriam-Webster, 2017)।"

ओलवर्ग (1967) के अनुसार "सायकोथेरेपी सांवेगिक प्रकृति की समस्याओं के उपचार का एक प्रारूप है इसमें प्रशिक्षित व्यक्ति एक रोगी के साथ जान-बूझकर पेशेवर संबंध बनाता है जिसका उद्देश्य उस व्यक्ति में सकारात्मक व्यक्तित्व विकास करना तथा वर्तमान मंदित व्यवहार लक्ष्यणों को दूर कर उसके व्यवहारों को परिमार्जित करता है।"

रौटर (1976) के अनुसार, "सायकोथेरेपी मनोवैज्ञानिक द्वारा की जाने वाली एक सुनियोजित क्रिया होती है जिसका उद्देश्य व्यक्ति के जीवन में ऐसा परिवर्तन लाना है जिससे उस व्यक्ति के भीतरी जीवन बहुत खुश और अधिक संरचनात्मक बना रहें।"

उपर्युक्त परिभाषाओं से यह तो ज्ञात होता है कि सायकोथेरेपी की प्रक्रिया सेवार्थी और थेरेपिस्ट के बीच उद्देश्यपूर्ण संबंध स्थापित होते हैं जिसके अंतर्गत रोगी को अपनी समस्या अभिव्यक्ति की जगह मिल जाती है और थेरेपिस्ट उस जगह का उपयोग सेवार्थी में समस्या के प्रति नजरिया, समस्या निबटान हेतु व्यवहार परिमार्जन आदि का उपयोग कर उसका आत्म सम्मान और आत्म विश्वास पुन:कायम करने में करता है।

3.5 सायकोथेरेपी के प्रमुख घटक

1. सेवार्थी
2. थेरेपिस्ट
3. थेरेप्टिक संबंध
4. सायकोथेरेपी की तकनीक

सेवार्थी से तात्पर्य ऐसे व्यक्ति से है जो समस्या समाधान या चिकित्सा की मांग रखता हों। इसमें मानसिक, सांवेगिक, मादक पदार्थ दुरूपयोग, दुश्चिंता, अवसाद आदि स्नायु विकृतियों से ग्रसित तथा आर्थिक एवं अन्य सामाजिक, पारिवारिक समस्याओं से संबंधित व्यक्ति को सेवार्थी के रूप में व्याख्यायित किया जाता है।

*सायकोथेरेपी में दूसरा महत्वपूर्ण घटक **थेरेपिस्ट** होता है जो विशेष प्रशिक्षण से लैस एवं व्यक्तियों की ऊपरलिखित समस्याओं के समाधान कार्य का अनुभव उसके पास हो। थेरेपी के लिए आवश्यक कौशलों एवं निपुणताओं के साथ उसे व्यक्ति के व्यक्तित्व, व्यवहार की अच्छी समझ होनी चाहिए* (जोडावत, 2015)। मनोचिकित्सा भिन्न प्रकार की योग्यताओं से युक्त चिकित्सकों द्वारा अभ्यास में लायी जा सकती है, जिसमे मनोरोग चिकित्सा, नैदानिक मनोविज्ञान, सलाहात्मक मनोविज्ञान, मानसिक स्वास्थ संबंधी परामर्श, नैदानिक या मनोरोग संबंधी सामाजिक कार्य, विवाह और परिवार संबंधी मनोचिकित्सा, पुनर्सुधार परामर्श, संगीत मनोचिकित्सा, व्यवसाय संबंधी मनोचिकित्सा, मनोरोग संबंधी परिचर्या, मनोविश्लेषण और अन्य सम्मिलित हैं।

थेरेप्टिक संबंध से तात्पर्य सेवार्थी और थेरेपिस्ट के मध्य जान-बूझकर या स्वत:स्फूर्त तैयार होने वाले व्यवसायिक संबंध से है। इन संबंधों का मुख्य उद्देश्य सेवार्थी और थेरेपिस्ट संबंधों के निर्माण के लिए आवश्यक अंत:क्रियाओं के नियमों एवं लक्ष्यों का निर्धारण करना है। लक्ष्य निर्धारित करते समय सेवार्थी की सहभागिता बहुत महत्वपूर्ण होती है। यहाँ यह ध्यान रखना आवश्यक है कि कोई विकल्प या लक्ष्य थेरेपिस्ट द्वारा सेवार्थी पर लादा नहीं जाना चाहिए। थेरेपिस्ट को उचित संचार माध्यमों, गोपनीयता, परानुभूति आदि कौशलों का उचित उपयोग करते हुए सेवार्थी को निर्धारित लक्ष्य तक पहुँचने तक व्यावसायिक संबंध बनाए रखना आवश्यक है।

सायकोथेरेपी की प्रक्रिया के अंतर्गत थेरेपिस्ट द्वारा सेवार्थी को समस्या से निजात दिलाने के उद्देश्य से निर्धारित ध्येय तक पहुंचाने में उपयोगी साधनों को **सायकोथेरेपी तकनीक** के रूप में परिभाषित किया जाता है। यह तकनीक कहीं न कहीं मनोवैज्ञानिक ज्ञान पर आधारित हैं। यह मनोवैज्ञानिक ज्ञान व्यक्ति के व्यक्तित्व के प्रति समझ को दर्शाता है जो व्यक्ति में वांछित परिवर्तन लाने में थेरेपिस्ट को सक्षम बनाता है। यह एक दृष्टिकोण या शैली के रूप में व्यक्ति तथा उसके पर्यावरण को समझने में सहयोग प्रदान करता है। इस सन्दर्भ में मनोविश्लेषण, गेस्टाल्ट, व्यावहारिक आदि दृष्टिकोण मनोविज्ञान में स्थापित हैं (अधिक जानकारी के लिए

ज्ञान शांति मैत्री

देखे MSW 15 खंड 01)। इन उपागमों के अंतर्गत विभिन्न तकनीकों को प्रयोग में लाया जाता है इसमें से कुछ प्रमुख तकनीक निम्नलिखित हैं-

1. विवेचन प्रोत्साहन
2. सांवेगिक अशांति को कम करना
3. नई सूचना प्रदान करना
4. विवेक उत्पन्न करना
5. परिवर्तन की उम्मीद एवं विश्वास कायम करना।

इन प्रमुख तकनीकों को निम्नलिखित विधियों के अंतर्गत वैयक्तिक और सामूहिक रूप से थेरेपी की प्रक्रिया में उपयोग में लाया जाता है।

- मनोगत्यात्मक थेरेपी
- व्यावहारिक थेरेपी
- संज्ञानात्मक व्यवहार थेरेपी

1. रैशनल इमोटिव थेरेपी
2. कॉग्निटिव थेरेपी
3. स्ट्रेस-इन्कुलेशन थेरेपी
4. मल्टीमॉडल थेरेपी
5. ह्यूमनीटेरियन-एक्सपेरिमेंटल थेरेपी

इन मुख्य थेरेपिज के अलावे सेवार्थी को समस्या से निजात दिलाने के लिए कुछ ख़ास तकनीक आधारित थेरेपिज का उभार हुआ है जिसमें से निम्नलिखित महत्वपूर्ण हैं-

1. क्लायंट सेंटर्ड थेरेपी
2. एक्सिस्टेंशियल थेरेपी
3. गेस्टाल्ट थेरेपी
4. लोगो-थेरेपी
5. फिक्स्ड रोल थेरेपी
6. ग्रुप थेरेपी

उक्त थेरेपिज का उपयोग थेरपिस्ट सेवार्थी में सांवेगिक परिवर्तन लाने के लिए करता है। इसके बावजूद सायकोड्रामा, फॅमिली थेरेपी, मैरिटल अथवा कपल थेरेपी आदि का चयन थेरेपिस्ट सेवार्थी की समस्या की प्रकृति के आधार पर करता है।

3.6 सायकोथेरेपी की प्रक्रिया को प्रभावित करनेवाले प्रमुख कारक

1. सेवार्थी की विशेषताएं
2. थेरेपिस्ट की विशेषताएं
3. सेवार्थी और थेरेपिस्ट के बीच का संबंध
4. उपचार का अवधि

ज्ञान शांति मैत्री

5. सामाजिक-सांस्कृतिक निर्धारक, आदि

सायकोथेरेपी प्रक्रिया में सेवार्थी के व्यक्तित्व के आधार पर थेरेपी का चयन करना होता है, जैसे- सम्मोहन जैसी तकनीक के प्रयोग के लिए यह माना जाता है कि इसका प्रयोग अंतर्मुखी व्यक्तियों पर ज्यादा सफल होता है। ऐसे में बहिर्मुखी व्यक्तित्व के व्यक्ति पर सम्मोहन का प्रभाव उचित नहीं होगा। दूसरी ओर थेरेपिस्ट के अपने ज्ञान की सीमा होती है. उसके शिक्षण, प्रशिक्षण एवं अनुभव का कोई एक क्षेत्र ख़ास होता है इस कारण यह कहना उचित नहीं होगा कि किसी भी तरह के समस्या में एक ही थेरेपिस्ट कारगर सिद्ध हो। ऐसे मनुष्य के कौशलों एवं तकनीक की विशेषता के आधार पर ही उसे अपने सेवार्थी के समस्या का समाधान करना होगा। सेवार्थी और थेरेपिस्ट के बीच के संबंध, सायकोथेरेपी प्रक्रिया को प्रभावित करने वाला तीसरा और महत्वपूर्ण कारक है। इस प्रक्रिया में दोनों ही सक्रिय रूप से सहभागी होने चाहिए तभी थेरेपी लाभदायी होती है। साथ ही यह माना जाता है कि थेरेपिस्ट और सेवार्थी के व्यक्तित्व के बीच की समानता उपचार को प्रभावित करती है। इसके अलावे उपचार के लिए आयोजित सत्रों का समय तथा उपचार के लिए लगने वाला समय सेवार्थी के उपचार पर प्रभाव डालता है। उपचार का समय अधिक न हो, इसकी सलाह दी जाती है। चूँकि थेरेपी को परामर्श से अलग समय सीमा के आधार पर ही किया जाता है। इसलिए उपचार का समय ज्यादा लंबा नहीं होना चाहिए। साथ ही उपचार के समय में आयोजित सत्रों का समय निश्चित एवं नियमित हो वह ज्यादा या कम नहीं होना चाहिए।

इन बुनियादी कारकों के बावजूद सामाजिक-सांस्कृतिक कारक, मानक, पूर्वाग्रह होते हैं जिसका पालन थेरेपिस्ट को समाज में कार्य करते समय करना चाहिए। भारत जैसे देशों में अनेकों मान्यताएं, परंपराएं है उनका उल्लंघन न करते हुए उपचार प्रक्रिया को आगे बढाया जाना चाहिए। साथ ही आवश्यकता के आधार पर पूर्वाग्रहों आदि का निर्मूलन में थेरेपिस्ट को भागीदारी करनी चाहिए। इस सन्दर्भ में एक मनोचिकित्सक का यह कहना कि *भारत के बड़े शहरों में भी मनोचिकित्सा के लिए रोगियों को पंद्रह दिन पहले से समझाना पड़ता है कि उनके साथ क्या किया जाएगा*। यह कथन लोगों के थेरेपी के प्रति अज्ञान को दर्शाता है। ऐसे कई पूर्वाग्रहों को समय रहते ही दूर करने का कार्य थेरेपिस्ट द्वारा किया जाना चाहिए अन्यथा वह सेवार्थी-थेरेपिस्ट के बीच के संबंध को प्रभावित करेगा। परिणामत: थेरेपी की संपूर्ण प्रक्रिया को प्रभावित करेगा।

3.7 सायकोथेरेपी की प्रक्रिया

सायकोथेरेपी की प्रक्रिया में सेवार्थी को सहायता प्रदान करने हेतु थेरेपिस्ट को विभिन्न भूमिकाओं का निर्वहन करना पड़ता है. एक ख़ास प्रक्रम में विधियों, थेरेपियों का उचित निर्धारण करते हुए सायकोथेरेपी की प्रक्रिया को जारी रखा जाता है।

होकन्सन (hokanson, 1983) के अनुसार थेरेपी की प्रक्रिया निम्नलिखित चरणों से गुजरते हुए पूर्ण होती है-

1. आरंभिक संपर्क (Initial Contact)
2. मूल्यांकन (assesment)
3. उपचार का लक्ष्य (Goals of Treatment)
4. उपचार का क्रियान्वयन (Implementation of Treatment)
5. समापन, मूल्यांकन एवं अनुवर्तन (Termination, Evaluation and Follow-Up)

थेरेपी की पहली अवस्था आरंभिक संपर्क होती है। इस अवस्था में थेरेपिस्ट आपसी जानकारी प्राप्त करते हुए घनिष्ठ संबंध स्थापित करते हैं। थेरेपिस्ट अपनी योग्यता तथा सेवार्थी अपनी समस्या के सन्दर्भ में बताता है। इसी समय उपचार के लिए लगने वाली अवधि, फीस तथा अन्य सेवाओं के सन्दर्भ में सेवार्थी को जानकारी देना आवश्यक समझा जाता है। आवश्यकता होने पर अन्य विशेषज्ञों की सलाह लेने संबंधी जानकारी का कार्य भी इसी समय में होता है। इस चरण के पश्चात ही सेवार्थी तय करता है कि थेरेपिस्ट से सेवा प्राप्त करनी है कि नहीं। जब सेवार्थी यह तय कर लेता है कि सेवाएं लेनी है तभी दूसरे चरण में प्रवेश कर सकते हैं। दूसरे चरण का मुख्य लक्ष्य होता है सेवार्थी की समस्या को समझना तथा उसके संबंधी तथ्यों का संकलन कर उचित निदान तक पहुँचना। इस लक्ष्य की प्राप्ति के लिए थेरेपिस्ट सेवार्थी का गहराई से अध्ययन करता है। और इसके पश्चात थेरेपिस्ट सेवार्थी के मदद से लक्ष्य को निश्चित कर लेता है। वहां तक पहुँचने के लिए थेरेपिस्ट छोटे-छोटे लक्ष्यों का निर्धारण भी करता है जिन्हें सीमित अवधि में पूरा करना होता है। इस लक्ष्य निर्मिति की प्रक्रिया को उपचार का प्लान भी कहा जाता है। जब यह प्लान तैयार हो जाता है तब थेरेपिस्ट सेवार्थी के सहयोग से इस प्लान को अगले चरण *उपचार का क्रियान्वयन* में क्रियान्वित करता है। उचित थेरेपी, विधि का चुनाव तथा आवश्यकता के अनुसार कार्य का बंटवारा इसी चरण में होता है। इसमें थेरेपिस्ट और सेवार्थी दोनों सहभागी होते हैं। बड़े लक्ष्य तक पहुँचने के लिए निश्चित छोटे-छोटे लक्ष्यों को प्राप्त किया जाता है। इस दौरान उपचार प्रक्रिया का मूल्यांकन जारी रहता है।

जब सेवार्थी अपनी समस्या से निबटने में सक्षम हो जाए या नियोजित उपचार का लक्ष्य प्राप्त हो जाए तब धीरे-धीरे थेरेपिस्ट उपचार प्रक्रिया को समापन चरण की ओर बढ़ाता है। उदाहरण के लिए, सत्रों के बीच की अवधि बढ़ाना, अलगाव (Deatchmnt) प्रक्रिया को उपयोग में लाना आदि। साथ ही इसी दौरान सेवार्थी का मूल्यांकन कर उसको समाज में वापसी के लिए तैयार किया जाता है। इसका अर्थ यह नहीं कि थेरेपिस्ट और सेवार्थी के बीच का संबंध ख़त्म हो गया, बल्कि इसके बाद भी थेरेपिस्ट को सेवार्थी को फ़ॉलो-अप सेवा के अंतर्गत बीच-बीच में सेवा देनी पड़ सकती है। इन फ़ॉलो-अप सत्रों के दौरान पहले के चरणों में दी गयी प्रक्रिया को दोहराया जाता है या सेवार्थी को उन क्रियाकलापों को याद करवाया जाता है जिससे उसे समाज में समायोजित होने में मदद मिल सके। यह क्रिया तब तक जारी रहती है जब तक सेवार्थी समाज में पूरी तरह से समायोजित न हो सके. बावजूद इसके अगर सेवार्थी की समस्या का समाधान नहीं होता है तब दूसरे विशेषज्ञ की आवश्यकता के अनुसार सहायता ली जाती है।

3.8 परामर्श एवं सायकोथेरेपी के बीच संबंध

समाज में बहुत पहले से ही परामर्श प्रक्रिया चलती आ रही है। सदा से समाज में कुछ ऐसे व्यक्ति होते हैं जो दूसरों की समस्याओं को ध्यानपूर्वक सुनकर उनकी समस्याओं, कठिनाईयों को हल करने के लिए सुझाव, सलाह-मशविरा प्रदान करते हैं। हालांकि परामर्श की व्यावसायिक प्रवृत्ति आधुनिक समय की मांग हैं। दूसरी ओर हम देखते हैं कि सायकोथेरेपी का व्यावसायिक विकास लगभग परामर्श के साथ ही हुआ है। पारंपारिक रूप से सायकोथेरेपी अचेतन, आंतरिक एवं वैयक्तिक समस्याओं तथा अंतर्द्वंद्वों से संबंधित गंभीर समस्याओं पर केन्द्रित होती है। सायकोथेरेपी की इस विशेषता के कारण निम्नलिखित आयामों पर परामर्श से अलग दृष्टिकोण के अंतर्गत ज्यादा ध्यान दिया जाता है-

1. वर्तमान की अपेक्षा भूतकाल पर
2. परिवर्तन की अपेक्षा अंतर्दृष्टि पर
3. थेरेपिस्ट के अलगाव पर
4. एक विशेषज्ञ के रूप में थेरेपिस्ट की भूमिका पर

सायकोथेरेपी शब्द का उपयोग सामान्यत: नैदानिक मनोविज्ञान तथा सायक्याट्रिस्ट अपने कार्य तथा सेवार्थी के उपचार का विवरण देने के लिए करते हैं।

सेवार्थी द्वारा प्राप्त की जाने वाली सेवा परामर्श है या सायकोथेरेपी इसका निर्धारण सेवा प्रदाता के व्यवसायिकता के आधार पर तय होता है। सेवा प्रदाता अगर पेशे से परामर्शदाता है तो वह परामर्श कहलाया जाएगा और अगर वह पेशे से सायकोथेरेपिस्ट हैं तो इस प्रक्रिया को सायकोथेरेपी माना जाएगा। परामर्श और सायकोथेरेपी एक ही सैद्धांतिक बुनियाद पर टिका हुआ है, बस इन दोनों की कार्य-प्रकृति और कुछ मामलों में उपकरणों की भिन्नता पायी जाती है। इसके बावजूद यह देखा जाता है कि कुछ परामर्श सिद्धांत थेरेपी के रूप में ही उभरे है तथा कुछ थेरेपिज परामर्श सेटिंग में प्रयुक्त किया जाना आवश्यक होता है। इसलिए यह माना जाता है कि परामर्श और सायकोथेरेपी में अनेक प्रक्रियागत, सैद्धांतिक समानताएं हैं। इसके बावजूद परामर्श और सायकोथेरेपी के अंतर्गत प्रयुक्त सहायता प्रक्रिया के चरणों में इन दोनों के अंतर्संबंधो को देखा जा सकता है।

परामर्श और सायकोथेरेपी के चरणों की एकरूपता के बिंदु निम्नलिखित है-

1. प्रारंभिक संरचना की स्थापना
2. भावपूर्ण संबंध विकसित करना
3. समस्या की पहचान करना
4. स्व-प्रत्यक्षीकरण क्षेत्रों की पहचान और व्यवहारों की खोज
5. पर्यावरणीय निवेश के संग्रह का संभव निर्धारण
6. समस्या समाधान
7. निर्णय लेना
8. क्रिया योजना
9. अनुवर्तन या अतिरिक्त योजनाओं का संभव विकास

इसके बावजूद मनोचिकित्सा और परामर्श के बीच **अंतर करने** के मापदंड निम्नलिखित है-

परामर्श	परामर्श प्रक्रिया के अंतर्गत लगभग 8 से 12 सत्र तथा यह छ: महीने से कम समय वाले होते हैं। परामर्श प्रक्रिया विकासात्मक तथा परिस्थितिजन्य समस्याओं के समाधान पर केन्द्रित होती है।
	मानसिक स्वास्थ्य से संबंधित समस्याओं से ग्रसित रोगियों को बाह्यरोगी प्रतिवेश(Out-patient setting) में तथा स्कूल, कॉलेज जैसे गैर-आवासीय संस्थाओं में परामर्श प्रदान किया जाता है।
सायकोथेरेपी	सायकोथेरेपी में प्राय: 20 से 40 सत्रों तक लगभग छ: महीनों से दो वर्षों तक चलने वाले दीर्घकालीन उपचार के संबंध होते हैं। साथ ही इसमें पुनर्रचनात्मक परिवर्तनों पर बल दिया जाता है।
	मानसिक स्वास्थ्य एवं अन्य स्वास्थ्य से संबंधित बीमार रोगियों को अंत:रोगी प्रतिवेश (In-patient Setting) में आवासीय जगहों पर थेरेपी प्रदान की जाती है।

ज्ञान शांति मैत्री

उक्त मापदंडों के आधार पर परामर्श और सायकोथेरेपी के बीच विभेद किया जाता है। इसके अलावे इन दोनों प्रक्रियाओं के बीच समानता के बिंदु भी है जिन्हें हम प्रक्रियागत रूप से देख चुके हैं।

3.9 सारांश

इसके अलावे आज के समय में विभिन्न योग्यताओं से युक्त चिकित्सकों, उपचारकर्ताओं, कुशल थेरेपिस्ट द्वारा सायकोथेरेपी उपयोग में लाई जाने लगी है जिसमें मनोरोग चिकित्सा, नैदानिक मनोविज्ञान, सलाह मनोविज्ञान, मानसिक स्वास्थ्य संबंधी परामर्श, नैदानिक या मनोरोग संबंधी सामाजिक कार्य, विवाह और परिवार संबंधी मनोचिकित्सा, पुनर्सुधार परामर्श, संगीत मनोचिकित्सा, व्यवसाय संबंधी मनोचिकित्सा, मनोरोग संबंधी परिचर्या, मनोविश्लेषण आदि सम्मिलित हैं।

भारत में हीलिंग सिस्टम में विविधता हैं। यही कारण है कि थेरेपी के रूप में अनेकों देशज विधियों को भी थेरेपिस्ट द्वारा उपयोग में लाया जा रहा है। जैसे; योग, सत्संग आदि इसमें शामिल है। इसके बावजूद थेरेपी शब्द का उपयोग समाज में इतना आम हो गया है कि आज कल कुछ लोगों, व्यवसायिकों द्वारा निर्मित ज्ञान को भी थेरेपी शब्द के आड़ में प्रस्तुत किया जाने लगा है। ऐसे छद्म थेरेपिज की जांच पड़ताल करके ही उसको उपयोग में लाया जाना चाहिए। इसकी जिम्मेदारी सामाजिक कार्यकर्ताओं को एक थेरेपिस्ट या परामर्शदाता के रूप में लेनी होगी।

3.10 बोध प्रश्न

1. परामर्श प्रक्रिया को संक्षेप में समझाएं।
2. सायकोथेरेपी के प्रमुख घटकों की चर्चा करें।
3. सायकोथेरेपी की प्रक्रिया को समझाएं।
4. सायकोथेरेपी एवं परामर्श के बीच के संबंध को स्पष्ट करें।
5. सायकोथेरेपी को प्रभावित करनेवाले कारकों की चर्चा करें।

3.11 संदर्भ एवं अन्य पुस्तकें

- पाण्डे, बा., & सिंह, कि. वि. (2017). *परामर्श के नए आयाम*. जयपुर: रावत पब्लिकेशन.
- मिश्र, प. (2013). *सामाजिक वैयक्तिक सेवा कार्य* (8th ed.). लखनऊ: उत्तर प्रदेश हिंदी संस्थान.
- राय, अ., & अस्थाना, म. (2015). *निर्देशन एवं परामर्श* (2nd पुनर्मुद्रण ed.). दिल्ली: मोतीलाल बनारसीदास.
- McLeod, J. (2003). *An Introduction To Counselling* (3rd Edition ed.). Jaipur: Ravat Publication.

- Merriam-Webster, D. (2017, november 14). *Psychotherapy*. Retrieved november 14, 2017, from merriam-webster.com: https://www.merriam-webster.com/dictionary/psychotherapy
- जोडावत, र. (2015). *मनोविकृतिविज्ञान* . (अ. कुमार, Ed.) कोटा: वर्धमान महावीर खुला विश्वविद्यालय, कोटा.
- *मनोचिकित्सा*. (n.d.). Retrieved 11 13, 2017, from hi.wikipedia.org: https://hi.wikipedia.org/wiki/मनोचिकित्सा

ज्ञान शांति मैत्री

इकाई-4 सामाजिक कार्यकर्ता: एक परामर्शदाता के रूप में

इकाई की रूपरेखा

4.0 उद्देश्य
4.1 प्रस्तावना
4.2 समाज कार्य और परामर्श का संबंध
4.3 समाज कार्य और परामर्श के मूल घटक
4.4 समाज कार्य प्रणालियाँ और परामर्श तकनीक
4.5 सामाजिक कार्यकर्ता एक परामर्शदाता के रूप में
4.6 परामर्शदाता के कर्तव्य
4.7 सारांश
4.8 बोध प्रश्न
4.9 संदर्भ एवं उपयोगी ग्रंथ

4.0 उद्देश्य

इस इकाई के अध्ययन के पश्चात आप -

1. समाज कार्य में परामर्श की भूमिका को समझ सकेंगे
2. परामर्शदाता के रूप में सामाजिक कार्यकर्ता की भूमिका का वर्णन कर सकेंगे
3. वैयक्तिक सेवा कार्य में परामर्श की उपयोगिता को व्याख्यायित कर सकेंगे
4. परामर्शदाता की भूमिका एवं कर्तव्यों को समझा सकेंगे।

ज्ञान शांति मैत्री

4.1 प्रस्तावना

द्वितीय विश्वयुद्ध के बाद विश्वभर में विभिन्न सेवा (Service) प्रदाता समूहों का प्रारंभ हुआ। विश्वयुद्ध जैसे जटिल समय में सामाजिक जीवन को निर्बाध बनाए रखने के लिए विभिन्न ज्ञानशाखाओं ने विभिन्न तरीके से हस्तक्षेप द्वारा पुनर्वास की प्रणाली का विकास किया था। इस समय में विश्व में मानसिक रोगियों की संख्या भी काफी बढ़ गई थी जो कि विश्वयुद्ध का असर था। ऐसे में दो नए विषय, परामर्श और समाज कार्य लगभग एक साथ विश्वपटल पर अपनी पहचान बनाने में सक्षम हो चुके थे। दूसरी ओर हम यह भी देखते हैं कि समाज कार्य की कुछ प्रणालियों के निर्माण को मनोविज्ञान ने काफी प्रभावित किया है।

एक ओर मनोविज्ञान अपने क्रियात्मक स्वरूप में या यूँ कहें कि सामान्यीकरण हेतु निर्देशन एवं परामर्श जैसी प्रणालियों को विकसित करता हैं वहीं समाज कार्य भी अपने व्यावसायिक हितों की पूर्ति के लिए इन प्रणालियों को एक तकनीक के रूप में मान्यता प्रदान कर उसे लोगों तक पहुंचाने का काम करता है। समाज कार्य ख़ास कर वैयक्तिक सेवा कार्य में परामर्श की उपयोगिता को नकारा नहीं जा सकता।

सामाजिक कार्यकर्ता समाज कार्य की विभिन्न प्रणालियों के अंतर्गत सेवार्थियों को सेवा प्रदान करते हुए विभिन्न भूमिकाएं निभाता है जैसे-वैयक्तिक सेवा कार्यकर्ता, सामूहिक कार्यकर्ता, सामुदायिक संगठक इन सब

के साथ-साथ प्रवर्तक, शैक्षिक कार्यकर्ता, ट्रेनर, परामर्शदाता, निर्देशक तथा थेरेपिस्ट आदि भूमिकाओं का वहन करता है। इन सब भूमिकाओं के लिए अलग-अलग ज्ञान, कुशलताओं तथा विशेषज्ञता की आवश्यकता होती है। इसे रूचि के अनुसार कार्यकर्ता चुनता है। परामर्शदाता की भूमिका के लिए जिन कौशलों एवं ज्ञान की आवश्यकता होती है वह समाज कार्य का अभिन्न अंग है क्योंकि परामर्श को छोड़ अन्य विशेषज्ञता के चयन का अधिकार भले ही सामाजिक कार्यकर्ता के पास हो लेकिन परामर्श समाज कार्य की अनिवार्य मांग है, इस योग्यता को संपादित करना सामाजिक कार्यकर्ता के लिए आवश्यक माना जाता है। अत: इस इकाई में हम सामाजिक कार्यकर्ता को एक परामर्शदाता के रूप में कौन-सी भूमिकाएं निभानी पड़ती है और उसके लिए कौन-से कौशलों तथा ज्ञान की आवश्यकता होती है, आदि को समझते हुए सामाजिक कार्यकर्ता को एक परामर्शदाता के रूप में समझने की कोशिश करेंगे।

4.2 समाज कार्य और परामर्श का संबंध

20वीं सदी में उभरे समाज कार्य व्यवसाय का महत्वपूर्ण उद्देश्य लोगों के आरोग्य और जीवन गुणवत्ता को प्राप्त करना तथा उचित मार्गदर्शन करना था। शुरूआती दशकों में समाज कार्य अपने क्रियाकलापों द्वारा मानवीय और सामाजिक प्रस्थिति में सुधार लाने की कोशिश में था। यह इसलिए भी जरूरी था क्योंकि उस समय सामाजिक कार्यकर्ता अपनी पारंपरिक तकनीकों, ज्ञान एवं कुशलताओं द्वारा लोगों की समस्या-निवारण किया करता था। इसमें काफी भिन्नता दिखाई देती थी।

आज समय बदल गया है, नवीन नवाचारों ने मानवीय जीवन को काफी प्रभावित किया। ठीक इसी समय मानवीय जीवन के विभिन्न आयामों को समझने के लिए अनेक विषयों का उभार हुआ। मानवीय समस्याओं की जटिलता को जानने और समझने के लिए व्यक्ति के व्यक्तित्व, भावनाओं, अभिप्रेरणाओं, आवश्यकताओं आदि को समझना अनिवार्य हो गया। समाज कार्य का सुधारात्मक रवैया बदलकर व्यक्ति केन्द्रित हो गया। 1960 के दरम्यान मानवतावादी आन्दोलनों के दबाव ने व्यक्ति केन्द्रित तकनीकों एवं प्रणालियों के उभार का मार्ग खोल दिया। इससे काफी हद तक समाज कार्य प्रभावित हुआ।

शुरूआत के दिनों में समाज कार्य की प्रणाली, सामाजिक वैयक्तिक सेवा कार्य में परामर्श कार्य के विकास का श्रेय बर्था रेनोल्ड्स (1932) को जाता है। आगे धीरे-धीरे सामाजिक संस्थाओं में हुए परिवर्तनों तथा उन परिवर्तनों के कारण उपजी समस्याओं से ग्रसित सेवार्थियों को दी जाने वाली सुविधाओं के स्वरूप एवं प्रकृति के आधार पर परामर्श प्रक्रिया को समाज कार्य विधियों में शामिल किया जाने लगा।

परामर्श का सीधा संबंध व्यक्ति की व्यक्तिगत समस्या के साथ होता है उदाहरण के लिए उसकी मनो-सामाजिक समस्याएं जैसे-चिंता, कुंठा, दबाव, संघर्ष आदि। इन समस्याओं से निपटान के लिए परामर्श का सहयोग समाज कार्य के अंतर्गत सामाजिक कार्यकर्ता द्वारा लिया जाता है। समाज कार्य में परामर्श की स्वीकार्यता के आधार पर समाज कार्य के कुछ विद्वानों ने इसे परिभाषित करने की कोशिश की है जो निम्नलिखित है-

गोर्डन हैमिलटन के अनुसार *"परामर्श, तार्किकता के आधार पर एक व्यक्ति की क्षमताओं तथा इच्छाओं को तर्कपूर्ण बनाने में सहायता प्रदान करता है। परामर्श का प्रमुख उद्देश्य सामाजिक समस्याओं तथा सामाजिक अनुकूलन के लिए चेतन अहं (Conscious Ego) को प्रोत्साहित करना है।"*

आप्टेकर के अनुसार *"परामर्श उस समस्या-समाधान की ओर लक्षित वैयक्तिक सहायता है जिसका समाधान कर सकने में वह व्यक्ति खुद को असमर्थ पाता है और निपुण व्यक्ति से सहयोग की अपेक्षा रखते हुए उससे सहयोग प्राप्त करता है।"*

4.3 समाज कार्य और परामर्श के मूल घटक

समाज कार्य के अंतर्गत सहायता-प्रक्रिया को पूर्ण करने के लिए सेवार्थी, समस्या, संस्था तथा सामाजिक कार्यकर्ता की आवश्यकता होती है। किन्तु परामर्श प्रक्रिया को पूर्ण करने के लिए *सेवार्थी, परामर्शदाता* और *समस्या* इन तीन मूल घटकों की आवश्यकता होती है। इसमें संस्था वैकल्पिक होती है इसके होने न होने से परामर्श प्रक्रिया पर

समाज कार्य के मूल घटक	**परामर्श के मूल घटक**
सेवार्थी	सेवार्थी
समस्या	समस्या
सामाजिक कार्यकर्ता	परामर्शदाता
संस्था	संस्था (वैकल्पिक)

कोई प्रभाव नहीं पड़ता। किन्तु समाज कार्य में संस्था महत्वपूर्ण घटक है, जिसकी संरचना का उपयोग करते हुए सामाजिक कार्यकर्ता संस्था की सेवाओं से सेवार्थी को लाभ दिलाने में सहयोग प्रदान करता है। परामर्श में मूलतः सेवार्थी में अंतर्दृष्टि के विकास पर अधिक ध्यान दिया जाता है। यही कारण है कि परामर्श में समस्या के साथ-साथ व्यक्ति, उसका व्यक्तित्व एवं व्यक्तित्व को प्रभावित करने वाले विभिन्न कारकों का अध्ययन/अन्वेषण किया जाता है। इस मामले में परामर्श समाज कार्य से अलग व्यक्तित्व आधारित तकनीकों का प्रयोग करते दिखाई देता है। साथ ही दोनों में प्रक्रियागत भिन्नताएं भी पाई जाती है।

4.4 समाज कार्य प्रणालियाँ और परामर्श तकनीक

समाज कार्य और परामर्श में सेवार्थी को सेवा, सहयोग दिलाने में प्रमुख भूमिका प्रणालियों और तकनीकों की होती है। समाज कार्य की प्रणालियों और परामर्श तकनीक अपने-अपने सिद्धांतों के आधार पर व्यक्ति को सहयोग देने का कार्य करती है। समाज कार्य मूलत: सेवार्थी की मनोसामाजिक समस्या से जुड़ी सहायता प्रदान करने हेतु छः प्रणालियाँ- वैयक्तिक सेवा कार्य, समूह कार्य, समुदाय संगठन, सामाजिक क्रिया, समाज कल्याण प्रशासन तथा समाज कार्य शोध- उपयोग में लाता है। यहाँ ध्यान में रखना होगा कि समाज कार्य में सेवार्थी से तात्पर्य व्यक्ति, समूह समुदाय होता है, वहीं परामर्श प्रक्रिया में सेवार्थी का अर्थ केवल एक व्यक्ति से है तथा आवश्यकता पड़ने पर उससे संबंधित लोगों का सहयोग लिया जाता है। यही कारण है कि समाज कार्य में परामर्श प्रक्रिया की उपयोगिता वैयक्तिक सेवा कार्य प्रणाली में अधिक मानी जाती है। चूँकि वैयक्तिक सेवा कार्य में एक व्यक्ति को सहायता देते हुए परामर्श प्रक्रिया को उपयोग में लाया जाता है इस कारण वैयक्तिक सेवा कार्य का परामर्श से संबंध बाकी प्रणालियों से अधिक घनिष्ठ होता है।

परामर्श 'आमने सामने की प्रक्रिया' है तथा उसे 'मांगे जाने पर' दिया जाता है। इस कारण व्यक्ति की व्यक्तिगत समस्याओं जैसे-पारिवारिक, कार्यस्थल की समस्याएं, वैवाहिक समायोजन तथा अन्य व्यवहार एवं

समायोजन संबंधी समस्याओं में इस सेवा का लाभ दिया जा सकता है। यही कारण है कि समाज कार्य की अन्य प्रणालियों में परामर्श का संचालन प्रत्यक्ष रूप से नहीं किया जाता।

4.5 सामाजिक कार्यकर्ता एक परामर्शदाता के रूप में

वैयक्तिक सेवा कार्य और परामर्श के बीच के संबंध को समझने के बाद परामर्श में सामाजिक कार्यकर्ता की भूमिका को समझना अनिवार्य बन जाता है। वैसे तो वैयक्तिक सेवा कार्य के अंतर्गत प्रदान की जाने वाली सभी सेवाओं में सामाजिक कार्यकर्ता को परामर्श प्रक्रिया को उपयोग में लाना आवश्यक माना गया है। बावजूद इसके सेवार्थी की समस्या, समस्या का स्वरूप, सेवार्थी का व्यक्तित्व आदि के आधार पर सामाजिक कार्यकर्ता अपनी भूमिका का चयन करता है। सामाजिक कार्यकर्ता एक परामर्शदाता के रूप में विभिन्न भूमिकाओं का निर्वहन करता है जैसे- प्रशिक्षक, शिक्षक, वकालत, प्रवक्ता, सलाहकार, सुविधा-प्रदाता आदि।

बालेश्वर पांडे एवं कीर्ति विक्रम सिंह (2017) अपनी किताब *परामर्श के नए आयाम* में परामर्शदाता की भूमिका को स्पष्ट करते हैं। जिसमें वे ई. सी. विलियम्सन, मायर्स तथा स्टीवार्ट को उद्धृत करते हैं। ई. सी. विलियम्सन ने अपनी किताब *थ्योरी ऑफ़ काउंसलिंग* में परामर्श दाता की भूमिका का वर्णन निम्नलिखित रूप से किया है-

1. छात्रों को उनके व्यवहार में परिवर्तन करने में सहायता देना
2. सेवार्थियों को उनके व्यवहार में परिवर्तन लाने में सहायता करना
3. सूचनाओं का परीक्षण तथा एकत्रीकरण करना
4. परामर्शदाता द्वारा सेवार्थी से समस्या आधारित सवाल करना
5. सेवार्थी को सुझाव देना
6. सूचनाओं की उचित व्याख्या करना
7. सेवार्थी को सूचनाएं प्रदान करना
8. सेवार्थी को सामाजिक परिवेश के बारे में सूचनाएं प्रदान करना
9. मानव व्यवहार के विभिन्न प्रत्यय एवं व्यवहार की गत्यात्मकता के बारे में सूचना प्रदान करना
10. दुविधापूर्ण व्यवहार के बारे में सूचना प्रदान करना
11. दूसरे लोगों के व्यवहारों के उचित कारणों की जानकारी देना
12. निर्णय प्रक्रिया के बारे में सूचना देना
13. परामर्शदाता की एक सलाहकार के रूप में भूमिका
14. सेवार्थी के लिए वकालत या प्रवक्ता की भूमिका
15. सेवार्थी के संबंध में सूचनाओं का संग्रहण
16. प्रतिमान मूलक तथ्यों का संग्रहण

परामर्श प्रक्रिया का प्रमुख उद्देश्य सेवार्थी को उचित व्यवहार सिखाना होता है, जिससे उसका समाज में पुन:समायोजन हो सके। इसके लिए परामर्शदाता उपर्युक्त भूमिकाओं का निर्वहन करता है- व्यवहार परिवर्तन, बातचीत, सुचना संग्रहण, सेवार्थी द्वारा प्रदान सूचनाओं का संग्रहण तथा उसके एकत्रीकरण के

ज्ञान शांति मैत्री

अंतर्गत समस्या की सही व्याख्या, उस व्याख्या पर आधारित सूचनाएं प्रदान करना आदि। कभी-कभी सेवार्थी को समाज के बारे में उचित ज्ञान न होने के कारण सेवार्थी अन्य लोगों के साथ समायोजन स्थापित करने में असमर्थ होता है, ऐसे में उसे सामाजिक परिवेश के बारे में उचित सूचनाएं प्रदान कर सेवार्थी को दूसरे लोगों के व्यवहारों के उचित कारणों की जानकारी देना आदि परामर्शदाता का काम होता है। संघर्ष, दुविधाओं में फंसे सेवार्थी में उचित निर्णय प्रक्रिया का विकास करने की जिम्मेदारी भी परामर्शदाता पर होती है। इसके बावजूद सेवार्थी के व्यवहारों की गत्यात्मकता को समझकर उसे उचित सूचना एवं सलाह देना तथा व्यवहार परिवर्तन में सहयोग देने का कार्य परामर्शदाता करता है।

4.6 परामर्शदाता के कर्तव्य

कुछ विद्वानों ने परामर्शदाता के कर्तव्यों के बारे में चर्चा की है जिसमें मायर्स एवं स्टीवार्ट प्रमुख हैं। इन्होंने परामर्शदाता के कर्तव्यों को दो भागों में, मुख्य कर्तव्य एवं निरुपित कर्तव्य में विभाजित किया है वे निम्नलिखित हैं-

मायर्स द्वारा दिए गए परामर्शदाता के मुख्य कर्तव्य -

1. मीटिंग के समय का निर्धारण
2. बैठक का आयोजन
3. बैठक की तैयारी
4. बैठक आरंभ करना
5. बैठक के अभिलेखों का रखरखाव करना

स्टीवार्ट द्वारा दिए गए स्कूली परामर्शदाता के निरुपित कर्तव्य -

1. सेवार्थी को इस प्रकार सहायता देना कि वह अपने अनुभवों का मूल्य निर्धारित कर सके
2. संबंधित व्यक्ति के बारे में आधारभूत सामग्री का एकत्रीकरण
3. व्यक्तियों की आवश्यकता एवं समस्या को समझना
4. बैठक का आयोजन
5. स्कूल और परिवार तथा स्कूल और क्लास के बीच संबंध बनाना
6. शिक्षा एवं सामाजिक संपर्कों की प्रगति में तालमेल बनाना
7. समूह निर्देशन

ज्ञान शांति मैत्री

4.7 सारांश

मानव अपने जीवन में जन्म से लेकर मृत्यु तक विभिन्न अवस्थाओं से गुजरता है ऐसे में उसे विभिन्न समस्याओं का सामना करना पड़ता है। जिसके कारण उनका समाज में उचित समायोजन नहीं हो पाता या कुसमायोजन होता है। ऐसे में उन व्यक्तियों को पुन: समाज में समायोजित करने के लिए सामाजिक कार्यकर्ता व्यक्ति को सेवाएं प्रदान करता है। यहाँ ध्यान रखना आवश्यक है कि व्यक्ति जब तक सेवा की मांग नहीं करता है तब तक परामर्श को प्रदान नहीं किया जा सकता। ऐसे में निर्देशन प्रणाली का उपयोग किया जा सकता है। परामर्श केवल मांगे जाने पर दी जाने वाली सेवा है।

जैसे कि हमने देखा है वैयक्तिक समाज कार्य और परामर्श का घनिष्ट संबंध है। वैयक्तिक समाज कार्य सेवाओं; स्कूली समाज कार्य, परिवार परामर्श, युगल परामर्श, व्यवसाय परामर्श आदि के अंतर्गत सामाजिक कार्यकर्ता विभिन्न भूमिकाओं जैसे-व्यवसाय परामर्शदाता, शिक्षा परामर्शदाता, पारिवारिक परामर्शदाता आदि भूमिकाओं का निर्वहन करता है। इन भूमिकाओं का निर्वहन करते हुए सामाजिक कार्यकर्ता को परामर्शदाता के विभिन्न कर्तव्यों का पालन करते हुए सेवार्थी को समस्या से निजात पाने में सहयोग प्रदान करना पड़ता है। इस इकाई में हमने समाज कार्य और परामर्श के बीच के संबंध को देखते हुए परामर्शदाता की भूमिकाओं और कर्तव्यों के बारे चर्चा की है। इसके बावजूद सामाजिक कार्यकर्ता अपने कौशलों एवं विशेषज्ञताओं के आधार पर सेवार्थी की समस्या को हल करने का प्रयास करता है। परामर्श की निरंतर चलने वाली प्रक्रिया के अंतर्गत सामाजिक कार्यकर्ता सेवार्थी को सहयोग प्रदान करता हैं।

4.8 बोध प्रश्न

1. समाज कार्य और परामर्श के बीच के संबंध को स्पष्ट करें।
2. परामर्श के मूल घटकों को स्पष्ट करें।
3. वैयक्तिक सेवा कार्य में परामर्श की उपयोगिता को समझाएं।
4. परामर्शदाता की भूमिका का वर्णन करें।
5. परामर्श में परामर्शदाता के कर्तव्यों की चर्चा करें।

4.9 संदर्भ एवं उपयोगी ग्रंथ

The Role and Applicability of Counselling in Social Work Practice: Social Work - Counselling in Social Work. (2015, 03 23). Retrieved 03 15, 2017, from www.ukessays.com: https://www.ukessays.com/essays/socialwork/

पाण्डे, बा., & सिंह, कि. वि. (2017). *परामर्श के नए आयाम*. जयपुर: रावत पब्लिकेशन.

मिश्र, प. (2013). *सामाजिक वैयक्तिक सेवा कार्य* (8th ed.). लखनऊ: उत्तर प्रदेश हिंदी संस्थान.

राय, अ., & अस्थाना, म. (2015). *निर्देशन एवं परामर्श* (2nd पुनर्मुद्रण ed.). दिल्ली: मोतीलाल बनारसीदास.

Bond, T, 2000, *Standards and Ethics for Counselling in Action*, Sage Publications Ltd. London

Corney, R. & Jenkins, R, (Eds.), 1993, *Counselling in General Practice*. London: Routledge

Dryden, W, 2006, *Counselling in a nutshell*, Sage Publications Ltd. London

Dryden, W., & Mytton, J, 1999, *Four Approaches to Counselling and Psychotherapy*, London: Routledge

Feltham, C, 1995, *What Is Counselling? The Promise and Problem of the Talking Therapies*, Sage Publications Ltd. London

Harris, J, 2002, *The Social Work Business* /. London: Routledge

Hornby, G., Hall, C., & Hall, E. (Eds.), 2003, *Counselling Pupils in Schools: Skills and Strategies for Teachers,* London: RoutledgeFalmer

Miller, L, 2005, *Counselling Skills for Social Work*, Sage Publications Ltd. London

Nelson-Jones, R, 2000, *Six key approaches to counselling and therapy*, Sage Publications Ltd. London

Noonan, E, 1983, *Counselling Young People*. London: Tavistock Routledge

Pease, B. & Fook, J. (Eds.), 1999, *Transforming Social Work Practice: Postmodern Critical Perspectives*. London: Routledge

ज्ञान शांति मैत्री

खंड – 3
संचार के मूल तत्व

इकाई 1
संचार : अर्थ एवं अवधारणा

इकाई की रूपरेखा

1.1 उद्देश्य
1.2 प्रस्तावना
1.3 संचार की अवधारणा
1.4 संचार का अर्थ एवं परिभाषा
1.5 संचार शोर
1.6 संचार की विशेषताएं
1.7 संचार के छह ककार
1.8 संचार के प्रकार
1.9 संचार और जनसंचार में अंतर
1.10 सारांश
1.11 बोध प्रश्न
बहुविकल्पीय प्रश्न
लघु उत्तरीय प्रश्न
दीर्घ उत्तरीय प्रश्न
1.12 संदर्भ एवं उपयोगी ग्रंथ

1.1 उद्देश्य

इस इकाई का अध्ययन करने के पश्चात आप -

1. प्रस्तुत इकाई के माध्यम से संचार की अवधारणा को समझना।
2. संचार के अर्थ एवं इसके प्रकारों को जानना।
3. संचार में होने वाले शोर या अवरोध को समझना।
4. संचार की विशेषताओं को जानना।

ज्ञान शांति मैत्री

1.2 प्रस्तावना

मानव जीवन में जीवंतता के लिए संचार का होना आवश्यक ही नहीं, अपितु अपरिहार्य है। पृथ्वी पर संचार का उद्भव मानव सभ्यता के साथ माना जाता है। मनुष्य के पूर्वजों ने जब से समूह में रहना सीखा तभी से संचार का इस्तेमाल हो रहा है, तब खतरों की चेतावनी देने के लिए संदेश के आदान-प्रदान की बड़े पैमाने पर जरूरत महसूस की गई। प्रारंभिक युग का मानव अपनी भाव-भंगिमाओं, व्यवहारजन्य संकेतों और प्रतीक चिन्हों के माध्यम से संचार करने लगा। लिखित इतिहास में सबसे पहले भाषा का औजार विकसित हुआ। इतिहास की शुरुआत में ही अक्षरों का जन्म हुआ। नगाड़ों और अन्य संकेतों की गुंज पहले पहल हवा में प्रसारित हुई। तराशे गए पत्थरों के संकलन से पहली लाइब्रेरी बनी। जैसे ही पहली पुस्तक और दस्तावेज छापाखानों से

छपकर बाहर निकली तो वे सत्ताधारियों का हथियार बन गए, क्रांति के अस्त्र भी बने। अखबार का पन्ना व्यापार व्यवसाय का प्रभावी माध्यम साबित हुई। मुद्रित किताबों से शिक्षा व ज्ञान का अकूत भंडार मिल गया।

16 वीं 17 वीं शताब्दी आते-आते पत्रिकाएं और पोस्टर-पर्चे राजनीति के प्रमुख औजार बन गए। यदि जनसंचार के साधन न होते क्या ब्रिटिश, अमरीकी और फ्रांसीसी क्रांतियां संभव हो पाती? 15 वीं शताब्दी की बड़ी घटना क्या है?, एक ऐसी मशीन का विकास हुआ जिससे हस्तलिपि की 100 प्रतिलिपियां शीघ्रता से तैयार कर सके। इसी तरह 19 वीं शताब्दी में बेल, मार्कोनी जैसे वैज्ञानिकों व अन्य प्रयोगशालाओं ने ऐसी मशीनों का विकास किया जो काफी दूर बैठे लोगों के लिए देखने व सुनने के लिए संभव हुआ। 20वीं शताब्दी में अंतरिक्ष में जगह-जगह लटके उपग्रहों ने पूरी दुनिया को एक गांव में बदल दिया। आधुनिक युग में सूचना प्रौद्योगिकी के क्षेत्र में क्रांतिकारी अनुसंधान के कारण मानव संचार बुलंदी पर पहुंच गया है। वर्तमान में रेडियो, टेलीविजन, सिनेमा, टेलीफोन, मोबाइल, फैक्स, इंटरनेट, ई-मेल, वेब पोर्टल्स, टेलीप्रिन्टर, टेलेक्स, इंटरकॉम, टेलीटैक्स, टेली-कान्फ्रेंसिंग, केबल, सोशल नेटवर्किंग साइट्स, समाचार पत्र, पत्रिकाएं इत्यादि मानव संचार के अत्याधुनिक और बहुचर्चित माध्यम हैं।

1.3 संचार की अवधारणा (Concept of Communication)

संचार एक अनवरत प्रक्रिया है। इसकी उत्पत्ति पृथ्वी पर मानव सभ्यता के साथ हुई है इसलिए कहा जाता है कि संचार और मानव के साथ चोली दामन का रिश्ता है। मानव अपने को स्थापित करने के लिए संदेशों का संप्रेषण (संदेशों का आदान-प्रदान) करना शुरू किया। संचार का स्वरूप ही मानव संचार का आधार है और बिना मानव आधार के संचार संभव नहीं है। दरअसल यह एक मानसिक प्रक्रिया है जिसमें पहला व्यक्ति अपनी बात दूसरे को समझाने की व्यवस्था करता है और दूसरा व्यक्ति उसे समझने के लिए प्रश्न भी करता है और उसे अपने ढंग से समझने का प्रयास करता है। संचार के अतर्गत विचारों का और अर्थों का आदान-प्रदान होता है। मानव के जीवन में संचार की कला सबसे प्राचीन और मौलिक रूप में रही है। आज भी चित्रलिपि गुफाओं, कंदराओं, एजंता एलोरा, एलिफेंटा, खजुराहो की चट्टान, भित्तियों पर जीवंत चित्र संचार के रूप में विद्यमान हैं।

एक बच्चा पैदा होते ही सर्वप्रथम रोने (ध्वनि) की आवाज अपने अस्तित्व की पहचान करा देता है। वह आवाज बता देता है कि 'मैं आ गया हूँ'। अपने जन्म के कुछ ही समय बाद यदा-कदा मुस्करा भी देता है। जैसे-जैसे वह बड़ा होता है उसकी पसंदगी नापसंदगी, उसका गुस्सा, चिल्लाना, भौंह चिढ़ाना, उनके संचार के भावों को व्यक्त करता है। उसकी खुशियां, प्रसन्नता, संतोष, प्रशंसा, संदेह, भय, सुरक्षा और असुरक्षा की भावना सभी संचार के द्वारा व्यक्त होता है। जैसे जैसे वह और बढ़ता है वह अपने आस-पास के वातावरण , माता-पिता, परिजन से भाषा, रीति-रिवाज सीखता है। साथ ही साथ उसकी आंगिक भाषा के द्वारा भी संचार व्यक्त करने लगता है और वह यह उचित संकेतों से अर्थ ग्रहण करता चला जाता है। उसमें इतनी समझ आ जाती है कि वह संकेतों के द्वारा अपनी जरूरतों, आवश्यकताओं, उत्सुकता को विचारों द्वारा व्यक्त करता है इसके बाद वह शाब्दिक, अशाब्दिक और भाषा द्वारा संचार करने लगता है।

एक पुरानी कहावत है कि 'चेहरा हृदय का दर्पण' है। कई मनोवैज्ञानिक शोधों से यह बात प्रमाणित भी हो चुकी है कि व्यक्ति के तात्कालिक सोच और भाव सामान्यतया चेहरे का हर्ष-विषाद, आश्चर्य, उत्तेजना, क्रोध, लज्जा, आशा-निराशा, परेशानी आिद जो कि उसके चेहरे से अभिव्यक्ति करने का दर्पण होता है। मानव में कम से कम छह मूल संवेग- हर्ष-विषाद, आश्चर्य, भय, क्रोध, घृणा आनन-फानन में स्पष्ट रूप से व्यक्त ये संचार के रूप हैं। संचार में संस्पर्श का विशेष महत्व है जैसे प्यार से मुँह चूमना, प्रेमी-प्रेमिका का चुंबन, प्यार से पीठ थपथपाना, पैर छू कर प्रणाम करना, हाथ मिलाना इत्यादि संचार के रूप हैं। त्वचा संदेश प्रसारण और संदेश ग्रहण दोनों ही रूपों में कार्य करती है। संस्पर्शीय संप्रेषण कदाचित पूर्णत: निष्प्रभावी नहीं होता है यह प्रतीकात्मक प्रक्रिया द्वारा केवल सिद्ध या विस्तारित किया जाता है। भाषा के द्वारा संचार हमारे समाज में लगभग 80 प्रतिशत और अशाब्दिक संचार लगभग 20 प्रतिशत होता है। प्रारंभिक युग में मानव अपनी भाव-भंगिमाओं और प्रतीक चिन्हों के माध्यम से संचार करता था, किंतु आधुनिक युग में सूचना प्रौद्योगिकी के क्षेत्र में क्रांतिकारी अनुसंधान के कारण संचार के स्वरूप में तीव्र गति से परिवर्तन आया है। लोग सूचना से यथाशीघ्र अवगत होना चाहते हैं, फलस्वरूप आज रेडियो, टेलीविजन, सिनेमा, टेलीफोन, मोबाइल, इंटरनेट, ई-मेल, वेब साइट्स, टेलीप्रिन्टर, इंटरकॉम, टेली-कान्फ्रेंसिंग, केबल, समाचार पत्र, पत्रिका इत्यादि के माध्यम से सूचनाएं प्राप्त करते हैं।

संचार माध्यमों को अत्याधुनिक बनाने में युद्धों की भूमिका महत्वपूर्ण रही है। 20 वीं शताब्दी के मध्य तक संचार को स्वतंत्र विषय नहीं माना जाता था। राजनीतिशास्त्र, समाजशास्त्र, मानवशास्त्र तथा मनोविज्ञान के विशेषज्ञ अपने विषय की जरूरत के मुताबिक अध्ययन करते थे। हालांकि, इसकी विशिष्टता का एहसास दुनिया को प्रथम विश्व युद्ध (1914-1918) के बाद होने लगा था। एक स्वतंत्र विषय के रूप में इसके अध्ययन की आवश्यकता तब महसूस की गई, जब द्वितीय विश्व युद्ध (1939-1945) के दौरान जर्मनी के तानाशाह शासक हिटलर के प्रचार मंत्री गोयबल्स ने कहना शुरू किया- "किसी झूठ को बार-बार दोहराओ तो सच हो जाता है।" द्वितीय विश्व युद्ध के बाद पूरी दुनिया दो गुटों में विभाजित हो गई थी। एक गुट का साम्राज्यवादी अमेरिका तथा दूसरे गुट का साम्यवादी सोवियत संघ नेतृत्व करने लगा। दोनों महाशक्तियों के बीच विदेशी उपनिवेश से मुक्त होने वाले भारत जैसे कुछ तीसरी दुनिया के देश थे, जिन्हें अपने गुट में शामिल करने के लिए महाशक्तियों के बीच होड़ मची थी। इसके लिए दोनों अपने सैन्य बलों को अत्याधुनिक हथियारों (नाभिकीय व जैविक बमों) तथा खुफिया तंत्रों को अत्याधुनिक संचार माध्यमों से लैस करने में लगे थे। इसी दौरान अमेरिकी प्रतिरक्षा विभाग ने इंटरनेट का आविष्कार किया। सोवियत संघ के विघटन के बाद अमेरिका ने अपने इंटरनेट का दरवाजा दुनिया को उपयोग करने के लिए खोल दिया है, जो वर्तमान समय में सबसे त्वरित गति का संचार माध्यम है।

1.4 संचार का अर्थ एवं परिभाषा (Meaning and Definition of Communication)

संचार शब्द संस्कृत के चर धातु से बना है, जिसका अभिप्राय है- चलना। सार्थक चिन्हों द्वारा सूचनाओं को आदान -प्रदान करने की प्रक्रिया संचार है। किसी सूचना या जानकारी को दूसरों तक पहुँचाना संचार है। जब मनुष्य अपने हाव-भाव, संकेतों और वाणी के माध्यम से सूचनाओं का आदान-प्रदान आपस में करता है तो वह संचार कहलाता है। 'संचार' शब्द अंग्रेजी भाषा के 'communication' शब्द से बना है, जिसकी उत्पत्ति

लैटिन भाषा के 'communis' शब्द से हुई है। 'Communis' का अर्थ होता है–अपने विचारों एवं भावों को दूसरों के साथ बाँटना अथवा किसी माध्यम द्वारा अपने विषय या वस्तु की साझेदारी करना। संचार शब्द संस्कृत के चर धातु से निकला है। जिसका आशय है-चलना। अपने व्यापक अर्थ में इसका प्रयोग चलने, दौड़ने जैसी क्रियाओं के लिए होता है, लेकिन आज संचार शब्द एक तकनीकी शब्द बन चुका है, जो अंग्रेजी के कम्युनिकेशन का हिंदी रूपांतर है। यह शब्द वास्तव में लैटिन भाषा की कम्युनिकेयर क्रिया से निकलकर आया है, जिसका आशय है- टू इंपोर्ट, टू शेयर, टू ट्रांसमिट, टू टॉक टूगेदर confer discourse and consult one with another अर्थात् सूचनाओं के आदान-प्रदान, समुदाय या मनुष्य का एक-दूसरे के साथ व्यवहार, भाईचारा, मैत्रीभाव, साझेदारी, सहभागिता या थोड़े से शब्दों में कहें तो सामान्य भागीदारी युक्त सूचना एवं उसका संप्रेषण। यह लैटिन भाषा के कम्युनिस शब्द से भी जुड़ता है, जिसका अर्थ है to take common, to share, to import, to train, to transfer अर्थात् सामान्यीकरण, सामान्य भागीदारीयुक्त सूचना, संप्रेषण यानी इसे समझ या साझा आधार भी कहा जा सकता है। स्पष्ट शब्दों में संचार एक ऐसा प्रयास है जिसके माध्यम से एक व्यक्ति दूसरे व्यक्ति के विचारों, भावनाओं एवं मनोवृत्तियों में सहभागी होता है। मनुष्य अपने संदेशों को अपने भावों, विचारों, आशयों को माध्यम द्वारा संचरण करते हैं।

संचार एक तकनीकी शब्द है, जो अंग्रेजी के कम्युनिकेशन का हिंदी रूपांतरण है। इसका अर्थ होता है, किसी सूचना या जानकारी को दूसरों तक पहुँचाना। इसके माध्यम से मनुष्य के सामाजिक संबंध बनते और विकसित होते हैं। मानवीय समाज की समस्त प्रक्रिया संचार पर आधारित है। इसके बिना मानव नहीं रह सकता। प्रत्येक मनुष्य अपनी जाग्रतावस्था में संचार करता है, अर्थात बोलने, सुनने, सोचने, देखने, पढ़ने, लिखने या विचार विमर्श में अपना समय लगाता है। जब मनुष्य अपने हावभाव संकेतों और वाणी के माध्यम से सूचनाओं का आदान-प्रदान करता है तो वह संचार कहलाता है।

संचार शब्द का सामान्य अर्थ होता है- किसी सूचना या संदेश को एक व्यक्ति से दूसरे व्यक्ति तक पहुँचाना या संप्रेषित करना। दूसरे शब्दों में संचार का तात्पर्य भाव, विचार, जानकारी अथवा सूचनाओं को दूसरों तक पहुँचाना या स्थनांतरित करना है। सामान्य भाषा में संचार का अर्थ है- एक व्यक्ति से दूसरे व्यक्ति तक सूचना या संदेश को संप्रेषित करना या किसी सूचना या तकनीक को दूसरे तक पहुँचाना।

जब दो या दो से अधिक व्यक्ति आपस में कुछ सार्थक चिह्नों, संकेतों या प्रतीकों के माध्यम से विचारों या भावनाओं का आदान-प्रदान करते हैं तो उसे संचार कहते हैं (Communication refers to the act by one or more persons of sending and receiving messages–distorted by noise-with some effect and some opportunity for feedback)।

संचार का अर्थ एक-दूसरे को जानना, समझना, संबंध बनाना, सूचनाओं का आदान-प्रदान करना आदि से है। इसके माध्यम से मनुष्य अपने विचारों, भावों, अनुभवों को एक-दूसरे से बांटता है। वास्तव में विचारों की अभिव्यक्ति जिज्ञासाओं को परस्पर बांटना ही संचार का मुख्य उद्देश्य है।

संचार मनुष्यों के अलावा पशु पक्षियों में भी होता इसके लिए माध्यम का होना अति आवश्यक है। चिड़िया का चहचहाना, कुत्ते का भोंकना, सर्प का भुंकार मारना, शेर का दहाड़ना, गाय का रंभाना, मेंढ़क का टर-टर करना भी संचार है। भाषा ही संचार का पहला माध्यम है। भाषा के माध्यम से ही हम अपने विचारों को समाज में आदान-प्रदान करते हैं। इसीलिए कहा जा सकता है कि सूचनाओं, विचारों एवं भावनाओं को एक

व्यक्ति से दूसरे व्यक्ति तक भाषा के माध्यम से ही अपने विचारों अनुभवों को समाज के सामने रख कर यथेष्ठ सूचना का प्रेषण करते हैं।

स्पष्टत: संचार एक ऐसा प्रयास है, जिसके माध्यम से एक व्यक्ति दूसरे व्यक्ति के विचारों, भावनाओं एवं मनोवृत्तियों में सहभागी बनता है। संचार का आधार संवाद और संप्रेषण है। उदाहरण स्वरूप जब एक शिक्षक अपने विचारों को पहचानने के लिए भाषण या लेक्चर का सहारा लेता है, तो शिक्षक का उद्देश्य उक्त संचार के अर्थ को मात्र संप्रेषित करना होता है।

विभिन्न विधाओं के विशेषज्ञों ने संचार को परिभाषित करने का प्रयास किया है, लेकिन किसी एक परिभाषा पर सर्वसम्मत नहीं बन सकी है। फिर भी, कुछ प्रचलित परिभाषाएं निम्नलिखित हैं -

एन्साइक्लोपीडिया ऑफ कम्युनिकेशन के अनुसार- "the transfer of thoughts and messages are contrasted with transportation of goods and persons. अर्थात् विचारों या संदेशों के आदान-प्रदान को संचार कहते हैं जो चीजों और व्यक्तियों की ढुलाई या परिवहन से अलग है।"

डैनिस मेक्वैल के अनुसार, ''संचार वह प्रक्रिया है जो समानता को बढ़ाती है (Communication is a process which increases commonality)।''

कॉफीन एण्ड शॉ के शब्दों में, ''संचार आपसी समझ का एक विनिमय है (Communication is an exchange of understanding)।''

ऑक्सफोर्ड डिक्शनरी के अनुसार, "विचारों, जानकारियों आदि का विनिमय, किसी और तक पहुँचाना या बाँटना, चाहे वह लिखित, मौखिक या सांकेतिक हो, संचार है।"

ई.एम. रोजर्स एवं शूमेकर के शब्दों में, "संचार वह प्रक्रिया है जिसमें स्रोत एवं श्रोता के मध्य सूचना संप्रेषण होता है।

लुईस ए. एलेन के अनुसार, "संचार उन सभी क्रियाओं का योग है, जिनके द्वारा एक व्यक्ति दूसरे के साथ समझदारी स्थापित करना चाहता है। संचार अर्थों का एक पुल है। इसमें कहने, सुनने और समझने की एक व्यवस्थित तथा नियमित प्रक्रिया शामिल है। (Communication is the sum of all the things one person does when he wants to create understanding in the mind of another. It involves a systematic and continuous process of telling, listening and understanding.)

रॉबर्ट एंडरसन के अनुसार, "वाणी, लेखन या संकेतों के द्वारा विचारों अभिमतों अथवा सूचना का विनिमय करना संचार कहलाता है।"

चार्ल्स ई. रेडफील्ड (Charles E. Redfield) के अनुसार- "संचार से आशय उस व्यापक क्षेत्र से है, जिसके माध्यम से मनुष्य तथ्यों एवं अभिमतों का आदान-प्रदान करता है। टेलीफोन, तार, रेडियो अथवा इस प्रकार के अन्य तकनीकी साधन संचार नहीं है।" (Communication is the field of human interchange of facts and opinion and not the technologies of telegraph, radio and the like.)

शैनन एवं वीवर के अनुसार, "व्यापक अर्थ में संचार के अंतर्गत वे सभी प्रक्रियाएं सम्मिलित हैं, जिसके द्वारा एक व्यक्ति दिमागी तौर पर दूसरे व्यक्ति को प्रभावित करता है। इसमें न वाचिक एवं लिखित भाषा का प्रयोग होता है, बल्कि मानव व्यवहार के अन्य माध्यम जैसे-संगीत, चित्रकला, नाटक इत्यादि सम्मिलित हैं।"

क्रेच एवं साथियों के अनुसार, "किसी वस्तु के विषय में समान या सहभागी ज्ञान की प्राप्ति के लिए प्रतीकों का उपयोग ही संचार है। यद्यपि मनुष्यों में संचार का महत्वपूर्ण माध्यम भाषा ही है, फिर भी अन्य प्रतीकों का प्रयोग हो सकता है।"

चार्ल्स ई. ऑसगुड (Charles E. Osgood) के अनुसार, "आम तौर पर संचार तब होता है, जब एक सिस्टम या स्रोत किसी दूसरे या गंतव्य को विभिन्न प्रकार के संकेतों के माध्यम से प्रभावित करें।" (In the most general sense, we have communication whenever one system is a source of influence, another the destination by manipulation of alternative signals which can be transmitted.)

बैरलो के अनुसार, "संचार में अर्थ संचारित नहीं होता। इसमें अर्थ न तो संचारित होते हैं और न ही स्थानांतरित होते हैं। केवल संदेश ही संचारित होते हैं तथा संदेश में अर्थ नहीं होते, वे तो संप्रेषक में होते हैं जो संदेश देते हैं।"

लुडबर्ग के अनुसार, "संकेतों द्वारा होने वाला संप्रेषण संचार है।"

लीलैंड ब्राउन के अनुसार, "मनुष्य के कार्यक्षेत्र विचारों व भावनाओं के प्रसारण व आदान-प्रदान की प्रक्रिया संचार है।" (Communicationis the transmission and interchange of facts, ideas, feelings or course of action.)

थीयो हैमान के अनुसार, "संचार वह प्रक्रिया है जिसके द्वारा सूचना व संदेश एक व्यक्ति से दूसरे व्यक्ति तक पहुँचे।"

जे पाल लीगन्स के अनुसार, "संचार एक ऐसी प्रक्रिया है जिसमें दो या दो से अधिक व्यक्ति विचार, तथ्य, भावनाओं का विनिमय करते हैं, ताकि दोनों की समझ बढ़े।"

ए बी शनमुगन के अनुसार, "ज्ञान, अनुभव, संवेदना, विचार और यहाँ तक कि अस्तित्व में होने वाले अभिनव परिवर्तनों की साझेदारी ही संचार है।"

लूमिक और बीगल के अनुसार, "संचार एक प्रक्रिया है, जिसमें सामाजिक व्यवस्था के द्वारा सूचना, निर्णय और निर्देश दिए जाते हैं और यह एक मार्ग है जिसमें ज्ञान, विचारों और दृष्टिकोणों को निर्मित अथवा परिवर्तित किया जाता है।"

मैगीनसन के अनुसार, "संचार समानुभूति की प्रक्रिया या श्रृंखला है, जो कि एक संस्था के सदस्यों को ऊपर से नीचे तक और नीचे से ऊपर तक जोड़ती है।"

विल्बर श्राम के अनुसार, संचार में एक व्यक्ति या व्यक्तियों के समूह के साथ एक ऐक्य या सामान्यतया की स्थापना समाहित होती है।

मैक डेविड और हरारी के अनुसार, "मनोवैज्ञानिक दृष्टि से संचार से तात्पर्य व्यक्तियों के बीच विचारों और अभिव्यक्तियों के आदान-प्रदान से है।"

कैथ डैविस के अनुसार, "एक व्यक्ति से दूसरे व्यक्ति को सूचना भेजने तथा समझने की विधि है। यह आवश्यक तौर पर लोगों में अर्थ का एक पुल है। पुल का प्रयोग करके एक व्यक्ति आराम से गलत समझने की नदी को पार कर सकता है।

पीटर लिटिल के अनुसार- संचार एक ऐसी प्रक्रिया है जिसके माध्यम से सूचना व्यक्तियों या संगठनों के बीच संप्रेषित की जाती है ताकि समझ में वृद्धि हो।"

प्रो. रमेश जैन के शब्दों में, "किसी एक व्यक्ति से दूसरे व्यक्ति को अथवा किसी एक व्यक्ति से कई व्यक्तियों को कुछ सार्थक चिन्हों, संकेतों या प्रतीकों के संप्रेषण से सूचना, जानकारी, ज्ञान या मनोभाव का आदान-प्रदान करना संचार है।"

डॉ. हरिमोहन के अनुसार, "संचार एक जटिल प्रक्रिया का परिणाम है, जिसके द्वारा एक व्यक्ति से दूसरे व्यक्ति के बीच अर्थपूर्ण संदेशों का आदान-प्रदान किया जाता है। ये अर्थपूर्ण संदेश भेजने वाले और संदेश पाने वालों के बीच एक समझदारी या साझेदारी बनाते हैं।"

उपरोक्त परिभाषाओं के आधार पर कहा जा सकता है कि किसी एक व्यक्ति से दूसरे व्यक्ति अथवा समूह को कुछ सार्थक चिह्नों, संकेतों या प्रतीकों के माध्यम से ज्ञान, सूचना, जानकारी व मनोभावों का आदान-प्रदान करना ही संचार है। इस प्रकार संचार एक ऐसी प्रक्रिया है जिसके माध्यम से दो या दो से अधिक व्यक्ति संकेत, चित्र या भाषा के द्वारा अपनी सूचनाओं, भावनाओं, विचारों का आदान-प्रदान करते हैं। संचार की प्रक्रिया के माध्यम से एक व्यक्ति दूसरे के विचारों को समझता है, सहभागी होता है तथा आपसी समझदारी बढ़ाता है। इन परिभाषाओं के आधार पर हमारे सामने तीन बातें उभर कर सामने आती हैं-

1. यह विनिमय या सूचना प्रेषण मौखिक, लिखित अथवा संकेतों में ही हो सकता है लेकिन जिस रूप में हो, वह अर्थपूर्ण संदेश होना चाहिए। बिना अर्थ के यह संदेश व्यर्थ है।
2. संचार एक जटिल प्रक्रिया होती है। इससे हमारे वाक् अवयवों से लेकर अनेक प्रकार की मशीनों का प्रयोग किया जाता है।
3. संदेश अर्थपूर्ण हो और उनका प्रभाव दूसरे लोगों पर होना चाहिए। वे कुछ प्रतिक्रिया दें, यह भी आवश्यक है।

1.5 संचार शोर (Communication Noise)

प्रतिपुष्टि के आधार के लिए संचार में शोर को समझना आवश्यक प्रतीत होता है। संचार प्रक्रिया में दो प्रकार से बाधा होती है -

1. तकनीकी बाधा (Technical Noise)
2. अर्थ संबंधी बाधा (Semantic Noise)

1.5.1 संप्रेषण में अवरोध (Communication Barriers)

1. भाषा संबंधी अवरोध (Language Barriers)
2. उद्देश्यों की बाधा (Barriers of Unsound Objectives)
3. समयाभाव की कठिनाइयाँ (Barriers of shortage of time)
4. भौगोलिक दूरी (Geographical Distance)
5. भ्रम (Confusion)
6. विवेकपूर्ण न सुनना (Barriers of improper Listening)
7. भावनात्मक धारणाएँ (Emotional Attitudes)

8. वैयक्तिक भिन्नता संबंधी बाधाएँ (Barriers of personal differentiation)
9. बौद्धिक स्थिति संबंधी बाधाएँ (Barriers of Mental Status)

संचार का महत्व एवं कार्य

संचार जीवन को अर्थपूर्ण एवं जीवंतता प्रदान करता है। यह व्यक्ति के जीवन का महत्वपूर्ण अंग है। जब संचार होता है तो उसमें सोच, विचार, भावनाओं, जानकारी आदि का आदान-प्रदान होता है। संचार के कार्यों को निम्न रूपों में विभाजित किया है : 1. सूचना, 2. समाजीकरण, 3. प्रेरणा, 4. वाद-विवाद, 5. शिक्षा, 6. सांस्कृतिक प्रसार, 7. मनोरंजन, 8. एकीकरण, 9. सामूहिक सत्ता की अपेक्षा, 10. परिवर्तन, 11. नियंत्रण और 11. नियंत्रण एवं निगराणी। संचार के प्रमुख कार्य निम्नवत हैं -

1. **सूचनात्मक (To Inform) :** संचार का प्रमुख कार्य सूचनाओं का संग्रह और प्रसार करना होता है। जनसंचार माध्यम (समाचार पत्र-पत्रिकाएं, रेडियो, दूरदर्शन, इंटरनेट आदि) के द्वारा समाजोपयोगी सूचनाओं का संप्रेषण किया जाता है। जनमाध्यम घर बैठे ही लोगों को विश्व में होने वाली घटनाओं को तुरंत सूचनाएं देने में सफल है।
2. **प्रेरणात्मक (To Intimate) :** संचार की महत्ता उससे मिलने वाली प्रेरणा के रूप में स्वीकार की जाती है। संचार के द्वारा किसी के बारे में राय बनाने के लिए प्रेरित करते हैं। संचार ही समस्त लक्ष्यों की खोज में व्यक्तिगत या सामुदायिक क्रियाओं को विकसित करता है। समाज के लोग संचार से ही प्रेरणा लेकर अपने लक्ष्यों तक पहुँचते हैं।
3. **शिक्षात्मक (To Educate) :** संचार के माध्यम से समाज में लोगों को शिक्षित किया जाता है। शिक्षा का संचार जितना व्यापक होगा जीवन के विविध चरणों में उतने ही विकास की संभावनाएं बढ़ जाती हैं।
4. **मनोरंजनात्मक (To Entertainment) :** संचार माध्यमों का महत्वपूर्ण कार्य लोगों का मनोरंजन करना भी होता है। जनमाध्यम लेख, वृत्तचित्र, फिल्म, कार्टून, संगीत, कविता, कहानी, नाटक आदि का प्रसारण कर लोगों का मनोरंजन करते हैं।

1.6 संचार की विशेषताएं (Features of Communication)- संचार का उद्देश्य सूचनाओं तथा अनुभवों को परस्पर बांटना, विचारों की अभिव्यक्ति, जिज्ञासाओं का समाधान दूसरे को प्रोत्साहन व परिवर्तन आदि से है। वर्तमान में तकनीकी क्रांति के निर्माण एवं ज्ञानाधारित समाज के लिए संचार का महत्व बढ़ गया है। संचार के लिए निम्न विशेषताओं का होना आवश्यक है-

- संदेश का संप्रेषण एवं विश्लेषण करना।
- संचार उद्देश्यपूर्ण होना चाहिए।
- संचार प्रभावी होने के साथ-साथ सार्थक भी होना चाहिए। दो व्यक्तियों में सार्थकता का निर्माण संप्रेषण से होता है।
- संप्रेषक को पहले सूचना एवं तथ्य को हृदयंगम कर लेना चाहिए।

- संग्राहक पर संदेश के प्रभाव का मूल्यांकन अपेक्षित है।

संचार की अन्य प्रमुख विशेषताएं निम्नवत हैं -

गतिशीलता (mobility): संचार गतिशील होता है, क्योंकि इसमें प्रेषित तथा प्राप्त होने वाले संदेशों का स्वरुप एवं अर्थ परिवर्तनशील होता है। उदाहरण स्वरूप 'कार्य के प्रति निष्ठावान रहें' यह संदेश औद्योगिक प्रतिष्ठान, सरकारी दफ्तरों में कार्यालय कर्मचारी, स्कूल या कॉलेज के छात्रों, शिक्षकों आदि के लिए अलग-अलग अर्थ रखता है।

जटिलता (complexity) : संचार की प्रक्रिया को प्रभावित करने वाले अनेक तत्व होते हैं, जैसे-व्यक्तित्व, पसंद-नापसंद, प्रेरणा, मनोवृत्ति, व्यवहार के तौर -तरीके आदि। चूँकि संचार एक अंत: क्रियात्मक प्रक्रिया है, इसलिए संचार को प्रभावित करने वाले ये कारक तत्व संचार को जटिल बना देते हैं।

क्रमबद्धता (seriality) : संचार एक व्यवस्थित प्रक्रिया है, क्योंकि इसके अंतर्गत व्यक्तियों के बीच आदान-प्रदान होने वाले चर एक-दूसरे पर आश्रित होते हैं।

संचार मौखिक और लिखित दोनों रूपों में होता है। संचार का तीसरा चरण मुद्रण से संबंध रखता है और चौथे चरण को जनसंचार कहा जाता है। वास्तव मे संचार एक प्रक्रिया है, संदेश नहीं। इस प्रक्रिया में एक मनुष्य दूसरे मनुष्य से बातचीत करता है। अपने अनुभवों को बांटता है। संचार ने ही पूरी दुनिया को एक छोटे से गांव में तब्दील कर दिया है। अमेरिकी विद्वान पर्सिंग ने मानव संचार के छह घटक बताए हैं।

1.7 संचार के छह ककार : सफल संचार के लिए छह ककार 5 'W' and 1 'H' (कौन, क्या, किस माध्यम से, किससे, किस प्रभाव के साथ और कैसे) आवश्यक अवयव हैं। किसी संदेश के लिए निम्न प्रश्नों का उत्तर पूछना अति आवश्यक है :

1. कौन (Who) कहता है?

2. क्या (What) कहता है?

3. किस (Which) माध्यम से कहता है?

4. किससे (Whom) कहता है?

5. किस प्रभाव के साथ (With what effect) कहता है?

6. कैसे (How)?

1.8 संचार के प्रकार – संचार मनुष्य जीवन के लिए अपरिहार्य है। संचार की प्रक्रिया श्रोता एवं स्रोत दो प्रमुख तत्वों के बीच संचालित होती है। इन्हीं दो तत्वों को ध्यान में रखकर संचार विशेषज्ञों ने संचार के विभिन्न प्रकारों का निर्धारण किया है। संचार के विभिन्न प्रकारों को निम्न आधारों पर विभाजित किया जा सकता है-

क. संचार प्रक्रिया में भाग लेने वाले व्यक्तियों की संख्या के आधार पर (On the basis of Peoples participation in Communication Process) : 1. अंतः वैयक्तिक संचार (Intra Personal Communication), 2. अंतर वैयक्तिक संचार (Inter Personal Communication), 3. समूह संचार (Group Communication) और 4. जन संचार (Mass Communication)

ज्ञान शांति मैत्री

1. अंत: वैयक्तिक संचार (Intra Personal Communication): यह संचार माध्यमों का आधार स्तंभ है क्योंकि इसके बिना संचार की परिकल्पना नहीं की जा सकती है। मुनष्य एक मनोवैज्ञानिक प्राणी है और म यह संचार मनुष्य के अंत:मन में सक्रिय रहता है। आत्म विवेचन, आत्म विश्लेषण, तर्क-वितर्क, अंतर्द्वन्द्व आदि इस श्रेणी के संचार हैं। वस्तुतः यह एक मनोवैज्ञानिक प्रक्रिया है, जो व्यक्ति के मन के दायरे में ही संपन्न होता है। अपने निजी अनुभवों, विचारों, स्मृतियों के आधार पर यह मन ही मन व्यक्तियों, घटनाओं, प्रभावों के परिणामों का आकलन करता है। स्वचिंतन, ईश्वर या अलौकिक शक्तियों की आराधना अंत:वैयक्तिक संचार का सर्वोत्तम उदाहरण है।

2. अंतर वैयक्तिक संचार (Inter Personal Communication): ऐसा संचार दो या दो से अधिक व्यक्तियों के छोटे से समूह के भीतर घटित होता है इसमें प्रतिपुष्टि तुरंत ही संपन्न हो सकती है। अंत:व्यक्ति संचार की प्रक्रिया में संदेशों का प्रेषण मौखिक भी हो सकता है अथवा स्पर्श या चेहरे के हाव-भाव या शरीर की मुद्राओं से संभव हो सकता है। दूरभाष द्वारा संचार भी अंतवैयक्तिक संचार का ही अंग है, जबकि दोनों व्यक्ति आमने-सामने भी उपस्थित नहीं होते हैं।

छोटे समूहों में अंतर वैयक्तिक संचार तभी संभव है, जब प्रतिपुष्टि तुरंत प्राप्त हो सके। समूह के व्यक्तियों में परस्पर संचार भी इसमें निहित है। परिचर्चाएं गोष्ठियाँ, छोटी दावतें, प्रीतिभोज आदि अवसरों पर की गई चर्चा इसके उदाहरण हैं, पर श्रोताओं की संख्या व सीमित (10 से अधिक नहीं) होनी चाहिए।

3. समूह संचार (Group Communication) : समूह संचार में श्रोता एक व्यक्ति न होकर एकत्रित व्यक्ति समूह होता है। स्त्रोत द्वारा प्रेषित सूचना या संदेश इसी समूह श्रोता के लिए प्रेषित किया जाता है, जिसका हित या उद्देश्य समान होता है और जो संदेश प्राप्ति के लिए ही एक स्थान पर एकत्रित होता है। सभा, गोष्ठी, सम्मेलन, नाटक, वाद-विवाद, संगीत-नृत्य, समूह संचार के ही रूप हैं।

समूह संचार में श्रोता एक व्यक्ति न होकर एकत्रित व्यक्ति समूह होता है। श्रोता द्वारा प्रेषित सूचना या संदेश इसी समूह श्रोता के लिए प्रेषित किया जाता है, जिसका हित या उद्देश्य समान होता है और जो संदेश प्राप्ति के लिए ही एक स्थान पर एकत्रित होता है! सभा, गोष्ठी, सम्मेलन, नाटक, वाद-विवाद, संगीत-नृत्य, समूह संचार के ही रूप हैं।

4. जन संचार (Mass Communication): जनसंचार का संबंध आधुनिक युग से है। पूँजीवाद के उदय के उपरांत विस्तृत बाजारों का उदय हुआ। अपना माल ज्यादा से ज्यादा लोगों तक पहुँचाने और उन्हें खरीदने के लिए यातायात और संचार के साधन पर्याप्त नहीं हो रहे थे। दुनिया के कई देशों में लोकतांत्रिक शासन व्यवस्था कायम होने से लोगों के विचारों को अपने पक्ष में मोड़ने की जरूरत के अनुसार ही जनसंचार के माध्यमों का विकास अति तीव्र गति से हुआ। मीडिया के माध्यमों से द्रुत गति में अपने संदेश को यथाशीघ्र भेजने की व्यवस्था कायम हुई। जनसंचार का अर्थ वह वृहत जन समुदाय है, जिसे संदेश प्रेषित किया जाता है। यह जनसमुदाय समूह के रूप में कहीं एकत्र न होकर बिखरा होता है।

जनसंचार को परिभाषित करते हुए जोसेफ डिविटो ने कहा था, "Mass communication is the process of transmitting informations, ideas and attitudes of many People casually through a machine"

एडविन एमरी के शब्दों में : जनसंचार एक व्यक्ति से दूसरे को सूचनाओं, विचारों और दृष्टिकोणों को संप्रेषित करने की एक कला है। इस संदर्भ में जवरीमल पारिख कहते हैं कि जनसंचार का अर्थ 'जन' के लिए संचार के माध्यम/इसमें जनता का न तो निष्क्रिय भागीदारी होती है और न ही प्रत्येक संप्रेषित संदेश को आसानी से स्वीकार कर लेती बल्कि इन माध्यमों को प्रभावित भी करती है और प्रभावित भी होती है।

जनसंचार के माध्यम - जनसंचार के माध्यम यथा: समाचार पत्र-पत्रिकाएं, रेडियो, टेलीविजन व न्यू मीडिया आदि का मूल उद्देश्य जनता को जानकारियाँ देना, उन्हें शिक्षित बनाना और जनता का मनोरंजन करना है। वर्तमान संदर्भों में भारत में दो प्रकार के जनसंचार माध्यम हैं- एक आधुनिक माध्यम और दूसरा लोकमाध्यम। इनका विभाजन निम्न प्रकार से किया जा सकता है-

1. मुद्रित माध्यम- समाचारपत्र, पत्रिकाएँ, पुस्तक व विज्ञापन आदि।
2. घोषित शब्द- आकाशवाणी।
3. दृश्य-श्रव्य माध्यम- दूरदर्शन, वीडियो और फिल्म।
4. लोक माध्यम- लोकगीत, लोक नृत्य, नौटंकी, कठपुतली, सामूहिक गान आदि।
5. मौखिक- व्यक्तिगत संपर्क, सार्वजनिक सभाएँ आदि।
6. क्षेत्रीय प्रसार- फिल्म, सिनेमा, स्लाइडें, न्योन साइन, मुद्रित माध्यम आदि।

1.9 संचार और जनसंचार में अंतर (Difference between Communication and Mass Communication)

1. संचार (Communication) की व्याप्ति सीमित है, जबकि जनसंचार (Mass Communication) की व्याप्ति में फैलाव है।
2. संचार में कौशल विकास की महत्ता पर बल नहीं दिया जाता है, जबकि जनसंचार में कौशल विकास पर बल दिया जाता है।
3. संचार में मनुष्य-मनुष्य ही इनकोडर और डीकोडर होता है, जबकि जनसंचार में व्यक्ति इनकोडर और यंत्र डीकोडर होता है।
4. संचार में संदेश को समझनेवाला समझा रहा है तो हम कम्यूनिकेट कर देते हैं, जबकि जनसंचार में हमारे समाज में व्याप्त है उसे ही व्यवहार में लाया जाता है।
5. संचार का फैलाव कम है इसलिए इसके द्वारा सामाजिक क्षेत्रों में कम परिवर्तन लाता है, जबकि जनसंचार में मीडिया (यथा : समाचार पत्र, पत्रिकाएं, टीवी, रेडियो, इंटरनेट आदि) के द्वारा हमारे सामाजिक व्यवहार में प्रभाव पड़ता है। इसमें बहुलता के द्वारा जैसे खान-पान, रहन-सहन, पहनावे, बोलचाल, फैशन आदि के द्वारा समाज में प्रभाव पड़ता है। इसके द्वारा पूरी दुनिया 'वैश्विक ग्राम' में तब्दील हो गई है।
6. संचार पूरे समाज को विशेषकर पूँजीपतियों (बाजारवाद) के शिकंजे से बाहर है, जबकि जनसंचार पूँजीपतियों व बाजारवाद के तिलस्मी जाल में जकड़े है।
7. संचार मानवीय है जबकि जनसंचार टेक्नोलॉजी द्वारा संचालित है।

ज्ञान शांति मैत्री

ख. भाषा के आधार पर (On the basis of Language) : संचार के लिए संदेश की संरचना में भाषा का महत्वपूर्ण स्थान है। संदेश के आधार पर संचार का वर्गीकरण निम्न प्रकार से किया जा सकता है-

1. शाब्दिक / भाषिक संचार (Verbal Communication) : मानव की सबसे बड़ी विशेषता उसकी शाब्दिक भाषा (Verbal Communication) है। शाब्दिक संचार मूल रूप से भाषा पर आधारित होता है। भाषा मनुष्य की बुद्धि को प्रखर बनाती है और साथ ही परस्पर सहयोग एवं संचार को भी परिष्कृत करती है। शब्द भाषा से अभिव्यक्ति सरल, सुगम एवं बोधगम्य हो जाती है। शाब्दिक संचार को दो वर्गों में रखा गया है- अ. मौखिक संचार (Oral Communication) ब. लिखित संचार (Written Communication)।

अ. मौखिक संचार (Oral Communication) – जब कोई संवाद एवं सूचना मौखिक उच्चारण से प्रेषित की जाए तो उसे मौखिक संचार कहा जाता है। मौखिक संचार से आशय, संप्रेषक द्वारा किसी सूचना या संदेश को मुख से उच्चारण कर श्रोता तक प्रेषित करने से है। इसमें दो पक्ष- संप्रेषक और संदेश प्राप्तकर्ता के बीच मौखिक संवाद होता है। लॉरेन्स एप्पल के मतानुसार, "मौखिक शब्दों द्वारा पारस्परिक संप्रेषण संदेशवाहन का सर्वश्रेष्ठ कला है।" इसलिए कहा जाता है कि मौखिक संचार ही वह सूत्र है जो मानवीय संबंधों को स्थापित करता है। घर, सार्वजनिक स्थल आदि में व्यक्ति मौखिक संचार के माध्यम से अपने संबंधों को प्रगाढ़ बनाता है। प्रभावी मौखिक संचार के लिए फ्रांसिस जे.बरगिन ने सात तत्व बताए हैं जिनको Seven 'C' के नाम से पुकारते हैं जो इस प्रकार हैं- Clear (स्पष्ट), Complete (पूर्ण), Concise (संक्षिप्त), Correct (शुद्ध), Candid (सरल), Concrete (वास्तविक) और Courteous (सौहार्दपूर्ण)। मौखिक संचार मानवीय जीवन में सहज एवं सरल होता है, जिसे हम निम्न रूपों में समझ सकते हैं- 1. सूक्ष्म संचार (Micro Communication) एवं 2. स्थूल संचार (Macro Communication)।

1. सूक्ष्म संचार (Micro Communication) – संचार प्रक्रिया में जब संकेतों की सहायता से भावाभिव्यक्ति हो तो उसे सूक्ष्म संचार कहते हैं और इसमें भाषा का प्रयोग नहीं होता है, बल्कि संकेतों के माध्यम से ही संचार की प्रक्रिया पूरी होती है।

2. स्थूल संचार (Macro Communication) – संचार प्रकिया में जब भाषा का प्रयोग संचार के लिए किया जाता है तब अभिव्यक्ति या संदेश प्रेषण का भौतिक स्वरूप स्थूल होता है।

मौखिक संचार के माध्यम (Medium of Oral Communication) – मौखिक संचार के स्थूल रूप से कई माध्यम हैं- क. आमने-सामने वार्तालाप, ख. दूरभाष पर वार्तालाप, ग. रेडियो प्रसारण, घ. वाद-विवाद, च. संगोष्ठी, छ. भाषण, ज. विचार गोष्ठियां आदि।

मौखिक संचार के लाभ (Advantage of Oral Communication) – मौखिक संचार के निम्न लाभ हैं-

1. शीघ्र संचार – मौखिक संचार से धन एवं समय की बचत होती है क्योंकि संदेश का संप्रेषण मौखिक रूप से हो जाता है, इससे शीघ्र संचार होता है।
2. प्रभावी संचार – मौखिक संचार अधिक प्रभावशाली होता है। उच्चारण के ढ़ंग, अभिव्यक्ति की भाव-भंगिमा एवं हाव-भाव द्वारा संदेशों को प्रभावशाली तरीके से रखा जा सकता है।
3. अविलंब प्रतिपुष्टि – मौखिक संचार में संदेश आसानी से समझ में आ जाता है। यदि संदेश में कोई संशय होता है तो उसका तुरंत निराकरण भी कर लिया जाता है।

4. कार्यक्षमता में वृद्धि – मौखिक संचार द्वारा व्यक्तियों के वाक्चातुर्य, व्यावहारिक कुशलता आदि का विकास होता है फलस्वरूप कार्यक्षमता में वृद्धि होती है।

मौखिक संचार के दोष (Disadvantage of Oral Communication) – मौखिक संचार के निम्न दोष हैं-

1. सीमित क्षेत्र – मौखिक संचार में संप्रेषक और श्रोता दोनों का एक साथ उपस्थित रहना आवश्यक है। यदि श्रोता उपस्थित नहीं है तो मौखिक संचार व्यर्थ हो जाता है साथ ही संप्रेषक को संदेश के बारे में सोचने का कम समय मिलता है जिससे कभी-कभी संदेश प्रभावी नहीं होता है। स्थिरता के मामले में श्रोता के स्मरण शक्ति पर निर्भर करता है। यदि श्रोता को संदेश के कुछ समय बाद पुन: समझने की आवश्यकता पड़ती है तो यह प्राय: निरुत्तर हो जाती है।
2. वैधानिक मान्यता का अभाव- मौखिक संचार भविष्य में विवाद उत्पन्न होने की स्थिति में प्रमाणस्वरूप प्रस्तुत नहीं किया जा सकता है। अतएव मौखिक संचार का कोई स्थायी महत्व नहीं होता है और इसकी कोई वैधानिक मान्यता नहीं होती है।

ब. लिखित संचार (Written Communication) – जब संदेशों का आदान-प्रदान लिखित रूप में होता है तो उसे लिखित संचार कहा जाता है। लिखित संचार से आशय ऐसी सूचनाओं से है, जो मौखिक न हो वरन् लिखकर दी गई हो। विस्तृत संदेशों या स्थायी तथा भविष्य में संदर्भ के रूप में रखे जाने वाले संदेशों का लिखित संचार किया जाता है। जब संदेशों को एक साथ विविध स्थलों पर अनेक व्यक्तियों को संचारित करना हो तो लिखित संचार उपयोगी होता है। लिखित संचार में मुद्रित एवं टंकित संप्रेषण भी शामिल है। लिखित संचार में पत्र, टेलीग्राम, बुलेटिन, परिपत्र, ज्ञापन, प्रतिवेदन, सूचना, प्रश्नावली, पुस्तकें, समाचार पत्र, पत्रिकाएं, हैण्डबिल, चार्ट, ई-मेल, सीडी, डीवीडी एवं लिखित शब्द शामिल हैं। लिखित संचार स्पष्ट, पूर्ण एवं बोधगम्य होना चाहिए।

लिखित संचार के लाभ (Advantage of Written Communication) –

1. पहुँच व्यापक – लिखित संचार का क्षेत्र व्यापक है। इसमें संप्रेषक और ग्रहीता दोनों एक साथ उपस्थित नहीं होते। दूरस्थ क्षेत्रों में जहाँ संचार के आधुनिक साधन उपलब्ध नहीं हैं लिखित संचार आसानी से पहुँच जाता है। एक ही समय में कई व्यक्तियों के साथ सुगमता से लिखित संचार में अभिव्यक्ति की जा सकती है।
2. वैधानिक एवं स्थायी रिकार्ड – लिखित संचार का साक्ष्य वैधानिक रूप से मान्य है। इसे भविष्य में रिकार्ड के लिए संरक्षित किया जा सकता है। हम जानते हैं कि लिखित या लिपिबद्ध रिकार्ड के बिना ज्ञान के भंडार नष्ट हो जाते हैं। लिखित माध्यम ज्ञान के भंडार को जीवित रखने में लाभदायी होता है, क्योंकि ज्ञान के हर पहलू को पीढ़ी दर पीढ़ी स्मरण शक्ति द्वारा जीवित व जारी रखना संभव नहीं है।
3. क्रियान्वयन में सुविधा – लिखित संचार में संदेश प्रापक को संदेश पर विचार करने तथा विश्लेषण करने का पर्याप्त समय तथा अवसर रहता है, जिससे क्रियान्वयन की सही प्रक्रिया का निर्धारण किया जा सके।

लिखित संचार के दोष (Disadvantage of Written Communication) –

1. महँगी प्रक्रिया – लिखित संचार में प्रत्येक सूचना चाहे वह छोटी हो या बड़ी लिखित/मुद्रित रूप में ही प्रस्तुत की जाती है और इस प्रक्रिया में बहुत अधिक समय तथा धन का अपव्यय होता है। इसके विपरीत आमने-सामने की जाने वाली वार्तालाप में समय तथा धन दोनों की बचत होती है।
2. समय लगाने वाली प्रक्रिया – लिखित संचार अनावश्यक समय लगाने वाली प्रक्रिया है, क्योंकि हम जानते हैं कि हरेक छोटी-मोटी बात को हमेशा लिखित रूप में संप्रेषित करना संभव नहीं होता। यदि लिखित संदेश में यदि कोई बात छूट जाए तो पुन: लिखकर प्रेषित करने में अतिरिक्त समय लगता है और फलस्वरूप संदेश पहुँचने में विलंब होता है।
3. व्याख्या में कठिनाई – कभी-कभी लिखित संचार संप्रेषक की भावनाओं को प्रकट करने में असमर्थ हो जाता है।

2. अशाब्दिक/निर्भाषिक संचार (Non-Verbal Communication) – यह संचार की एक ऐसी प्रक्रिया है, जिसके अंतर्गत हम अपने विचारों, भावनाओं तथा अभिव्यक्तियों को बिना शब्दों के प्रयोग किए व्यक्त करते हैं। जब संदेश शब्दों के अलावा चिह्नों, लक्षणों या संकेतों तथा सूचित चिह्नों के द्वारा संचारित हो तो उसे अशाब्दिक संचार कहा जाता है। रेमण्ड एवं जान के शब्दों में, "संचार के वे सभी माध्यम अशाब्दिक संचार में शामिल होते हैं जो न तो लिखित और न ही मौखिक शब्दों में व्यक्त हैं। (All Communications that involve neither written nor spoken words but occurs without use of words are termed as non-verbal communication.)" प्रारंभिक दौर में मनुष्य ने अशाब्दिक संचार के तहत भावों को अभिव्यक्त किया। भाव संचार की एक ऐसी स्थिति होती है, जिसे हम सूक्ष्म और स्थूल स्थिति से भी अलग 'अनिर्वचनीय' कहते हैं। इसे संचारविद् प्रवीण दीक्षित ने व्याख्यायित किया है कि, "एक रूपवती षोडसी प्रेमिका और उसके प्रेमी के मध्य केवल संकेतों के माध्यम से व्यक्त होने वाली भाव प्रवणता और प्रणयानुभूति को जब संसार के बड़े-बड़े महाकवियों की वाणी भी यथावत व्यक्त करने में समर्थ नहीं होती तो और कौन समर्थ होगा? कल्पना कीजिए कि आप किसी बस या ट्रेन से यात्रा कर रहे हैं। आप के आगे की सीट पर एक युवती दो वर्ष के एक स्वस्थ्य सुंदर बालक को गोद में लिए बैठी है। आप उसे देखकर आनंदित होते हैं। आपके चेहरे के आनंद भाव को देखकर अपनी माता की गोद में बैठा नन्हा शिशु आनंदानुभूति से भर जाता है। वह बार-बार आप की ओर देखकर मुस्कुराता है और बार-बार अपनी माता के आंचल में मुँह छुपा लेता है। आंचल से मुँह निकालकर आप की ओर देखने और मुस्कराने में बालक की जो भावना सक्रिय होती है, भला आप उसको कौन सी संज्ञा देंगे? उस बाल की निश्छल निर्लिप्त और सुमधुर मुस्कान में अंतर्निहित अनिर्वचनीय संवाद को भला कौन सा माध्यम शब्द और भाषा के बंधन में बांध सकता है" (प्रवीण दीक्षित की पुस्तक 'जनमाध्यम और पत्रकारिता', पृ. 1 व 2 से उद्धृत)। इस प्रकार के कई उदाहरण हमारे समक्ष दृष्टिगोचर होते हैं। अशाब्दिक संचार की परंपरा प्राचीन काल से ही हमारे समाज में विद्यमान है और आज भी किसी-न-किसी रूप में प्रयुक्त हो रही है। शारीरिक भंगिमाएं, मुख आभा मंडल की विविध अभिव्यक्तियाँ, दृष्टि आदि से अशाब्दिक संचार किया जाता है। अशाब्दिक संचार को सामान्यत: तीन श्रेणियों में विभक्त किया जा सकता है- क. संकेत भाषा, ख. क्रिया भाषा ग. वस्तु भाषा।

क. संकेत भाषा - इसके तहत वे सभी विधाएं सन्निहित हैं, जिसमें शब्द, अंक तथा विराम चिह्नों का प्रयोग खास वस्तुओं की ओर इंगित करते हैं।

ज्ञान शांति मैत्री

ख. क्रिया भाषा – इसमें वे सभी अंग संचार के अंतर्गत आते हैं, जिन्हें केवल संकेतों के रूप में प्रयोग नहीं किया जाता। जैसे हमारा व्यवहार, हँसी-विषाद आदि से संबंधित भाव-भंगिमाएं हमारी भावनाओं को बहुत हद तक अभिव्यक्त कर देते हैं। इसी प्रकार आँखों की भाषा से भी बहुत कुछ अभिव्यक्त हो जाता है।
ग. वस्तु भाषा – कार्टून, फोटो आदि वस्तु भाषा के ही रूप हैं।

ग. औपचारिकता के आधार पर (On the basis formalities) – औपचारिकता के आधार पर संचार को दो रूपों में विभक्त किया जा सकता है- 1. औपचारिक संचार 2. अनौपचारिक संचार।

1. औपचारिक संचार – औपचारिक व्यवस्था के अंतर्गत संचार संदेश का संचरण निश्चित रूप में नियोजित किया जाता है। औपचारिक संचार दो रूपों–लिखित और मौखिक रूप में होता है, लेकिन यह किसी संस्था में व्यक्ति के पद या स्तर के आधार पर होता है। औपचारिक संचार में संस्था के अधिकारी अपने पद या स्थिति के आधार पर विविध नियमों तथा कार्यविधियों की औपचारिकताओं में बँधे रहते हुए अपने अधीनस्थों को आवश्यक निर्देश देने की स्थिति में संचार होता है, जिसका एक रूप उचित माध्यम द्वारा संचार के रूप में सक्रियता बताता है।

2. अनौपचारिक संचार – अनौपचारिक संचार व्यवस्था संप्रेषक और प्रापक के मध्य अनौपचारिक संबंधों पर निर्भर करती है। अनौपचारिक संचार अभिव्यक्ति भावभंगिमाओं, संकेतों, हाव-भावों या मूकता के रूप में व्यक्तिगत या समूह स्तर पर हो सकता है।

घ. संचार प्रवाह के आधार पर (On the basis of Communication flow) – इस आधार पर संचार के दो रूप हैं- 1. क्षैतिज संचार और 2. समतल संचार।

1. क्षैतिज संचार – क्षैतिज संचार के रूप होते हैं- अधोमुखी और ऊर्ध्वमुखी। अधोमुखी संचार के तहत कोई संदेश उच्चवर्गीय प्रशासक की ओर से अधीनस्थों तक पहुँचाया जाता है। अधोमुखी संचार के ठीक विपरीत ऊर्ध्वमुखी संचार के अंतर्गत जब संदेश का आदान-प्रदान नीचे से ऊपर की ओर होता है।

2. समतल संचार – जब दो समान स्तरीय व्यक्तियों के मध्य विचार-विमर्श अथवा सूचनाओं का आदान-प्रदान होता है तो उसे समतलीय संचार कहते हैं।

ङ. माध्यम के आधार पर (On the basis of Medium)- माध्यम के आधार पर संचार को निम्नलिखित वर्गों में विभक्त किया जा सकता है- 1. श्रव्य संचार, 2. दृश्य संचार और 3. श्रव्य-दृश्य संचार।

1. श्रव्य संचार – संचार के ऐसे माध्यम, जिसके द्वारा श्रोता केवल संदेश को सुन सकता है, श्रव्य संचार कहलाता है। इसमें रेडियो, टेलीविजन, संगोष्ठी, नेताओं के भाषण, लोकगीत आदि शामिल हैं।

2. दृश्य संचार – ऐसे माध्यम से प्रापक देखकर संदेश को समझ सकता है, उसे दृश्य संचार कहते हैं। इसमें होर्डिंग्स, कार्टून, फोटोग्राफ्स आदि शामिल हैं।

3. श्रव्य–दृश्य संचार – श्रव्य–दृश्य संचार माध्यम से प्रापक अपने नेत्रों और कानों का उपयोग करके संदेश प्राप्त करता है। इन माध्यमों में टेलीविजन, फिल्म, रंगमंच आदि आते हैं। आधुनिक युग में संचार के नवीन माध्यमों में संदेश देखा और सुना जा सकता है। इसके लिए उपग्रह संचार, इंटरनेट आदि प्रणाली सुलभ हैं।

पंरपरागत संचार (Traditional Communication)

लोकगीत, लोक नाट्य आदि की परंपरागत विधाएं सदियों से संचार के रूप में सशक्त माध्यम रही है। समाज के धार्मिक और सांस्कृतिक पक्ष से संबंद्ध पारंपरिक संचार माध्यमों की विषय वस्तु लोगों के लिए सहज ग्राह्य

ज्ञान शांति मैत्री

होती है। साथ ही उनमें लोगों को प्रभावित करने की क्षमता भी अधिक होती है। भारत के प्रसिद्ध शास्त्रीय नृत्य कत्थक, भारत नाट्यम, मणिपुरी और कथकली भी पारंपरिक संचार माध्यम हैं, जिसे कलाकार प्राचीन कथाओं में निहित संदेशों को संगीत वाद्य और अभिनय मुद्राओं के साथ प्रस्तुत करते हैं।

सहजता, सुगमता और सुलभता के चलते पारंपरिक संचार माध्यम सामाजिक जागरूकता के सही संवाहक होते हैं। इसकी सार्थकता आजादी के आंदोलन के समय सिद्ध हुई जब गाँवों के सड़कों पर निकलने वाली प्रभात फेरियाँ और पथ नाट्यों ने जनांदोलन को तीव्र किया। सामाजिक समस्याओं जैसे बाल विवाह, बहु विवाह, जनसंख्या विस्फोट, निरक्षरता, मदिरापान, सांप्रदायिक विद्वेष, कुपोषण, अस्वच्छता, जाति प्रथा, दहेज प्रथा आदि के विरोध की बातें जितने पारंपरिक संचार माध्यमों के द्वारा व्यक्त किया जा सकता वैसा अन्य माध्यमों द्वारा नहीं किया जा सकता है। यूनेस्को की रिपोर्ट में भी परंपरागत संचार को समकालीन मुद्दों के प्रति जागरूक बनाने में सक्षम पाया गया। पारंपरिक संचार की प्रमुख विशेषता उनकी स्रोत से निकटता, स्थानीयता और विश्वसनीयता है। प्रापक भी बोलचाल भी भाषा में, रोजमर्रा की जिंदगी के माहौल में कही गई बात को समझ लेता है। स्वास्थ्य विभाग, शिक्षा विभाग, समाज कल्याण विभाग आदि, ने अपनी नई योजनाओं को पारंपरिक माध्यमों में प्रसारित किया और सकारात्मक परिणाम भी उन्हें मिला। आज के रेडियो और दूरदर्शन जैसे जनसंचार माध्यम पारंपरिक संचार के ही विकसित रूप हैं।

1.13 सारांश

मनुष्य आदिमानव था तो अनेक प्रकार की समान अनुभूतियों को संकेतों में एक-दूसरे से बाँटता था। धीरे-धीरे भाषाओं और लिपियों का विकास हुआ और संचार एक व्यवस्थित रूप में संभव हुआ। इससे अधिकांश अन्तरवैयक्तिक संचार ही संभव हुआ। उद्योग और व्यापार के क्षेत्र में जब तकनीक का विकास हुआ, नए-नए आविष्कार हुए तो संचार ने भी नए आयामों की तरफ कदम बढाए। अब तक गांव या कबीले तक सीमित संचार व्यापक क्षेत्र और व्यापक जनसमुदाय तक विस्तार पा गया। छापेखाने के आविष्कार से शुरू हुई संचार क्रांति फोटोग्राफी, टेलीग्राफी, रेडियो और टेलीविज़न के आविष्कारों से समृद्ध होते हुए इंटरनेट तक पहुँच गई है। इंटरनेट से पहले रेडियो और टेलीविज़न ने ही वास्तविक संचार क्रांति को जन्म दिया। अनेक प्रकार की आधुनिक प्रसारण तकनीकों के आविष्कार के कारण रेडियो और टेलीविजन ने सारी दुनिया को एक इकाई के रूप में तब्दील कर दिया। सूचनाओं और विचारों का आदान-प्रदान सबसे सशक्त रूप में द्रुत गति से संभव हुआ। रेडियो ने जहाँ आवाज़ के माध्यम से सूचनाओं को पंख लगाए वहीं टेलीविजन ने इस संचार को दृश्यात्मकता से जोड़कर आँखें प्रदान की।

संचार कई रूपों में हमारे सामने आता है यथा : अंत:वैयक्तिक संचार, अंतर वैयक्तिक संचार, समूह संचार और जनसंचार। सभी तरह के संचार के रूपों की बुनियाद वैयक्तिक संचार है। संचार प्रक्रिया में चार घटक अनिवार्य होते हैं, पहला- संप्रेषक, दूसरा- संदेश, तीसरा माध्यम और चौथा- प्राप्तकर्ता। दरअसल संचार से आशय है सूचनाओं का संप्रेषण। अर्थात् जब कोई संदेश एक व्यक्ति से दूसरे व्यक्ति तक एक स्थान से दूसरे स्थान तक और एक समय से दूसरे समय में संप्रेषित किया जाता है तो वह संचार और जो संचार बहुत बड़े पैमाने पर बहुत बड़ी संख्या तक पहुँचाने के लिए उत्पादित किया जाता है तो वह जनसंचार कहलाता है। जनसंचार का संबंध पूँजीवादी तथा लोकतांत्रिक परिवर्तनों की श्रेणी में संबद्ध है।

1.11 बोध प्रश्न

बहुविकल्पीय प्रश्न

प्रश्न 1 : 'कम्यूनिकेशन' शब्द की उत्पत्ति किस भाषा से हुई है?

क. लैटिन ख. अंग्रेजी

ग. पुर्जगीज घ. फ्रेंच उत्तर : क.

प्रश्न 2 : संचार से आशय है?

क. सूचनाओं का संप्रेषण ख. माध्यम का होना

ग. प्रतिपुष्टि का नहीं मिलना घ. विचारों को संकेत चिह्न में बदलना उत्तर : क.

प्रश्न 3 : बस में दो व्यक्तियों द्वारा की जाने वाली वार्तालाप संचार की किस श्रेणी में आता है?

क. अंत:वैयक्तिक संचार ख. अंतर वैयक्तिक संचार

ग. समूह संचार घ. जनसंचार उत्तर : ख.

प्रश्न 4 : संचार प्रक्रिया के लिए निम्न में से कौन सा आवश्यक अवयव नहीं है?

क. प्रेषक ख. संदेश

ग. प्रभाव घ. प्राप्तकर्ता उत्तर : ग.

प्रश्न 5 : वर्ग कक्षा में अध्यापक द्वारा कराया गया अध्यापन को कौन सा संचार कहा जाएगा?

क. अंत:वैयक्तिक संचार ख. अंतर वैयक्तिक संचार

ग. समूह संचार घ. जनसंचार उत्तर : ग.

लघु उत्तरीय प्रश्न

प्रश्न 1 : संचार के आशय को स्पष्ट कीजिए।

प्रश्न 2 : अंत: वैयक्तिक संचार और अंतर वैयक्तिक संचार में अंतर स्पष्ट कीजिए।

प्रश्न 3 : संचार और जनसंचार के अंतर को स्पष्ट कीजिए।

दीर्घ उत्तरीय प्रश्न

प्रश्न 1 : संचार से आप क्या समझते हैं, विभिन्न विद्वानों द्वारा दिए गए संचार की परिभाषा पर प्रकाश डालिए?

प्रश्न 2 : संचार के प्रकारों को स्पष्ट करते हुए संचार की विशेषताएं बताएं?

व्यवहार

कार्य 1 : संचार की आवश्यकता मनुष्य को कब और क्यों पड़ती है? आज के समय की तुलना उस समय से कीजिए जब संचार के आधुनिक साधन उपलब्ध नहीं थे। आपकी दृष्टि में कौन-सा समय जनहित में ज्यादा बेहतर माना जा सकता है और क्यों?

कठिन शब्दावली

ज्ञान शांति मैत्री

- **संदेश** : संचार प्रक्रिया की विषय वस्तु संदेश है। संदेश में सूचना, विचार, संकेत, दृष्टिकोण, निर्देश, सुझाव आदि शामिल हैं। संदेश यानी वह बात जो एक से दूसरे तक प्रेषित की जाती है। यह लिखित, मौखिक, शाब्दिक अथवा सांकेतिक होता है जो किसी भी रूप में हो सकती है, ध्वनि के रूप में, दृश्य के रूप में, संकेतों के रूपों में या अन्य किसी रूप में।
- **प्रतिपुष्टि** : संचार प्रकिया को सफल बनाने में प्रतिपुष्टि एक प्रमुख अवयव है। संप्रेषक को संदेश प्रसारित करने के पश्चात यह जानना आवश्यक है कि संग्राहकों ने उसे ग्रहण किया या नहीं। संचारित संदेश उपयोगी हो रहा है अथवा नहीं, प्रतिपुष्टि कहलाता है।

1.12 उपयोगी ग्रंथ सूची

- कुलश्रेष्ठ, वि. एवं जैन, हं., (2005). 'जनसंचार शोध प्रविधियां', जयपुर: माया प्रकाशन।
- सिंह, श्रीकान्त, (2001). 'संप्रेषण: प्रतिरूप एवं सिद्धांत', फैजाबाद : भारती पब्लिशर्स एण्ड डिस्ट्रीब्यूटर्स।
- सरदाना, चंद्रकांता एवं मेहता, कृ.शि., '*जनसंचार कल, आज और कल*', दिल्ली: ज्ञान गंगा।
- Kumar, keval j., (2004). '*Mass Communication in India*', Mumbai: Jaico Publishing House.
- Rayudu, C.S., (2008). '*Communication*', Mumbai: Himalaya Publishing House.
- जैन, रमेश, (2003). '*जनसंचार एवं पत्रकारिता*', जयपुर: मंगलदीप पब्लिकेशन्स।
- Desai, Amit, 'Journalism *and Mass Communication*', New Delhi: Reference Press.
- बघेल, संजय सिंह, 'संचार, समाज और साहित्य', गाजियाबाद : के.एल. पचौरी प्रकाशन।

ज्ञान शांति मैत्री

इकाई 2
संचार के चरण एवं प्रारूप

इकाई की रूपरेखा

2.1. उद्देश्य
2.2 प्रस्तावना
2.3. संचार प्रक्रिया
2.4. संचार के तत्व
2.5. संचार मॉडल
2.6. संचार प्रतिरूप के कार्य
2.7. संचार के बुनियादी प्रतिरूप
- **2.7.1. अरस्तू का संचार प्रतिरूप**
- **2.7.2. हेराल्ड डी. लासवेल का प्रतिरूप**
- **2.7.3. ब्रोडॉक का प्रतिरूप**
- **2.7.4. शैनन एवं वीवर का प्रतिरूप**
- **2.7.5. डी. फ्ल्योर का प्रतिरूप**
- **2.7.6. सी.ई. ऑसगुड एवं विल्बर श्रेम का प्रतिरूप**
- **2.7.7. विल्बर श्रेम के अन्य प्रतिरूप**
- **2.7.8. विल्बर श्रेम के अन्य प्रतिरूप**
- **2.7.9. जार्ज गर्बनर का सामान्य संचार प्रतिरूप**
- **2.7.10. गर्बनर का शाब्दिक प्रतिरूप**
- **2.7.11. गर्बनर का रेखीय का प्रतिरूप**
- **2.7.12. जार्ज गर्बनर का 1964 का प्रतिरूप**

2.8. सारांश
2.9. बोध प्रश्न
- **2.9.1. बहुविकल्पीय**
- **2.9.2. लघु उत्तरीय**
- **2.9.3. दीर्घ उत्तरीय**
- **2.9.4. व्यवहार**

2.10. कठिन शब्दावली
2.11. संदर्भ ग्रंथ

2.1. उद्देश्य

इस इकाई के उद्देश्य निम्नवत हैं -

5. प्रस्तुत इकाई के माध्यम से संचार प्रक्रिया को समझना।

6. संचार के बुनियादी तत्वों को जानना।
7. संचार प्रतिरूप के कार्यों को जानना।
8. संचार के बुनियादी प्रतिरूप को समझना।

2.2 प्रस्तावना

संचार मनुष्य के लिए अनिवार्य तत्व है। इस इकाई में हम देखेंगे कि विशेषज्ञों ने संचार को परिभाषित कर उसके किस स्वरूप या प्रतिरूप को प्रतिपादित किया। संचार के इन स्वरूपों या प्रतिरूपों को बुनियादी या आधारभूत माना जाता है। संचार के प्रतिरूपों में सरल रूप से समूची प्रक्रिया और यथार्थ का विवरण निहित होता है। इन प्रतिरूपों द्वारा संचार संरचना, उनके अंदर निहित संघटकों को उल्लेखित किया जाता है और साथ ही इनके बीच में सक्रिय संबंधों का भी उल्लेख होता है। प्रस्तुत इकाई में संचार प्रक्रिया, संचार के बुनियादी तत्व, संचार प्रतिरूप तथा उनके कार्य एवं प्रतिरूपों पर प्रकाश डाला गया है।

2.3. संचार प्रक्रिया

संचार प्रक्रिया में संदेश भेजने वाला प्रेषक कहलाता है और संदेश प्राप्त करने वाला प्राप्तकर्ता। दोनों के बीच एक माध्यम होता है जिसके सहयोग से प्रेषक का संदेश प्राप्तकर्ता तक पहुँचता है। प्राप्तकर्ता के दिल दिमाग पर प्रभाव डालता है, जिससे सामाजिक सरोकारों में बदलाव आता है। देश तथा विदेश में मनुष्य की दस्तकें बढ़ती है इसलिए संचार प्रक्रिया का पहला चरण प्रेषक होता है। इसे इनकोडिंग भी कहते हैं। इनकोडिंग के बाद विचार सार्थक संदेश के रूप में ढल जाता है। जब प्राप्तकर्ता अपने मस्तिक में उक्त संदेश को ढाल लेता है तो संचार की भाषा में डीकोडिंग कहते हैं। डीकोडिंग के बाद प्राप्तकर्ता उस संदेश का अर्थ समझता है। वह अपनी प्रतिक्रिया प्रेषक को भेजता है तो उस प्रक्रिया को फीडबैक कहते हैं। संचार प्रक्रिया को निम्न प्रकार समझा जा सकता है –

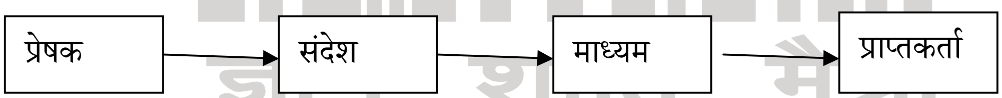

अर्थात् प्रेषक और प्राप्तकर्ता के बीच में संदेश और माध्यम से ही संचार प्रक्रिया संपन्न होती है लेकिन इसमें कुछ बातों का विचार और आवश्यक है। सफल संचार वही है जिसमें प्रेषक द्वारा दिए गए संदेश का वही अर्थ प्राप्तकर्ता प्राप्त कर सके, जो प्रेषक प्रेषित करना चाहता है। इसके लिए संदेश की इनकोडिंग और डीकोडिंग को समझना आवश्यक है। इसका अर्थ यह है कि संचार के लिए प्रेषक और प्राप्तकर्ता के बीच समान अनुभूति या समझ का होना आवश्यक है। यह समान समझ की सबसे अधिक संभावना भाषा और शब्दों द्वारा संभव है। उदाहरण के तौर पर प्रेषक किसी वस्तु को 'कंप्यूटर' कहता है तो प्राप्तकर्ता के लिए उसके शब्द का अर्थ समझने के लिए पहले इस कोड अर्थात भाषा से परिचय जरूरी है। इनकोडिंग और डीकोडिंग के आधार पर ही संचार के इतिहास को भी समझा जा सकता है।

संचार प्रक्रिया निम्नलिखित कार्यों को संपन्न करती हैं –

- सूचना या जानकारी देना ।
- संचार से जुड़े व्यक्तियों को प्रेरित और प्रभावित करना।

• संचार व्यक्तियों समाजों और देशों के बीच संबंध स्थापित करता है।
• संचार विभिन्न तथ्यों, विचारों मसलों पर व्यापक विचार-विमर्श करने में सहायक होता है।
• मनुष्यों का मनोरंजन करना संचार का एक महत्वपूर्ण कार्य है।
• संचार राष्ट्र की आर्थिक व औद्योगिक उन्नति में सहायक होता है।

2.4. संचार के तत्व

संचारविद् जे. पाल लीगन्स ने संचार प्रक्रिया के निम्नलिखित तत्वों का उल्लेख किया है -

1. संप्रेषक या संचारक या स्त्रोत (Communicator or Source)
2. संदेश (Message or Content)
3. संचार माध्यम या संचार-सरणि (Communication Channel)
4. संकेतीकरण (Encoding)
5. संकेतवाचन (Decoding)
6. संचार बाधा (Communication Noise)
7. संग्राहक/प्रापक अथवा प्राप्तकर्ता (Receiver)
8. प्रतिपुष्टि (Feedback)

1. **संप्रेषक या संचारक या स्त्रोत** (Communicator or Source)- संचार प्रक्रिया को क्रियान्वित करने का मुख्य कार्य संप्रेषक का होता है। यह संदेशों की पूर्ण जानकारी रखता है। डेविड बर्लो ने संप्रेषक में चार गुणों (संचार की निपुणता, मनोवृत्ति, ज्ञान का स्तर और सामाजिक-सांस्कृतिक आचरण) का होना आवश्यक बतलाया है। संप्रेषक संदेश के परिणाम और उसके मूल्यांकन, संचार-प्रक्रिया, संचार-माध्यमों के प्रति सतर्क रहता है।

2. **संदेश** (Message or Content)– संचारक बोलकर, लिखकर, चित्र बनाकर या संकेत से अपने विचारों या सूचना को श्रोता से कहता है वही संदेश है। संदेश ऐसी सूचना है जिसे संचारक द्वारा ग्रहण करने, समझने, स्वीकृत करने या उसपर क्रियान्वयन करना है। सामान्यतया संदेश के संचरण करते समय संप्रेषक को निम्नलिखित बातों पर ध्यान देना आवश्यक होता है– संदेश-संकेत (कोड), विषय-वस्तु (कंटेंट) और संदेश प्रतिपादन (ट्रीटमेंट)।

कोई भी संप्रेषक संदेश को प्रभावकारी बनाने के लिए निम्नलिखित प्रश्नों के उत्तर भलीभाँति जान लेता है कि- (क.) वह कौन सा संदेश है? जो सर्वाधिक महत्वपूर्ण है, (ख.) वह सबसे कौन सी विधि है? जिसके द्वारा संदेश का प्रतिवेदन किया जा सकता है, (ग.) संदेश को पहुँचाने के लिए आप क्यों प्रयास करते हैं? और (घ.) कौन-कौन से संचार माध्यम हैं? जिसके द्वारा दर्शक-श्रोता-पाठक तक संदेश सरलता से पहुँचाया जा सकता है?

3. **संचार माध्यम या संचार-सरणि** (Communication Channel)– संप्रेषक और प्राप्तकर्ता के बीच सेतु का काम करने वाला संचार माध्यम कहलाता है अर्थात् संदेश को जिस माध्यम के द्वारा संप्रेषक अपने लक्षित समूह/व्यक्ति तक पहुँचाता है वही संचार माध्यम है। माध्यम या चैनल कुछ भी हो सकता है, जैसे- आपसी बातचीत, पत्राचार, सभाएं या बैठकें, टेलीफोन, टेलीविजन, रेडियो, समाचार-पत्र, पुस्तकें, वीडियो फिल्म, ई-मेल आदि। प्रभावी संचार माध्यम ही संदेश को प्रभावी बनाता है। मार्शल मैकलूहान ने तो यहाँ तक

ज्ञान शांति मैत्री

कहा है कि 'माध्यम ही संदेश है'। यह सामान्यतया संकेतों और संदेशों को रूपांतरित करने का उपकरण होता है। संचार माध्यम का चयन करते समय संचारक को निम्न बिंदुओं पर ध्यान देना आवश्यक है- '1. संदेश के तत्व और उसके स्वभाव को ध्यान में रखकर संचार माध्यम का चयन, 2. दर्शक-श्रोता-पाठक (दश्रोपा) तक सरलता से पहुँचने वाले माध्यम का चयन, 3. दश्रोपा को एक से अधिक ज्ञानेंद्रियों के प्रयोग करने के लिए बाध्य करने वाला माध्यम, 4. संचारक को उचित समय पर माध्यम की उपलब्धता और प्रभावशीलता के आधार पर माध्यम पर कम व्यय का निर्धारण' (जनसंचार शोध प्रविधियाँ, विजय कुलश्रेष्ठ एवं हंसा जैन, पृ. 20)।

4. **संकेतीकरण** (Encoding)– संप्रेषक जब भावों या विचारों को संकेत के रूप में परिवर्तित करके रचनात्मक विधि से प्राप्तकर्ता तक पहुँचाता है तो इसे संकेतीकरण कहा जाता है, जैसे– शब्दों, संकेतों, भाव भंगिमाओं आदि के द्वारा संदेशों को प्रसारित करना। जे. पाल लीगन्स के अनुसार, "शब्द संचार प्रक्रिया का मुख्य माध्यम है किंतु शब्द तभी तक प्रभावशाली होते हैं जब इनके साथ संकेत, चित्र आदि का प्रयोग हो। संकेत, संचार प्रक्रिया में सहायक होने के साथ ही साथ उसे प्रभावशाली भी बनाते हैं।" कोई भी शब्द तब तक सार्थक नहीं होता, जब तक कि उसका सही अर्थ नहीं ज्ञात हो। शब्द संकेत इस दिशा में सहायक होते हैं। अर्थ की अज्ञानता के कारण अच्छे से अच्छे शब्द निरर्थक तथा अनुपयोगी हो जाते हैं। संचार प्रक्रिया को सार्थक बनाने के लिए ऐसे संकेतों का चयन आवश्यक है जो विचारों को सही रूप में व्यक्त कर सकें और जिनका अर्थ संप्रेषक तथा ग्रहीता दोनों एक समान ही समझते हों। संप्रेषक सूचना देने से पहले संदेश को अपने ढंग से परिवर्तित करता है, जिसे संकेतीकरण कहते हैं।

5. **संकेतवाचन** (Decoding)– संकेतवाचन से आशय है- प्रापक द्वारा संदेश को अपने मस्तिष्क में उसी अर्थ में ढाल लेना। संकेतवाचन प्रापक की समझ क्षमता पर निर्भर करता है। ग्रहीता संदेश को अपने ढंग से समझता और ग्रहण करता है, इस प्रकिया को संकेतवाचन कहा जाता है। यदि प्रापक की योग्यता तथा क्षमता में कोई कमी होगी तो वांछित संदेश का अर्थ भी अपेक्षित रूप में प्राप्त नहीं होगा। इनकोडिंग और डीकोडिंग में पूरी तरह सामंजस्य नहीं होता। सामंजस्य की स्थिति संप्रेषक और प्रापक के गुणात्मक स्तर पर निर्भर करती है और यह सामंजस्य संप्रेषण इनकोडर और ग्रहीता डिकोडर के मानकीकरण की स्थिति पर सामंजस्य की स्थिति निर्भर करती है।

6. **संचार बाधा या शोर** (Communication Noise)– संदेश जब किन्हीं अड़चनों, बाधाओं और अवरोधों के कारण गंतव्य (प्रापक) तक नहीं पहुँच पाता है, तो उसे संचार बाधा/शोर कहते हैं। किसी सभा में सभी श्रोताओं का एक साथ समय पर उपस्थित न होना, संदेश को पढ़ने में सक्षम न होना, संचार माध्यमों के संचालन में तकनीकी त्रुटि आदि कई ऐसे तत्व हैं जिनसे संचार बाधा की स्थिति पैदा होती है और संदेश प्रापक को प्राप्त नहीं होता। जब संचार प्रक्रिया में बाधा उत्पन्न होती है तो संप्रेषक और प्रापक दोनों को परेशानी होती है। संचार प्रक्रिया में दो प्रकार से बाधा होती है -

1. तकनीकी बाधा (Technical Noise) और 2. अर्थ संबंधी बाधा (Semantic Noise)। इतना ही नहीं संचार प्रक्रिया में शोर उत्पन्न होने के विविध कारणों में शामिल हैं- भाषा संबंधी अवरोध (Language Barriers), उद्देश्यों की बाधा (Barriers of Unsound Objectives), समयाभाव की कठिनाइयाँ (Barriers of shortage of time), भौगोलिक दूरी (Geographical Distance), भ्रम (Confusion),

ज्ञान शांति मैत्री

विवेकपूर्ण न सुनना (Barriers of improper Listening), भावनात्मक धारणाएँ (Emotional Attitudes), वैयक्तिक भिन्नता संबंधी बाधाएँ (Barriers of personal differentiation), बौद्धिक स्थिति संबंधी बाधाएँ (Barriers of Mental Status) आदि।

7. **संग्राहक/प्रापक अथवा प्राप्तकर्ता** (Receiver)– संदेश को प्राप्त करने वाला संग्राहक या प्रापक कहलाता है। प्रापक सर्वज्ञ अथवा अल्पज्ञ हो सकता है। वह धैर्यपूर्वक सुनने वाला अथवा स्पष्ट रूप से सोचने समझने वाला या भ्रमित श्रोता हो सकता है। वह पुरुष, स्त्री, युवक, वृद्ध आदि के अलावा विविध समुदायों के रूप में भी हो सकता है और वह व्यक्ति तथा समूह या जनसमूह के रूप में भी हो सकता है। सफल संचार प्रक्रिया के लिए संग्राहक को निम्न गुणों का होना आवश्यक है।

क. उसे संदेश को धैर्य पूर्वक ग्रहण करना चाहिए।

ख. संदेश को स्पष्ट रूप से ग्रहण कर उसका अनुपालन करना चाहिए।

ग. विश्वनीय सूचनाओं का चयन करने की सामर्थ्य होनी चाहिए।

संचार प्रक्रिया के लिए संग्राहक जितना ही संचारक के समरूप होता है, संचार उतना ही प्रभावी होता है और प्रापक संचारक की भाँति ही संचार-प्रक्रिया में महत्वपूर्ण स्थान रखता है। इस प्रकार से यह कहा जा सकता है कि संचारक को श्रोता के रूप में भी जानते हैं। श्रोता वर्ग से आशय संचार माध्यमों से सूचना प्राप्त करने वाले लोगों से है। श्रोता दो प्रकार के होते हैं- (क.) प्राथमिक श्रोता और (ख.) द्वितीयक श्रोता। प्राथमिक श्रोता से आशय है, जो प्रेषित संदेश सीधे ग्रहण करता है, जैसे- आकाशवाणी या दूरदर्शन का श्रोता या दर्शक और द्वितीयक श्रोता से आशय है, ये जन माध्यमों से संदेश सीधे ग्रहण नहीं करते बल्कि जनमत नेता द्वारा संदेश को प्राप्त करते हैं। जैसे आकाशवाणी या दूरदर्शन के श्रोता या दर्शक द्वारा सुने गए व्यक्ति से संदेश को सुनना। यहाँ यह स्पष्ट है कि सामान्य रूप से संग्राहक अपनी अभिरुचि के अनुरूप सूचनाओं को ग्रहण करते हैं।

8. प्रतिपुष्टि/प्रतिक्रिया (Feedback)– संचार प्रक्रिया को सफल बनाने में प्रतिपुष्टि एक आवश्यक अवयव है। प्रतिपुष्टि द्विमार्गी प्रक्रिया है अर्थात् संग्राहक से संप्रेषक तक और संप्रेषक से संग्राहक तक। संप्रेषक को संदेश प्रसारित करने के पश्चात् यह जानना जरूरी है कि संग्राहक ने उसे ग्रहण किया अथवा नहीं। प्रापक जब संदेश प्राप्त या ग्रहण करता है, तब संदेश पर उसकी प्रतिक्रिया किसी न किसी रूप में प्रत्यक्षत: दिखाई पड़ती है। उसकी अभिव्यक्ति ही प्रतिपुष्टि कहलाती है। संचार प्रक्रिया की स्थिरता तथा संतुलन के लिए प्रतिपुष्टि बहुत ही आवश्यक है। संचार के स्तर पर वह शीघ्र ही प्राप्त की जा सकती है जबकि जनसंचार के स्तर पर प्रतिपुष्टि मिलने में पर्याप्त समय लगता है। प्रत्येक जनसंचार माध्यम दर्शक-श्रोता-पाठक की प्रतिक्रिया अपने कार्यक्रमों तथा संप्रेषित सूचनाओं के प्रति जानना चाहता है। दर्शक-श्रोता-पाठक की प्रतिक्रिया के आधार पर कार्यक्रमों एवं संप्रेषित सूचना संप्रेषण के प्रारूपों को परिवर्तित एवं परिवर्धित किया जाता है। सूचना की प्रवृत्ति के आधार पर यह सामान्यतया दो प्रकार की होती है- (क.) सकारात्मक- इसमें श्रोता/प्रापक सकारात्मक प्रतिपुष्टि/प्रतिक्रिया देता है। (ख.) नकारात्मक – इसमें श्रोता नकारात्मक प्रतिक्रिया व्यक्त करता है।

2.5 संचार मॉडल

संचार मॉडल (न्यादर्श/प्रतिरूप) संचार प्रक्रिया की वह क्रमगत प्रस्तुति है, जिसके द्वारा यह समझाने का प्रयास किया जाता है कि संचार के विविध अवयव किस प्रकार कार्य करते हैं और आपस में कैसे एक-दूसरे से संबद्ध रहते हैं अथवा संचार प्रक्रिया को रेखाचित्रों या चित्रों द्वारा व्यक्त करना ही संचार मॉडल कहा जाता है।

डयूस्क (Deutsh) ने 1952 ई. में संचार प्रतिरूप को परिभाषित करते हुए लिखा कि प्रतिरूप प्रतीकों एवं नियमों को क्रियान्वित करने वाली एक संरचना है जो एक अस्तित्व संरचना या प्रक्रिया में समान गुणों वाले बिंदुओं के संग्रह को प्रासंगिक रूप में प्रस्तुत करती है।

2.6. संचार प्रतिरूप के कार्य (Functions of Communication Model)

प्रत्येक संप्रेषण प्रक्रिया को हम देख नहीं सकते, उसे स्पर्श भी नहीं कर सकते किंतु समझ सकते हैं। समझने की प्रक्रिया में न्यादर्श सहायक होता है।

डयूस्क ने न्यादर्श के चार कार्य बतलाए हैं— 1. संगठित करना (Organising), 2. स्वतः अन्वेषण (Heuristic),

3. अनुमान योग्य बनाना (Predictivity), 4. मापन संबंधी कार्य (Measuring Function)।

1. संगठित करना (Organising)– प्रतिरूप तथ्यों और आंकड़ों को एकत्रित कर एक व्यवस्थित रूप में सँजोता है यानी किस तत्व को कहाँ, किस रूप में रखना है तथा उन तत्वों के आपसी संबंधों का निर्धारण करना और उसे उसी रूप में प्रस्तुत करने का कार्य इसके द्वारा संपन्न होता है।

2. स्वतः अन्वेषण (Heuristic)– प्रतिरूप के माध्यम से नए तथ्यों की खोज करने में सहायता मिलती है।

3. अनुमान योग्य बनाना (Predictivity)– प्रतिरूप के माध्यम से भविष्य की संभावित परिस्थितियों का अनुमान भी लगाया जाता है। यदि प्रतिरूप में स्पष्ट व्याख्या की गई है तो ही अनुमान लगाने की संभावना बनती है।

4. मापन संबंधी कार्य (Measuring Function)– विषय के स्तर के निर्धारण में प्रतिरूप की महत्वपूर्ण भूमिका होती है। इसके लिए दो मुख्य आधार हैं- 1. गुणवत्ता और 2. संख्यात्मक प्रस्तुतीकरण।

2.7. संचार के बुनियादी प्रतिरूप (Basic Models of Communication)

2.7.1. अरस्तू का संचार प्रतिरूप (Communication model of Aristotle)

अरस्तू का संचार प्रतिरूप प्राचीन भारतीय जनसंचार प्रक्रिया के अनुरूप है। उस समय संत एवं उपदेशक देशाटन करके लोगों को धार्मिक संदेश देते थे, जो उपदेशात्मक होते थे। इन संदेशों का व्यक्ति एवं समूह के बीच आदान-प्रदान होता था। अरस्तू ने संचार का जो प्रारूप प्रस्तुत किया जिसमें मुख्यत: पाँच तत्व मौजूद हैं :

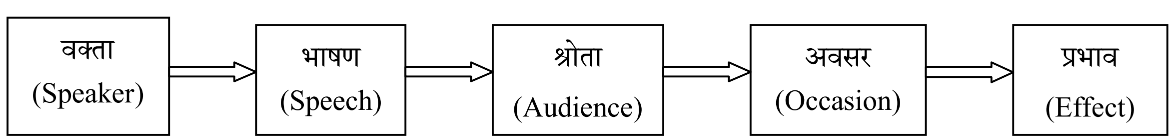

1. वक्ता (Speaker)
2. भाषण (Speech)

ज्ञान शांति मैत्री

3. श्रोता (Audience)
4. अवसर (Occasion)
5. प्रभाव (Effect)

अरस्तू के संचार प्रतिरूप के माध्यम से यह स्पष्ट है कि वक्ता अर्थात् संदेश प्रसारित करने वाला अपना संदेश मौखिक रूप से भाषण द्वारा किसी विशेष अवसर पर प्रसारित करता था। उस संदेश का श्रोता पर प्रभाव पड़ता था। श्रोता किसी विशेष अवसर पर ही एकत्र होते थे।

2.7.2. हेराल्ड डी. लासवेल का प्रतिरूप– संचारविद् हेराल्ड डी. लासवेल द्वारा 1948 ई. में प्रतिपादित प्रतिरूप को शाब्दिक न्यादर्श (Verbal Communication) के रूप में भी जाना जाता है। यह सूचना चालन एवं संचार प्रक्रिया पर आधारित है। द्वितीय विश्वयुद्ध के दौरान अमेरिका में प्रोपेगेण्डा के महत्व का अध्ययन किया गया। अमेरिकी व्यवस्था को देखकर लगने लगा कि वहाँ भी किसी हिटलर जैसे व्यक्ति का प्रभुत्व कायम हो जाएगा क्योंकि हिटलर भी लोकतांत्रिक दल के माध्यम से तानाशाह शासक बना था ठीक उसी प्रकार की परिस्थितियाँ अमेरिका में भी निर्मित हो रही थी।

उसी दौरान वहाँ शीतयुद्ध भी आरंभ हो चुका था और यह अध्ययन किया जा रहा था कि प्रोपेगेण्डा क्या है, कैसे होता है, कौन करता है? लासवेल इस अध्ययन के प्रमुख अध्येता के रूप में पाया कि संचार व्यक्ति के विचार, कार्य, व्यवहार एवं तौर-तरीकों को परिवर्तित ही नहीं बल्कि प्रभावित भी करता हैं। लासवेल का संचार प्रतिरूप संचार प्रक्रिया एवं सूचना चालन पर आधारित है। लासवेल का प्रतिरूप शाब्दिक न्यादर्श का उदाहरण है। इस न्यादर्श को हम निम्नलिखित तरीके से समझ सकते हैं –

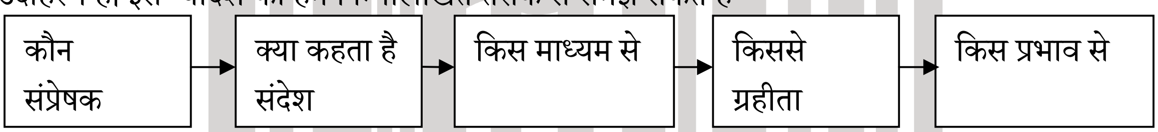

ज्ञान शांति मैत्री

हेराल्ड डी लासवेल का संचार प्रतिरूप

कौन (Who)– स्रोत (Source)

क्या कहता है (What Says)– संदेश (Message)

किस माध्यम से (In which channel)– माध्यम (Medium)

किससे (To Whom) - श्रोता (Audience)

उसका प्रभाव क्या है (With What Effect)– प्रभाव (Effect)

लासवेल के प्रतिरूप को संचार के क्षेत्र में काफी महत्व दिया गया। संचार अनुसंधान के क्षेत्र में इस प्रतिरूप की महत्वपूर्ण भूमिका है। लासवेल के न्यादर्श को ग्राफिक रूप में निम्नलिखित तरीके से विश्लेषित किया जा सकता है-

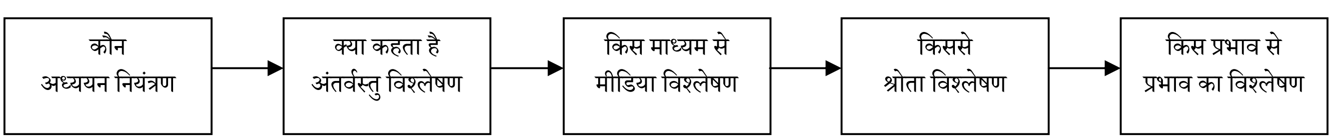

उपरोक्त अध्ययन से यह स्पष्ट है कि लासवेल के प्रतिरूप में हर स्तर पर शोध एवं विश्लेषण किया जा सकता है। लासवेल के प्रतिरूप की यह विशेषता है कि वे प्रभाव को महत्व देते हैं तथा संचार को सूचनाओं का आदान-प्रदान मानते हैं। इसमें यह मानकर चला जाता है कि ग्रहणकर्ता पर संचार का निश्चित प्रभाव पड़ेगा इसलिए संचार को मूलतः पर्सुएट करने वाली प्रक्रिया के रूप में ही ग्रहण करना चाहिए।

2.7.3. ब्रोडॉक का प्रतिरूप– संचारज्ञ ब्रोडॉक ने 1958 ई. में हेराल्ड डी. लासवेल के मॉडल में कुछ परिवर्तन करते हुए उन्होंने बताया कि समाचार प्रक्रिया में प्रभाव, परिस्थितियों (किन परिस्थितियों में संदेश को संप्रेषित किया गया और उद्देश्य purpose, संदेश पहुँचाने का उद्देश्य क्या था) पर निर्भर करता है। ब्रोडॉक ने जो संशोधित न्यादर्श प्रस्तुत किया उसमें उन्होंने दो और तत्वों को जोड़ा। ये तत्व निम्न हैं-

1. कौन
2. क्या कहता है
3. किस माध्यम से
4. किससे
5. किस परिस्थितियों में
6. किस उद्देश्य से
7. प्रभाव क्या है

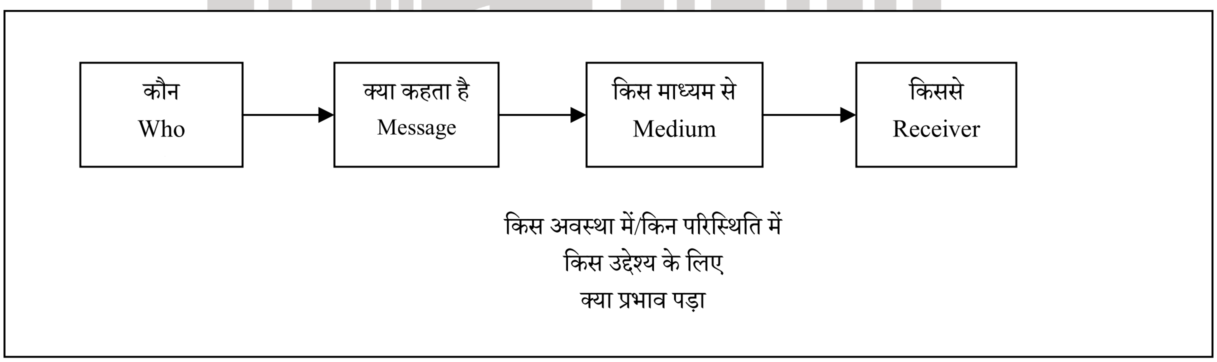

सीमाएँ : ब्रोडॉक का प्रतिरूप प्रोपेगेण्डा में अधिक स्पष्ट करता है क्योंकि प्रोपेगेण्डा में सदैव लक्ष्य को प्रभावित करने के उद्देश्य से संप्रेषण किया जाता है।

इस प्रतिरूप के अनुसार स्रोत (Who) चाहता है कि वह स्त्रोता (To Whom) को प्रभावित करने के उद्देश्य से संप्रेषण करे किंतु सदैव ऐसा होता नहीं है क्योंकि माँ और बेटे के बीच का संचार प्रक्रिया प्रभावित करने उद्देश्य से नहीं होता है। इस न्यादर्श के कारण संप्रेषण को जादुई प्रक्रिया माना जाने लगा है और इसमें प्रतिपृष्टि को स्थान नहीं दिया गया है।

2.7.4. शैनन एवं वीवर का प्रतिरूप– क्लाउडेन शैनन एवं वारेन वीवर दोनों अमेरिकी बेल टेलीफोन प्रयोगशाला में अधिकारी के पद पर कार्यरत थे। उन दोनों ने टेलीफोन से संचार प्रक्रिया के आधार पर एक न्यादर्श प्रतिपादित किया। यह न्यादर्श उनके द्वारा 1949 ई. में प्रस्तुत किया गया इसे गणितीय प्रतिरूप (Mathematical Model) भी कहा जाता है।

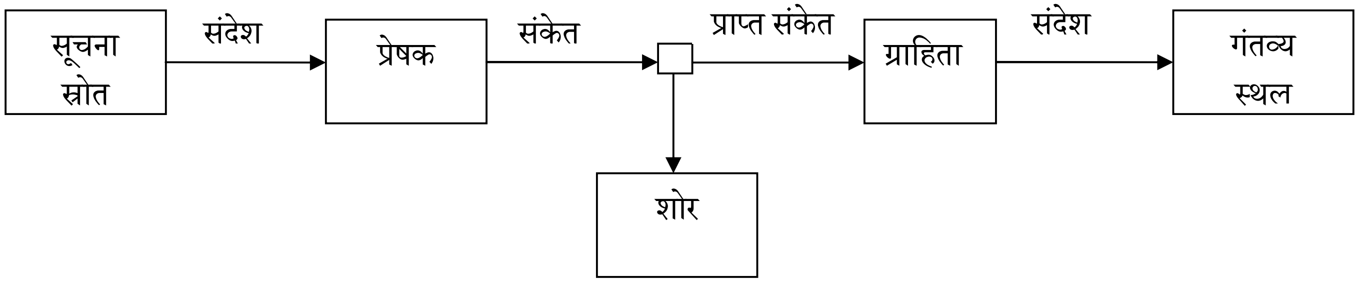

इस प्रतिरूप के आधार पर ही संचार का गणितीय सिद्धांत (Mathematical theory of Communication) का प्रतिपादन हुआ। इस सिद्धांत के अनुसार A टेलीफोन पर B से बात करता है। यहाँ A सूचना स्रोत है। वह अपना संदेश टेलीफोन से प्रेषित करता है। टेलीफोन ट्रांसमीटर है। तत्पश्चात् A का शाब्दिक संदेश टेलीफोन (ट्रांसमीटर) यांत्रिक रूप से संदेश को परिवर्तित कर B के टेलीफोन तक पहुँचाता है। यह संदेश फिर शाब्दिक संदेश में परिवर्तित होकर B के पास पहुँच जाता है तत्पश्चात् B मत का निर्माण करता है।

सीमाएँ : इस प्रतिरूप की सीमाएँ निम्नवत् हैं-

1. यह प्रतिरूप रेखीय संचार (Linear Communication) को प्रस्तुत करता है।
2. इस प्रतिरूप में एक पक्षीय संचार होता है।

दुष्प्रयोजन– शोर (Noise) उपस्थित होकर संप्रेषण प्रक्रिया में बाधा पहुँचाता है। यह यांत्रिक एवं गैर-यांत्रिक दोनों हो सकता है।

2.7.5. डी. फ्ल्योर का प्रतिरूप– डी.फ्ल्योर के प्रतिरूप को 'प्रीडोमीनेंटॉरी मॉडल ऑफ मास कम्युनिकेशन (Predominatory Model of Mass Communication) भी कहा जाता है। इन्होंने Channel को Mass Media Device माना। प्रो. एम.एस.डी. फ्ल्योर ने 1966 में शैनन वीवर के प्रतिरूप की कमियों को दूर करने का प्रयास किया। उन्होंने शैनन वीवर के प्रतिरूप की सीमाओं में कुछ सुधार किया।

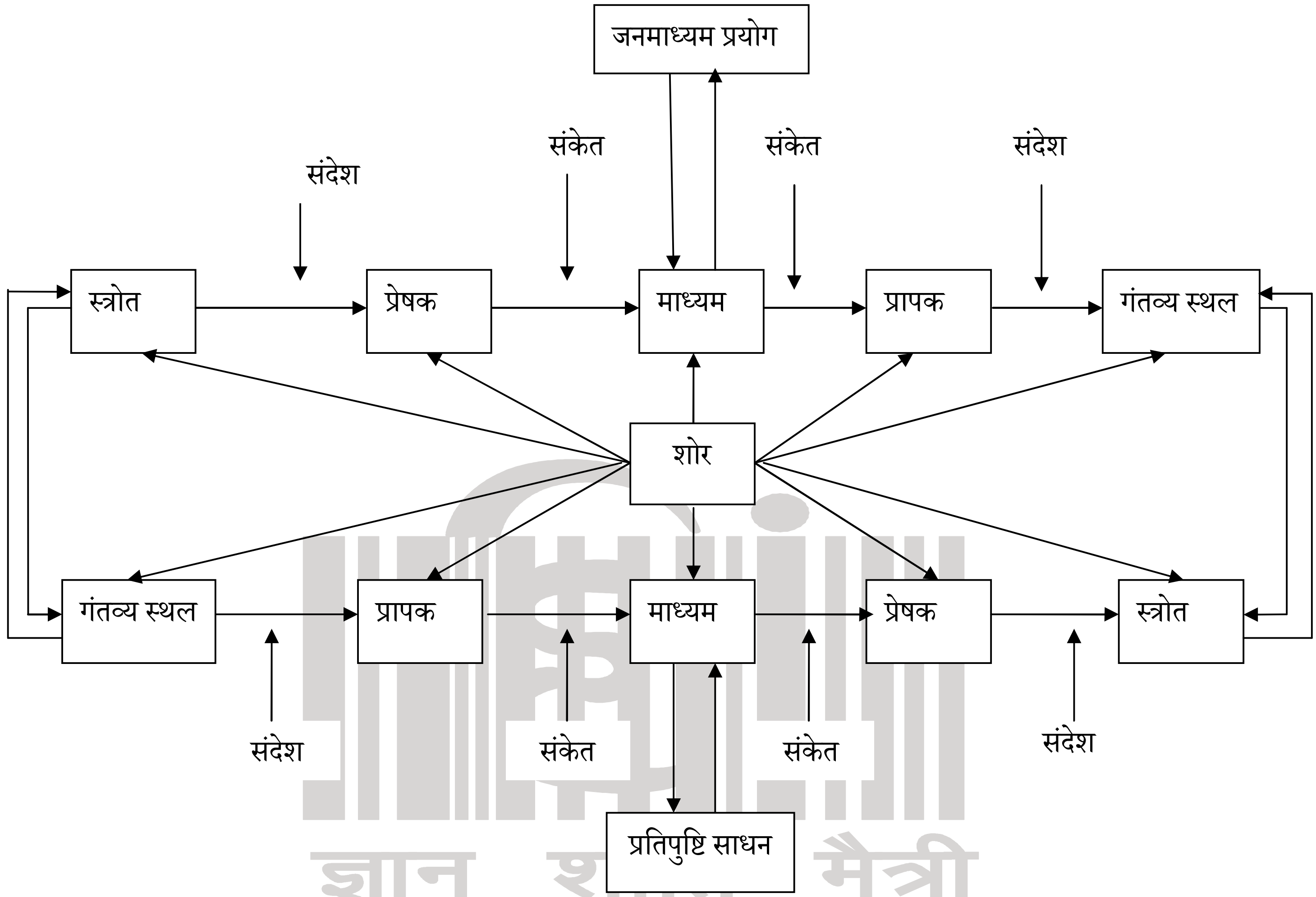

इस प्रतिरूप में डी. फ्ल्योर ने स्पष्ट किया कि शोर हर स्तर पर उपस्थित हो सकता है। गंतव्य संदेश की प्रतिपुष्टि भी देता है। उन्होंने Channel को Mass Media Device माना है। प्रतिपुष्टि की कमी शैनन एवं वीवर के प्रतिरूप में थी, जिसे डी. फ्ल्योर ने सुधार कर दूर किया।

2.7.6. सी.ई. ऑसगुड एवं विल्बर श्रेम का प्रतिरूप– सी.ई. ऑसगुड एवं विल्बर श्रेम ने 1954 ई. में अपना प्रतिरूप प्रतिपादित किया। इस न्यादर्श को उन्होंने सर्कुलर मॉडल कहा है।

सी.ई. ऑसगुड एवं विल्डर श्रेम के प्रतिरूप और शैनन एवं वीवर के प्रतिरूप में मुख्य अंतर यह दिखता है कि जहाँ शैनन एवं वीवर अपने Mathematical Model में संप्रेषक और ग्रहीता के बीच चैनल के बारे में ज्यादा गंभीर थे वहीं ऑसगुड एवं श्रेम ने संचार प्रक्रिया के प्रमुख तत्वों संप्रेषक और ग्रहीता के व्यवहार पर ज्यादा जोर दिया है।

इस प्रतिरूप को रेखीय स्वरूप (ग्राफिक फार्म) देने का कार्य विल्बर श्रेम ने किया। शैनन और वीवर के प्रतिरूप से इस प्रतिरूप में कुछ भिन्नताओं के बावजूद कई समानताएँ हैं जैसे शैनन एवं वीवर ने स्रोत एवं ट्रांसमीटर के बीच तथा गंतव्य और प्रापक के बीच अंतर किया है। दूसरे शब्दों में कहा जा सकता है उन्होंने संदेश भेजने तथा ग्रहण करने वाले दोनों के लिए अलग-अलग क्रियाओं का जिक्र किया है।

ये ट्रांसमीटर और रिसीवर की जगह इंटरप्रेटर, इनकोडर और डीकोडर को अलग-अलग करके दोनों ही क्रियाओं में अलग-अलग प्रक्रिया का जिक्र करते हैं। इस प्रकार से इनकोडिंग को शैनन वीवर ने ट्रांसमीटिंग के रूप में तथा डीकोडिंग को शैनन एवं वीवर के रिसीविंग के रूप में देखा जा सकता है।

श्रेम ने लिखा है कि- यह सोचना गलत है कि संचार की प्रक्रिया कहीं एक सिरे से शुरू होकर किसी दूसर सिरे पर खत्म हो जाती है। वस्तुतः यह अंतहीन है जो हमें निरंतर सूचना और संदेश प्रदान करती रहती है।

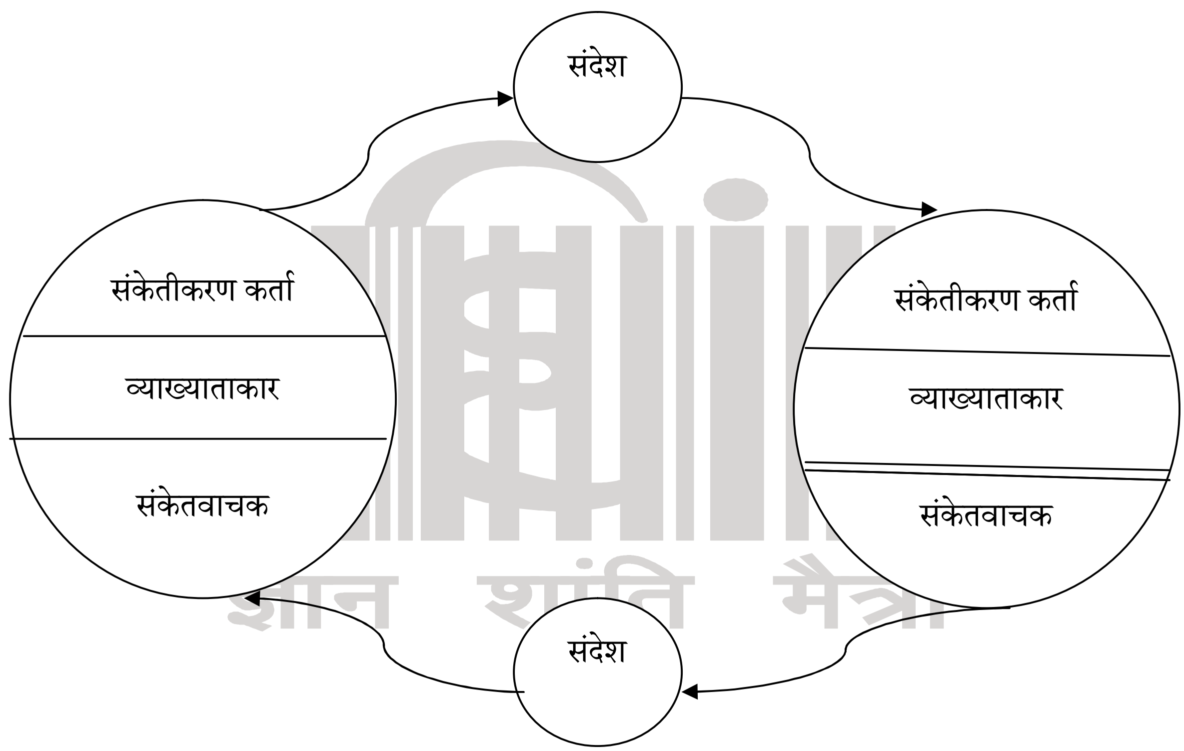

यह न्यादर्श मुख्यत: अंतर्वैयक्तिक संचार को समझने में महत्वपूर्ण है।

2.7.7. विल्बर श्रेम के अन्य प्रतिरूप– श्रेम ने इस मॉडल में यह दिखाया कि संदेश कितने समय में ग्रहीता तक पहुँचता हैं। ग्रहीता को संदेश समझने के लिए भाषा का अनुभव आवश्यक है।

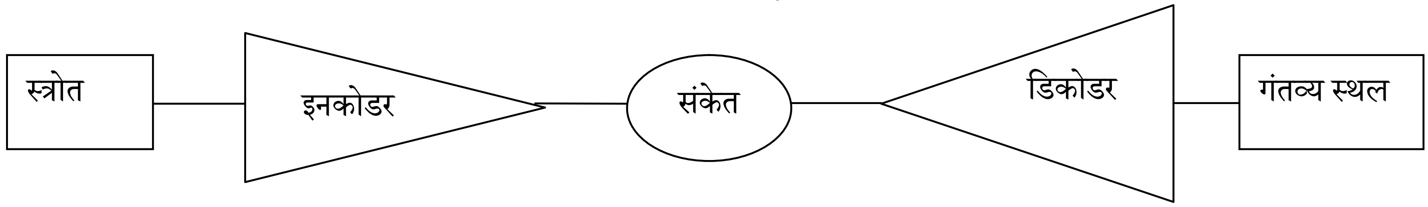

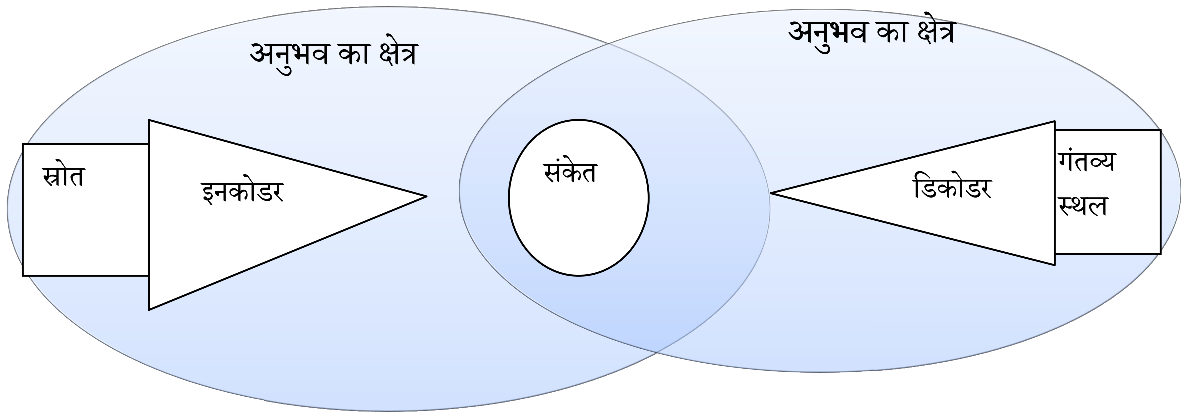

2.7.8. विल्बर श्रेम के अन्य प्रतिरूप– इस प्रतिरूप में इनकोडर यांत्रिक डिवाइस है और स्रोत मानवीय डिवाइस है

इसे ह्यूमेन बीइंग (Human being) मॉडल भी कहा जाता है।

श्रेम का जनसंचार का प्रतिरूप

1. प्राथमिक श्रोता (Primary Receiver) : जो जनसंचार माध्यम (रेडियो, दूरदर्शन) से स्वयं समाचार को सुनता है, प्राथमिक स्रोता कहलाता है।
2. द्वितीयक श्रोता (Secondary Receiver) : जो अन्य व्यक्तियों से समाचार प्राप्त करता है उसे द्वितीयक स्रोता कहा जाता है। द्वितीयक स्रोता समाचार को सीधे जनसंचार माध्यम से प्राप्त नहीं करते।

श्रेम के न्यादर्श की मूल आत्मा मीडिया संगठन में है जहाँ कि वे सारी प्रक्रियाएँ पूरी की जाती है जिनकी चर्चा सरकुलर न्यादर्श में की गई है अर्थात् इनकोडिंग, इंटरप्रेटिंग और डीकोडिंग।

2.7.9. जार्ज गर्बनर का सामान्य संचार प्रतिरूप– इस न्यादर्श को जार्ज गर्बनर ने 1956 ई. में प्रस्तुत किया था। गर्बनर अमेरिकी संचारविद् हैं। उनका उद्देश्य संचार का एक ऐसा न्यादर्श तैयार करना था जो संचार के व्यापक क्षेत्रों पर लागू हो।

इस न्यादर्श की प्रमुख बात यह है कि ''संचार की विभिन्न स्थितियों पर निर्भर करने वाले विभिन्न स्वरूपों का वर्णन किया गया है'' अर्थात् ''किस स्थिति में किस तरह का संचार होगा'', इसके विभिन्न स्वरूपों का वर्णन अलग-अलग रूपों में जोड़ा जा सकता है। इस मॉडल द्वारा संचार के सरल या जटिल हर

प्रक्रिया को समझा जा सकता है। संदेश की रचना किस तरह होती है और संप्रेषित करने वाली घटना का किस प्रकार अवबोधन होता है।

- यह प्रतिरूप संदेश की रचना प्रक्रिया तथा संदेश की अवबोधन के बीच के संबंध को स्पष्ट करता है।
- गर्बनर अपने न्यादर्श को शाब्दिक तथा रेखीय दोनों रूपों में प्रस्तुत किया है।

2.7.10. गर्बनर का शाब्दिक प्रतिरूप– गर्बनर का शाब्दिक न्यादर्श लासवेल सूत्र के अनुरूप है। इसमें निम्न रूपों को स्पष्ट किया जा सकता है।

1. कुछ (Some One)
2. किसी घटना का अवबोधन करके (Perceivers and Event)
3. प्रतिक्रिया करता है (And react)
4. एक स्थिति (In a situation)
5. किसी साधन द्वारा (Through some means)
6. ताकि उपलब्ध समग्री को बना सके (To make available materials)
7. किसी रूप में (In some form)
8. किसी परिप्रेक्ष्य में (and contest)
9. भेजने योग्य संदेश (Conveying contest)
10. किसी निष्कर्ष के साथ (With some consequence)

टिप्स– संप्रेषक का अवबोधन

2.7.10. गर्बनर का रेखीय का प्रतिरूप– गर्बनर के शाब्दिक न्यादर्श में जितने चरण और तत्व प्रदर्शित किए गए हैं वे सभी ग्राफिक न्यादर्श में सम्मिलित नहीं हैं। ग्राफिक न्यादर्श में बताया गया है कि किसी घटना का कोई व्यक्ति किस तरह अवबोधन करता है और फिर उसे किस तरह एक संदेश के रूप में ढालकर भेजता है। इस प्रक्रिया में कोई जरूरी नहीं कि घटना को वह संदेश के रूप में डालकर भेजे।

दिलचस्प बात तो यह है कि यही प्रक्रिया पुनः आगे बढ़ती है क्योंकि जब उसके द्वारा भेजा गया संदेश किसी दूसरे तक पहुँचता है तो वह अपने तरीके से उसका अवबोधन करता है और संदेश के रूप में ढालकर पुनः दूसरे तक पहुँचता है। इस प्रक्रिया में किसी घटना का अवबोधन करने वाले के चयन के तरीके, परिप्रेक्ष्य तथा उपलब्ध साधनों का महत्वपूर्ण असर होता है।

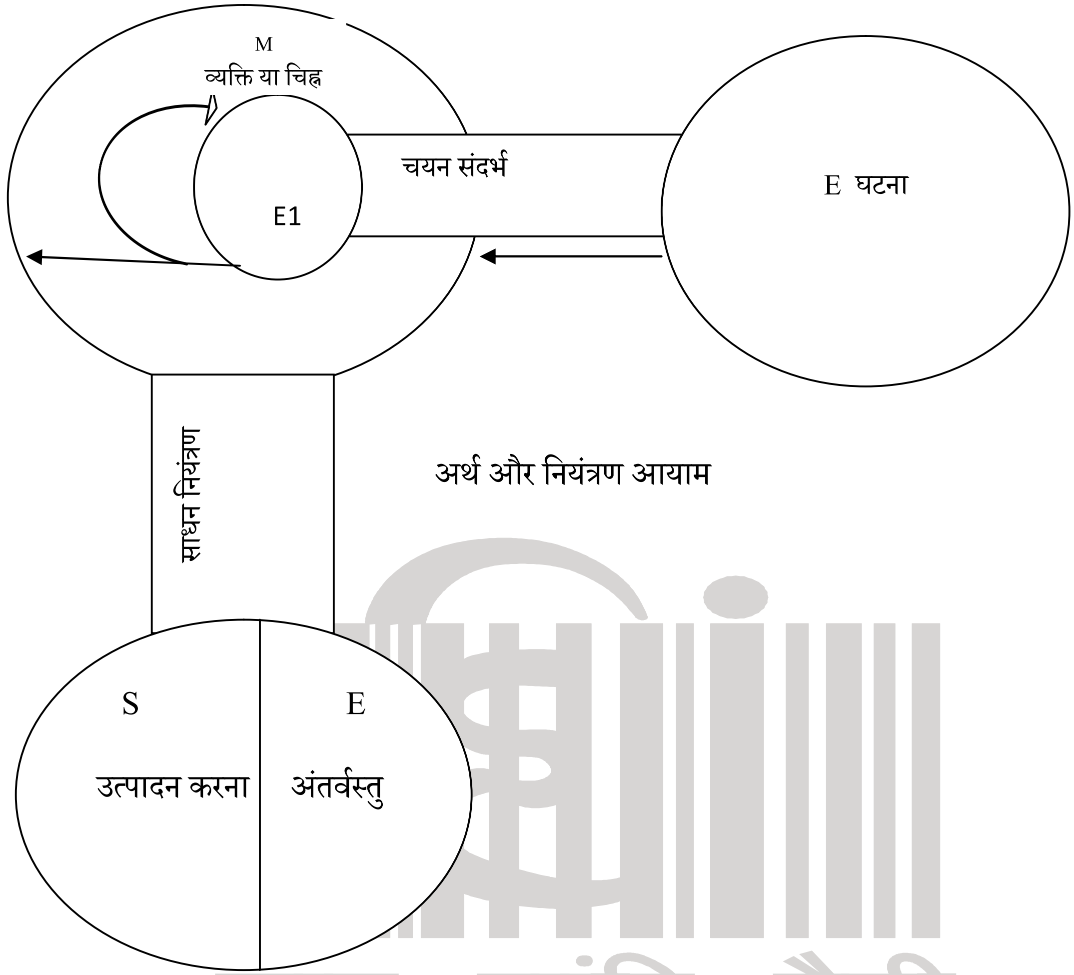

इस न्यादर्श के केंद्र में M (व्यक्ति या समूह) है, जो किसी घटना E को देखता है किंतु अपनी चयन प्रक्रिया परिप्रेक्ष्य तथा उपलब्ध साधनों के कारण E को E1 के बतौर देखता है यानी वह जो अवबोधन करता है वह नहीं, बल्कि E1 है जबकि वास्तविक चीज E है। इसतरह E, M तथा E1 के बीच अवबोधन का संबंध है।

अब M उस घटना के संबंध में दूसरों को बताना चाहता है इसके लिए वह संदेश की रचना S E के रूप में करता है यहाँ S का तात्पर्य Shape या Form से है जबकि E का तात्पर्य अंतर्वस्तु से है। इस प्रकार संदेश अर्थात् S E को भेजने के लिए तीन चीजों पर निर्भर है -

1. साधन (Channel)
2. माध्यम (Media)
3. अंतर्वस्तु (Content)

इस प्रकार से कहा जा सकता है कि मीडिया पर स्वयं M का नियंत्रण है।

2.7.11. जार्ज गर्बनर का 1964 का प्रतिरूप– गर्बनर ने अपने द्वारा प्रतिपादित संचार प्रतिरूप को विकसित करते हुए 1964 में पुन: नया प्रतिरूप प्रस्तुत किया। इस प्रतिरूप में उन्होंने बताया कि M ने E को E1 के बतौर अवबोधन करके S E के रूप में दूसरों तक भेजा। अब यह दूसरा अर्थात् M 2 उस संदेश यानी S E को S E1 के रूप में अवबोधन करेगा। यह प्रक्रिया उसी रूप में चलेगी जैसा M के साथ चली थी अर्थात् M 2 अपनी चयन प्रक्रिया परिप्रेक्ष्य और उपलब्ध साधनों के आधार पर S E को अवबोधित S E1 के रूप में करेगा।

यह प्रतिरूप अवबोधन-रचना-अवबोधन की शृंखला पर आधारित है। जैसे किसी मैच में गेंद की संख्या को को देखकर M को लगता है कि मैच जीत लिया जाएगा और वह अपना संदेश इसी रूप में भेजता है। इस तरह M2 के पास जो संदेश पहुँच रहा है वह वास्तविकता से भिन्न है। संभव है कि M2 भी इस संदेश का अवबोधन भिन्न रूप में करें।

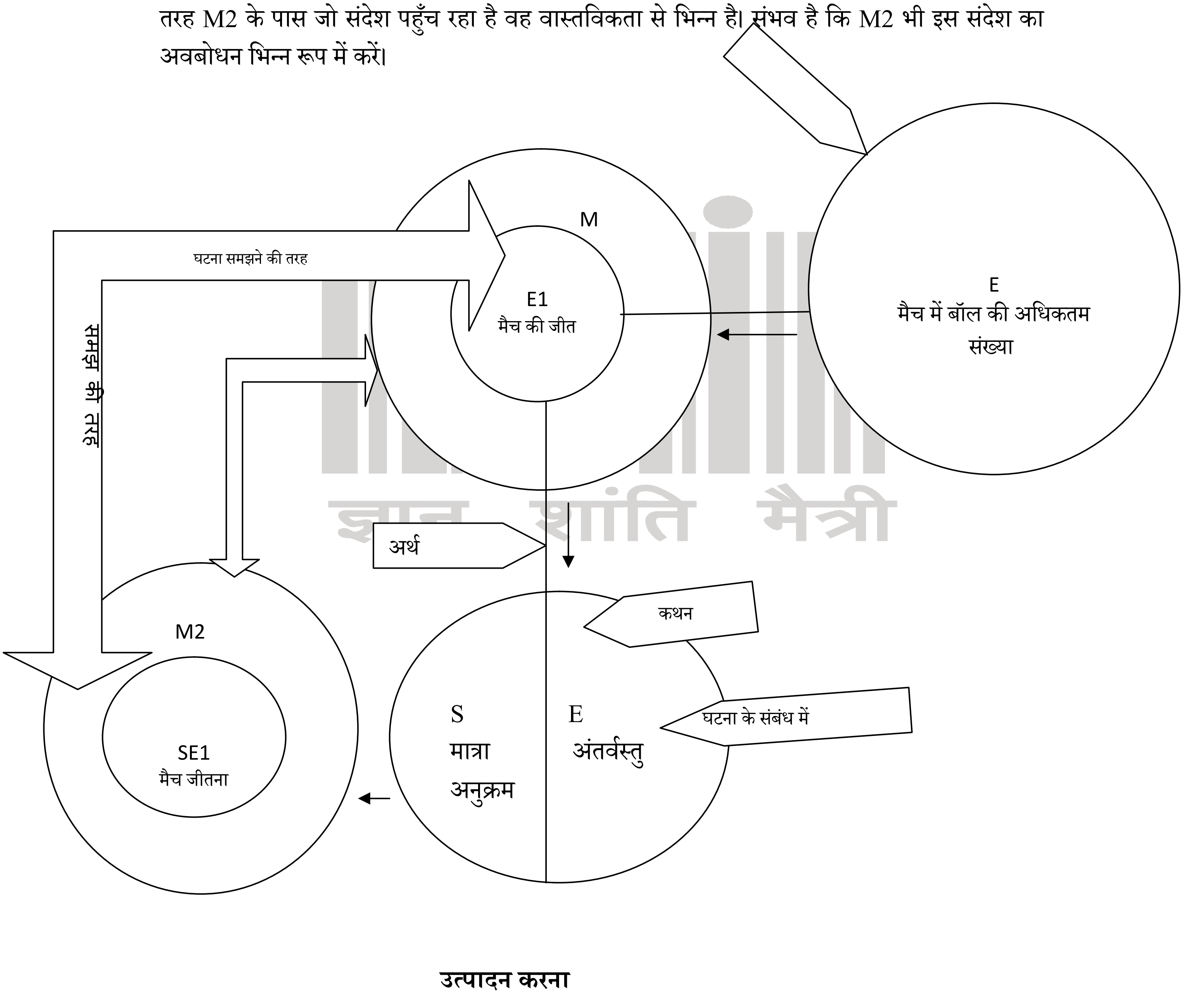

इस प्रतिरूप द्वारा मौखिक संचार की प्रक्रिया आत्मगत हो सकती है। इस प्रतिरूप द्वारा गर्बनर इस प्रश्न को उठाते हैं कि जनमाध्यमों द्वारा किसी घटना के संबंध में जो जानकारी दी जाती है और उसे ग्रहीता जिस रूप में ग्रहण करता है ये दोनों चीजें वास्तविकता से कितना मेल खाती है।

E अर्थात् घटना को M यानी माध्यम E1 के रूप में अवबोधित करता है और S E के रूप में श्रोता तक पहुँचाता है। यह पुन: श्रोता यानी M2 उस S E को S E1 के रूप में ग्रहण करता है। इस तरह मूल चीज E थी जो E1 को S E बनने के बाद श्रोता तक S E के रूप में पहुँचाती है।

2.8. सारांश

संचार एक अनवरत प्रक्रिया है। मानव अपने को स्थापित करने के लिए संदेशों का संप्रेषण करना शुरू किया। यह एक मानसिक प्रक्रिया है जिसमें पहला व्यक्ति अपनी बात दूसरे को समझाने की व्यवस्था करता है और दूसरा व्यक्ति उसे समझने के लिए प्रश्न भी करता है और उसे अपने ढंग से समझने का प्रयास करता है। संचार के अंतर्गत विचारों का और अर्थों का आदान-प्रदान होता है। संचार संप्रेषण के लिए विभिन्न संचारवदों ने कम्युनिकेशन मॉडल प्रतिपादित किए। संचार के प्रतिरूपों में संप्रेषक, संदेश और ग्रहीता, ये तीन मुख्य तत्व हैं जिससे कि संचार के विविध रूपों, चरित्रों तथा अर्थ की खोज की जा सकती है। इस इकाई में संचार प्रक्रिया, संचार के तत्व, संचार प्रतिरूप के कार्य तथा संचार के बुनियादी प्रतिरूपों को व्याख्यायित किया गया है।

2.9. बोध प्रश्न

2.10. बहुविकल्पीय

प्रश्न 1 : संचार प्रक्रिया में संदेश भेजने वाला निम्न में से क्या कहलाता है?

विकल्प : क. प्रेषक ख. संदेश

ग. माध्यम घ. प्राप्तकर्ता उत्तर : क.

प्रश्न 2 : संचार प्रतिरूप के कार्यों में से कौन सा गलत है ?

विकल्प : क. स्वत: अन्वेषण संबंधी कार्य ख. अनुमान योग्य बनाना

ग. मापन संबंधी कार्य घ. असंगठित बनाना उत्तर : घ.

प्रश्न 3 : निम्न में से किस संचारज्ञ के प्रतिरूप को शाब्दिक न्यादर्श (Verbal Communication) कहा जाता है?

विकल्प : क. अरस्तू का संचार प्रतिरूप ख. हेराल्ड डी. लासवेल का प्रतिरूप

ग. ब्रोडॉक का प्रतिरूप घ. शैनन एवं वीवर का प्रतिरूप उत्तर : ख.

प्रश्न 4 : निम्न में से किस प्रतिरूप को 'प्रीडोमीनेंटरी मॉडल ऑफ मास कम्युनिकेशन' कहा जाता है?

विकल्प : क. डी.फ्ल्योर का प्रतिरूप ख. शैनन एवं वीवर का प्रतिरूप

ग. हेराल्ड डी. लासवेल का प्रतिरूप घ. विल्बर श्रेम का प्रतिरूप उत्तर : क.

प्रश्न 5 : निम्न में से किस प्रतिरूप को 'संप्रेषण का जादुई प्रक्रिया' कहा जाता है?

विकल्प : क. हेराल्ड डी. लासवेल का प्रतिरूप ख. ब्रोडॉक का प्रतिरूप

ग. शैनन एवं वीवर का प्रतिरूप घ. डी. फ्ल्योर का प्रतिरूप उत्तर : ख.

2.9.1. लघु उत्तरीय

प्रश्न एक : संचार प्रतिरूप के कार्य को स्पष्ट कीजिए।

प्रश्न दो : संचार के तत्व को उल्लेखित कीजिए।

प्रश्न तीन : संचार प्रक्रिया पर प्रकाश डालें।

2.9.2. दीर्घ उत्तरीय

प्रश्न एक : 'संप्रेषण में शोर' को डी.फ्ल्योर के प्रतिरूप के माध्यम से समझाएं।

प्रश्न दो : हेराल्ड डी. लासवेल के संचार प्रतिरूप पर प्रकाश डालें?

व्यवहार

कार्य एक : संचार में शोर कहीं से भी उत्पन्न हो सकता है, इस कथन की पुष्टि कीजिए ?

2.10. कठिन शब्दावली

- **संदेश** : संचार प्रक्रिया की विषय वस्तु संदेश है। संदेश में सूचना, विचार, संकेत, दृष्टिकोण, निर्देश, सुझाव आदि शामिल हैं। संदेश यानी वह बात जो एक से दूसरे तक प्रेषित की जाती है। यह लिखित, मौखिक, शाब्दिक अथवा सांकेतिक होता है जो किसी भी रूप में हो सकती है, ध्वनि के रूप में, दृश्य के रूप में, संकेतों के रूपों में या अन्य किसी रूप में।
- **प्रतिपुष्टि** : संचार प्रकिया को सफल बनाने में प्रतिपुष्टि एक प्रमुख अवयव है। संप्रेषक को संदेश प्रसारित करने के पश्चात यह जानना आवश्यक है कि संग्राहकों ने उसे ग्रहण किया या नहीं। संचारित संदेश उपयोगी हो रहा है अथवा नहीं, प्रतिपुष्टि कहलाता है।
- **संकेतीकरण** (Encoding)– संप्रेषक जब भावों या विचारों को संकेत के रूप में परिवर्तित करके रचनात्मक विधि से प्राप्तकर्ता तक पहुँचाता है तो इसे संकेतीकरण कहा जाता है जैसे –शब्दों, संकेतों, भाव भंगिमाओं आदि के द्वारा संदेशों को प्रसारित करना। अथवा, संप्रेषक सूचना देने से पहले संदेश को अपने ढंग से परिवर्तित करता है, जिसे संकेतीकरण कहते हैं।
- **संकेतवाचन** (Decoding)– संकेतवाचन से आशय है- प्रापक द्वारा संदेश को अपने मस्तिष्क में उसी अर्थ में ढ़ाल लेना। संकेतवाचन प्रापक की समझ क्षमता पर निर्भर करता है। ग्रहीता संदेश को अपने ढंग से समझता और ग्रहण करता है, इस प्रकिया को संकेतवाचन कहा जाता है।

2.11 संदर्भ ग्रंथ

- कुलश्रेष्ठ, वि. एवं जैन, हं. (2005). *'जनसंचार शोध प्रविधियाँ'*. जयपुर : माया प्रकाशन।
- सिंह, श्रीकान्त. (2001). *'संप्रेषण : प्रतिरूप एवं सिद्धांत'*. फैजाबाद : भारती पब्लिशर्स एण्ड डिस्ट्रीब्यूटर्स।
- सरदाना, चंद्रकांता एवं मेहता. कृ.शि. *'जनसंचार कल, आज और कल'*. दिल्ली : ज्ञान गंगा।

- Kumar, keval j., (2004). '*Mass Communication in India*', Mumbai : Jaico Publishing House.
- Rayudu, C.S. (2008). '*Communication'*. Mumbai : Himalya Publishing House.
- जैन, रमेश. (2003). '*जनसंचार एवं पत्रकारिता'*. जयपुर : मंगलदीप पब्लिकेशन्स।
- Desai, Amit, '*Journalism and Mass Communication*'. New Delhi : Reference Press.
- बघेल, संजय सिंह. 'संचार, समाज और साहित्य'. गाजियाबाद : के.एल. पचौरी प्रकाशन।

ज्ञान शांति मैत्री

इकाई- 3 संचार सैद्धांतिकी, संस्कृति उत्पाद, पब्लिक स्फेयर एवं जनमत

इकाई की रूपरेखा

3.0. उद्देश्य
3.1. प्रस्तावना
3.2. संचार सैद्धांतिकी
3.3. जनसंचार के नियामक सिद्धांत
3.4. संस्कृति उत्पाद
3.5. संस्कृति-उद्योग
3.6. पब्लिक स्फियर
3.7. जनमत
3.7.1. जनमत : अर्थ एवं स्वरूप
3.7.2. जनमत का निर्माण
3.7.3. जनमत के रूप
3.7.4. जनमत निर्माण की प्रक्रिया
3.7.5. जनमत निर्माण के साधन
3.7.6. जनमत निर्माण के स्तर
3.7.7. जनमत को प्रभावित करने वाले तत्व
3.8. सारांश
3.9. बोध प्रश्न
3.10. कठिन शब्दावली
3.11. संदर्भ एवं उपयोगी ग्रंथ सूची

ज्ञान शांति मैत्री

3.0. उद्देश्य

इस इकाई का उद्देश्य निम्नवत हैं -

1. संचार की सैद्धांतिकी सहित जनसंचार के नियामक सिद्धांत को जानना।
2. संस्कृति उत्पाद और जनसंचार के अंतर्संबंधों को समझना।
3. पब्लिक स्फेयर को जानना।
4. जनमत को समझना।

3.1. प्रस्तावना

संचार माध्यमों ने व्यापक जनसमूह के जीवन को प्रभावित किया है। जनसचार के क्षेत्र में होने वाले तकनीकी परिवर्तनों ने हमारे आर्थिक, सामाजिक, राजनीतिक और सांस्कृतिक क्षेत्रों को तेजी से प्रभावित करना शुरू कर दिया है। इस इकाई में संचार सैद्धांतिकी पर विमर्श करते हुए जनसंचार के नियामक सिद्धांत पर

विस्तृत रूप से चर्चा की गई है। जनसंचार के उत्पादों को सांस्कृतिक उत्पादों की श्रेणी में शामिल किया जाता है। संस्कृति में मनुष्य के जीवन की प्रत्येक गतिविधि या सम्मिलित हैं। जनसंचार ने मनुष्य को किस तरह के सांस्कृतिक जीवन के लिए प्रेरित किया है। क्या इसके द्वारा अपसंस्कृति को बढ़ावा दिया जा रहा है, संस्कृति के उद्योग में बदलने से क्या लोगों की रचनात्मकता को कुंठित किया जा रहा है आदि बिंदुओं की चर्चा प्रस्तुत इकाई में की गई है और साथ ही पब्लिक स्फियर और जनमत पर भी चर्चा को शामिल किया गया है।

3.2. संचार सैद्धांतिकी

आम प्रचलित अंग्रेजी शब्द Theory का हिंदी रूपांतर है – सिद्धांत है। Theory शब्द की उत्पत्ति ग्रीक भाषा के Theoria शब्द से हुई है, जिसका आशय 'समझने की दृष्टि से चिंतन की अवस्था में प्राप्त किसी मानसिक दृष्टि से है जो कि उस वस्तु के अस्तित्व एवं कारणों को प्रकट करती है।' सिद्धांत का संबंध कुछ विशिष्ट घटनाओं से नहीं अपितु घटनाओं की संपूर्ण श्रेणियों से होता है। राबर्ट के. मर्टन ने अपनी पुस्तक 'सोशियोलॉजी ऑफ टुडे' में सिद्धांत को परिभाषित किया है कि 'केवल उसी अवस्था में जबकि अवधारणाएँ एक योजना के रूप में अंत:संबंधित हो जाते हैं तभी एक सिद्धांत पनपना प्रारंभ हो जाता है।' इसी प्रकार टालकट पारसन्स ने सिद्धांत को इस प्रकार से परिभाषित किया है- 'सिद्धांत कुछ ज्ञात तथ्यों से निकाले गए सामान्यीकरण से बनता है और वह इस अर्थ में कि ज्ञात तथ्य समूह का औचित्य, कौन से सामान्य कथन करेंगे।'

संचार सिद्धांतों की चर्चा करते समय व्यक्ति के मन पर संचार के पड़ने वाले प्रभावों का अध्ययन जरूरी है क्योंकि संचार के लिए संप्रेषक और प्रापक की मन:स्थितिपरक तथा व्यक्तिगत भिन्नता दोनों ही सिद्धांतों के प्रतिपादन अपनी सार्थकता बनाते हैं। संचार सिद्धांत का उल्लेख एवं वर्गीकरण निम्न रूपों में किया जा सकता है-

1. मनोवैज्ञानिक सिद्धांत वर्ग

क. संतुलन का सिद्धांत

- I. हाइडर प्रथित संतुलन का सिद्धांत
- II. न्यूकॉम्ब प्रथित अंतवैयक्तिक सम्मति का सिद्धांत
- III. रोजन वर्ग एबेलसन प्रथित सुतंलन का सिद्धांत
- IV. कॉटज-स्टॉटलैंड प्रथित अभिप्रेरणा का सिद्धांत
- V. ऑसगुड-टेननबाम प्रथित अनुरूप का सिद्धांत
- VI. मैक्यगुरी प्रथित सत्यता द्विप्रक्रिया का सिद्धांत
- VII. फेस्टींजर प्रथित संज्ञानात्मक असंगति का सिद्धांत

ख. सामंजस्य विषयक सिद्धांत

ग. प्रत्यक्षीकरण का सिद्धांत

घ. संज्ञानात्मक असंवादिता का सिद्धांत

ङ. भावनात्मक संज्ञानात्मक संगति का सिद्धांत

2. समाजशास्त्रीय सिद्धांत वर्ग

ज्ञान शांति मैत्री

I. चर्चावली निर्धारण का सिद्धांत
II. उपयोगिता एवं परितुष्टि का सिद्धांत
III. छवि विकास का सिद्धांत
IV. निर्भरता का सिद्धांत
V. प्रेषण-दृष्टि या बुलैट सिद्धांत
VI. सामाजिक सिद्धांत
VII. मार्शल मैक्लुहान का सिद्धांत

3. अंत:क्रियात्मक सिद्धांत वर्ग

I. द्विपद एवं बहुपद सिद्धांत
II. न्यूमैन प्रथित मौन का वलय सिद्धांत

4. जनसंचारीय नियामक सिद्धांत वर्ग

I. प्लेटो का सर्वसत्तावादी/प्रभुत्ववादी सिद्धांत
II. स्वतंत्रता/उदारवादी सिद्धांत
III. साम्यवादी जनमाध्यमों का सिद्धांत
IV. सामाजिक उत्तरदायित्व का सिद्धांत

हम यहाँ जनसंचार के नियामक सिद्धांत की चर्चा करेंगे।

3.3. जनसंचार के नियामक सिद्धांत

अमेरिका के सुप्रसिद्ध समाज वैज्ञानिक एवं संचारविद् जी.एफ. साइबर्ट, टी. पीटर्सन और डब्ल्यू श्रेम ने विश्व की प्रमुख राजनीतिक व्यवस्था के आधार पर प्रेस के चार सिद्धांत निरूपित किए हैं। उनका मानना है कि जिस देश की शासन व्यवस्था जैसी होगी वहाँ की संचार व्यवस्था भी वैसी ही होगी।

जनसंचार के नियामक के चार सिद्धांत हैं- I. सर्वसत्तावादी/प्रभुत्ववादी सिद्धांत, II. स्वतंत्रता/उदारवादी सिद्धांत, III. साम्यवादी सिद्धांत और IV. सामाजिक उत्तरदायित्व का सिद्धांत।

I. सर्वसत्तावादी/प्रभुत्ववादी सिद्धांत - प्रेस के संबंध में यह सिद्धांत प्राचीन है। निरंकुश राजसत्ताओं में यह सिद्धांत कई रूपों में शुरू से ही मौजूद रहा है। दुनियाभर के निरंकुश राजनीतिक ढाँचे में राजसत्ता को व्यक्ति से ऊपर का स्थान दिया जाता रहा है। यहाँ तक कि सत्ता पर काबिज लोगों को दैवीय शक्ति से युक्त देवयुक्त या सर्वशक्तिमान सर्वगुण संपन्न समझा जाता था। इस प्रकार राजा व प्रजा के बीच भेद उत्पन्न हो जाता था। 'राजा ही कानून है' रोमन चर्च के निरंकुश परंपरा में यह बात निहित थी कि जनता के हितों को पूरा करने के लिए ही राजा के द्वारा प्रदत्त समस्त अधिकारों का प्रयोग राजसत्ता करती है। इस तरह प्रारंभ से ही लोगों को वैसी ही सूचना देना उचित समझा जाता था जो राजसत्ता के हितों के अनुकूल हो उसमें राजसत्ता की शक्ति को किसी भी तरह संदेह के घेरे में लाना या उसे चुनौती देना प्रतिबंधित था। इस सिद्धांत के अनुसार, जनमाध्यम शासन एवं सरकार के हित में ही बँधकर रह जाते हैं। उचित-अनुचित का परित्याग करके ये जनमाध्यम मात्र सरकारी प्रचारतंत्र बनकर रह जाते हैं और परोक्ष

रूप से शासकीय व्यवस्था का अंग बन जाते हैं। ऐसी स्थिति में जनमाध्यमों के गुण-दोष का मूल्यांकन संभव ही नहीं हो पाता है। यही कारण है कि काफी लंबे समय तक प्रेस निजी स्वामित्व में रहा है।

II. उदारवादी/स्वतंत्र अभिव्यक्ति का सिद्धांत - विल्बर श्रेम के अनुसार, सोलहवीं शताब्दी में उदारवादी सिद्धांत की अवधारणा बनी, 17 वीं शताब्दी में अंकुरित हुई और अठारहवीं शताब्दी में विकसित हुई तथा उन्नीसवीं शताब्दी में इसे पल्लवित होते देखा गया। जी.एस. साइबर्ट ने उदारवादी सिद्धांत का प्रतिपादन किया है। इस सिद्धांत के अनुसार, ऐसे देशों में जहाँ लोकतांत्रिक शासन व्यवस्था है वहाँ संस्कृति, तकनीकी और सामाजिक विकास की स्थिति उत्पन्न भले ही न हो किंतु जनमाध्यम शासकीय नियंत्रण से पूर्णतया मुक्त होते हैं। इन देशों में नागरिकों को अिभव्यक्ति की स्वतंत्रता का अधिकार संविधान द्वारा प्रदत्त होता है। इन देशों में जनमाध्यम व्यापक लोकहित एवं जनकल्याण के लिए काम करते हैं। गुण-दोष का मूल्यांकन करके विकास के नए आयामों को तैयार करते हैं। ऐसे देशों में संचार माध्यम प्राय: एक स्वतंत्र उद्योग अथवा स्वायत्तशासी संगठन के रूप में कार्य करते हैं। अभिव्यक्ति की स्वतंत्रता कानून द्वारा संरक्षित होने के कारण वे गलत शासकीय नीतियों तथा दोषों का खुलकर आलोचना करते हैं। इन देशों में जनमाध्यमों का प्राय: सूचनाएँ स्वस्थ्य मनोरंजन और सद्शिक्षा प्रदान करने की ओर विशेष ध्यान रहता है। सन् 1963 में साइबर्ट, पीटर्सन तथा श्रेम ने लचीलापन, परिवर्तनों को ग्रहण करने की क्षमता, आत्मविश्वास को उदारवादी सिद्धांत की विशेषता बताया है।

III. साम्यवादी सिद्धांत - यह सिद्धांत मुख्यतया साम्यवादी विचारक कार्ल मार्क्स, एंजिल्स, स्टालिन एवं लेनिन के विचारों पर आधारित है। इस सिद्धांत के अनुसार, मीडिया विचारों का मानसिक उत्पादन है अत: इसका नियंत्रण मजदूरों द्वारा किया जाना चाहिए। एक साम्यवादी की स्थापना जो कि वस्तुत: वर्गविहीन समाज होगा की परिकल्पना थी। इसके लिए मीडिया का यह कार्य माना गया कि वह कोई ऐसी बात न कहे जो वर्ग-भेद उत्पन्न करते हों और समाज में एक वर्ग विशेष को बढ़ावा देते हों। इस सिद्धांत के अनुसार संचार माध्यमों द्वारा निम्न एवं शोषित वर्गों की उपेक्षा किए जाने पर समाचारों में असंतुलन उत्पन्न होता है। साम्यवादी संचार माध्यम सिद्धांत का संशोधित संस्करण शासक वर्ग के हितों के संदर्भ में संचार माध्यमों के वैचारिक प्रभावों को रेखांकित करता है।

IV. सामाजिक उत्तरदायित्व का सिद्धांत - जनमाध्यम लोकतांत्रिक व्यवस्था में अपने सामाजिक दायित्वों का निर्वहन करते हैं तथा अपने आपको शासकीय व्यवस्था से अलग रखते हैं। इस सिद्धांत के प्रतिपादकों का मानना है कि जनमाध्यम केवल समाज के दर्पण ही नहीं होते बल्कि उनके कुछ सामाजिक दायित्व भी होते हैं। जनमाध्यमों का कार्य समाज में घटी घटनाओं की तस्वीर पेश करना है। जनमाध्यम का यह भी दायित्व होता है कि अपने कार्यक्रमों के माध्यम से समाज में व्याप्त कुरीतियों को दूर करने, शिक्षा का प्रसार, सांप्रदायिक सद्भाव और एकता कायम करने तथा राष्ट्रीय हितों की रक्षा करने में समाज की सहायता करे। जनमाध्यमों को केवल जनता की इच्छा से नियंत्रित नहीं होना चाहिए कि वह क्या देखना, सुनना और पढ़ना

चाहता है बल्कि एक अच्छे पथ-प्रदर्शक के रूप में यह निर्णय करना चाहिए कि क्या देखना, सुनना और पढ़ना समाज के हित में है।

अमेरिकी संचारविद् साइबर्ट, पीटर्सन, श्रेम द्वारा प्रतिपादित प्रेस के चार सिद्धांतों में डेनिस मैक्वेल ने दो और सिद्धांतों- (जनमाध्यमों का विकास सिद्धांत और जनतांत्रिक सहभागिता का सिद्धांत) को जोड़कर मानक सिद्धांत की संज्ञा दी।

जनमाध्यमों का विकास सिद्धांत - संचार विकास के लिए एक महत्वपूर्ण पहलू है। इस बात को लेकर विकासशील देशों में बहस शुरू हुई और 1978 ई. में मैकब्राइड कमीशन ने अपनी रिपोर्ट 'मेनी वायसेज वन वर्ल्ड' में माना कि समाचार माध्यमों द्वारा प्रसारित समाचार नकारात्मक नहीं होना चाहिए बल्कि विकास एवं दायित्व के निर्वहन के लिए दायित्वपूर्ण एवं सकारात्मक समाचार भी होना चाहिए। विकास के लिए सुझाव दिया जाना चाहिए। यह जरूरी है कि संचार माध्यम समाज के लोगों को हतोत्साहित न करें अपितु उसमें उत्साह का संचार करें। सरकार की योजनाओं को लाभदायी बनाने एवं उसके क्रियान्वयन में सहयोग करें।

जनतांत्रिक सहभागिता का सिद्धांत - इस सिद्धांत का प्रतिपादन फ्रैंकफर्ट स्कूल, जर्मनी में किया गया। इस सैद्धांतिक अवधारणा के प्रतिपादक मैक्वेल थे। इस सिद्धांत के अनुसार लोकतांत्रिक व्यवस्था में जनमाध्यमों द्वारा संप्रेषण का अधिकार समान रूप से सभी को प्राप्त हो। यह सिद्धांत जनमाध्यमों के स्वामित्व के केंद्रीकरण का विरोध करता है और दर्शक-श्रोता के मात्र ग्रहणकर्ता होने के कथन को भी अस्वीकार करता है। जनमाध्यमों को उत्तरदायी होना चाहिए। सरकारी अथवा बड़े औद्योगिक घरानों के नियंत्रण से मुक्त होना चाहिए। मैक्वेल का मानना है कि इस सिद्धांत के अनुरूप ही जनमाध्यमों का स्वरूप होना चाहिए ताकि जनतांत्रिक विकास में आमजन की सहभागिता सुनिश्चित की जा सके।

3.4. संस्कृति उत्पाद

मनुष्य की पहचान जो उसे जानवरों से अलग करती है, वह है उसकी विवेक क्षमता। विवेक क्षमता मनुष्य के जीवन को सांस्कृतिक आयाम देती है। संस्कृति मनुष्य जीवन की सभी क्रियाओं में समाहित होता है। उसके खाने-पीने, पहनने-ओढ़ने से लेकर सभी क्रियाओं का संबंध संस्कृति से है। यही संस्कृति मनुष्य को मनुष्य होने का अर्थ देती है। समाज और संस्कृति का संबंध बहुत गहरा है। समाज का निर्माण सामाजिक संबंधों से होता है जबकि संस्कृति का निर्माण मानव निर्मित भौतिक वस्तुओं या अभौतिक तत्वों से होता है। सामाजिक और सांस्कृतिक परिवर्तनों के संदर्भ में पारसन्स ने कहा है, 'सांस्कृतिक परिवर्तन का संबंध विभिन्न मूल्यों, विचारों और प्रतीकात्मक अर्थपूर्ण व्यवस्थाओं में परिवर्तन से है, जबकि सामाजिक परिवर्तन का संबंध व्यक्ति और समाज के बीच होने वाली अंत:क्रियाओं में परिवर्तन से है।'' सांस्कृतिक परिवर्तन के स्तर पर संस्कृति के असंतुलन, भौतिकतावादी प्रधानता, प्रौद्योगिकीय विकास या प्रतिरोध, स्वार्थपूरित अवरोध सांस्कृतिक संघर्ष, बाह्य संस्कृति का आयात आदि महत्वपूर्ण भूमिका निभाते हैं।

जनसंचार के साथ ही जन संस्कृति की संकल्पना भी प्रस्तुत हुई। जनसंचार और जनसंस्कृति के परस्पर संबंधों के संदर्भ में फ्रेंकफर्ट स्कूल की विचारधारा का उल्लेख आमतौर पर किया जाता है। फ्रेंकफर्ट स्कूल के विचारकों ने ही सबसे पहले जनसंचार के संदर्भ में सांस्कृतिक प्रश्नों पर गहनता से विचार किया था। इन विचारकों में सबसे महत्वपूर्ण हैं- मैक्स होर्खाइमर और टी.डब्ल्यू. एर्डोनो। इसके साथ ही वाल्टर बेंजामिन

और हर्बट मार्क्यूज की भी गणना की जाती है। इनके अनुसार- इजारेदार पूँजी अपनी कामयाबी के लिए जिन प्रमुख साधनों का इस्तेमाल करती है उनमें जन संस्कृति का स्थान सबसे प्रमुख है। वस्तुओं, सेवाओं और विचारों के जनोत्पादन की संपूर्ण प्रणाली पूँजीवादी व्यवस्था में बेचे और खरीदे जाते हैं। यह व्यवस्था प्रत्येक वस्तु और विचार को जिंस में बदल देती है, जो यह मानती है कि ललित कलाओं का सर्वोत्तम अभिव्यक्तियाँ हो या विरोधी या आलोचनात्मक संस्कृति सभी को बेचा जा सकता है।

जनसंचार उद्योग कुछ खास तरह के उद्योगों का निर्माण करती है। एक स्तर पर वह अन्य उद्योगों की तरह वस्तुओं (कैसेट, पुस्तकें, डीवीडी, फिल्म की रीलें) और सेवाओं (कलाकारों, तकनीशियनों) का उत्पादन करती है, तो दूसरी स्तर पर वह इनसे ज्यादा भी कुछ कर सकती है। वह लोगों को सुखद और संपन्न भविष्य का सपना बेचती है। जनसंचार माध्यमों ने जन संस्कृति को पैदा किया है। सांस्कृतिक रूप से जनसंचार एक स्तर पर आभिजात्य संस्कृति और जनसंस्कृति के अंतराल को कम करता है, तो दूसरे स्तर पर वह नए तरह के भेदभाव भी पैदा करता है। जनसंचार ने ऐसी प्रौद्योगिकी को विकसित किया है, जिसके कारण कला के विविध रूपों यथा गायन, नृत्य आदि को सभी के लिए उपलब्ध हो पाया है जो पहले सिर्फ उच्च वर्ग तक ही सीमित थे। वहीं दूसरी ओर इसने विकृत और मानव विरोधी सांस्कृतिक रूपों को घर-घर तक पहुँचा दिया है। इस प्रकार लोगों की सांस्कृतिक अभिरूचियों को विकृत भी किया है। इसने विभिन्न कला रूपों में जनता की भागीदारी को बढ़ाया है और लोगों को सृजनात्मकता के अवसर उपलब्ध कराए हैं। जॉन बी थॉम्पसन ने इस संबंध में कहा है कि "आधुनिक समाजों में प्रतीकात्मक रूपों का उत्पादन और प्रसार जनमाध्यम उद्योगों की गतिविधियों से अलग नहीं किया जा सकता।" मीडिया की भूमिका से हम सब वाकिफ हैं, यही कारण है यह आज हमारे जीवन का अभिन्न हिस्सा बन चुका है। जनसंस्कृति के विविध रूपों का प्रसार इसीलिए संभव हुआ है कि वह उनका बार-बार पुनरुत्पादन कर सकती है। प्रतीकात्मक रूपों की पुनरुत्पादकता ने ही जनसंचार के व्यावसायिक दोहन की व्यापक संभावना पैदा की है और इसी वजह से प्रतीकात्मक रूपों का उपभोगीकरण हुआ है।

ज्ञान शांति मैत्री

3.5. संस्कृति-उद्योग

1991 ई. में प्रकाशित पुस्तक 'दि कल्चर इंडस्ट्री' में एर्डोनो और होर्खाइमर ने प्रबोधन की आलोचना के एक प्रमुख बिंदु 'संस्कृति-उद्योग' की चर्चा की है। इसमें उन्होंने 'संस्कृति-उद्योग' की परिचायक एवं पोषक 'जन-संस्कृति' का आलोचनात्मक विश्लेषण प्रस्तुत करते हुए कहा है कि 'जन-संस्कृति संस्कृति-उद्योग का वाणिज्यिक उत्पादन है जो जन-संचार के विभिन्न साधनों के माध्यम से संस्कृति-विशेष के साथ-साथ कतिपय सांस्कृतिक तत्वों की ब्रांडिंग और विपणन करता है। ऐसी ब्रांडिंग और विपणन बहुधा ऐसे अतिशयोक्तिपूर्ण और तथ्यहीन विज्ञापनों के साथ की जाती है, जिनका वास्तविकता से आंशिक संबंध अथवा कोई संबंध नहीं होता है।"

जनसंचार माध्यमों के विकास ने संस्कृति को उद्योग का रूप दे दिया है। संस्कृति उद्योग की संकल्पना रखने का श्रेय फ्रेंकफर्ट स्कूल के विचारकों को है। उन्होंने संस्कृति उद्योग की प्रकृति और परिणतियों के बारे में विचार किया है। मैक्स होर्खाइमर और टी. डब्ल्यू. एर्डोनो ने संस्कृति उद्योग पद का प्रयोग सांस्कृतिक रूपों के उपभोगीकरण के संदर्भ में किया है, जिसका विकास यूरोप और अमरीका में उन्नीसवीं

सदी के अंत में और बीसवीं सदी के आरंभ में मनोरंजन उद्योग के उत्थान के साथ हुआ था। उन्होंने इस संदर्भ में फिल्म, रेडियो, टेलीविजन, लोकप्रिय संगीत, पत्रिकाओं और समाचारपत्रों के बारे में विचार-विमर्श किया है। इन विचारकों का मानना है कि मनोरंजन उद्योगों के पूँजीवादी उद्यम के रूप में पनपने का परिणाम सांस्कृतिक रूपों के मानकीकरण और विवेकीकरण में निकला है। इस प्रक्रिया का परिणाम यह हुआ है कि व्यक्ति में इन उत्पादों के बारे में आलोचनात्मक और स्वायत्त रूप में सोचने और कर सकने की क्षमता खोता जा रहा है। इन उद्योगों के द्वारा जो सांस्कृतिक वस्तुओं का उत्पादन हो रहा है वह पूँजीवादी संचयन और मुनाफा हासिल करने के लिए हो रहा है। वे जनता द्वारा स्वत:स्फूर्त ढंग से नहीं पनप रहे हैं, बल्कि जनता द्वारा उनका व्यापक पैमाने पर उपभोग हो सके, इस नजरिए से उनका उत्पादन हो रहा है।

हर्बट मार्क्यूज ने अपनी पुस्तक 'वन डाइमेंशनल मेन' में लिखा है कि विकसित पूँजीवाद में उत्पादन की प्रत्यक्ष विवेकशीलता ही सामाजिक व्यवस्था को उसी रूप में आलोचना के लिए निरापद बना देती है। व्यवस्था अपनी सफलता, वस्तुओं की उत्पादित करने की अपनी क्षमता 'बेचती' है। उनके अनुसार ''उत्पादकीय उपकरण और वस्तुओं और सेवाओं जिसके द्वारा वह (विकसित पूँजीवाद) पूर्ण सामाजिक व्यवस्था को थोपने या 'विक्रय' का उत्पादन करती है। जन परिवहन और जनसंचार के साधनों, आवास, भोजन और वस्त्र की उपभोक्ता वस्तुओं, मनोरंजन और सूचना के अप्रतिरोधी उत्पादन अपने साथ निर्धारित प्रवृत्तियों और आदतों, निश्चित बौद्धिक और भावात्मक प्रतिक्रियाओं को लाते हैं, जो उपभोक्ताओं को उत्पादकों से कमोबेश खुशी से बाँधे रखते हैं और बाद वाले (मनोरंजन और सूचना उत्पादन) के जरिए वह संपूर्ण (व्यवस्था) से बँधा रहता है। उत्पाद शिक्षित करते हैं और जोड़तोड़ करते हैं; वे मिथ्या चेतना को प्रोत्साहित करते हैं, जो कि इस मिथ्यातत्व के विरुद्ध प्रतिरक्षित होते हैं... इस प्रकार एक आयामी विचार और व्यवहार का पैटर्न उभरता है जिसमें कि विचार, आकाक्षाएँ और उद्देश्य, अपनी अंतर्वस्तु के द्वारा विमर्श और व्यवहार की स्थापित सार्वभौमिकता के पार चले जाते हैं और जो या तो इस सार्वभौमिकता की शर्तों पर अमान्य हो जाता है या बलहीन हो जाते हैं।''

ज्ञान शांति मैत्री

3.6. पब्लिक स्फियर

जर्मन दार्शनिक जुर्गेन हैबरमास ने 1962 ई. में प्रकाशित अपनी पुस्तक 'स्ट्रक्चरल ट्रांसफॉर्मेशन ऑफ दी पब्लिक स्फियर' में 'मानव जीवन के सामाजिक क्षेत्र' की चर्चा की है। सार्वजनिक क्षेत्र, सामाजिक जीवन का वह क्षेत्र है जहाँ व्यक्तियों को स्वतंत्र रूप से चर्चा करने और सामाजिक समस्याओं की पहचान करने के लिए एकत्रित होकर एक अवसर प्रदान करता है और उस चर्चा के माध्यम से सार्वजनिक पक्ष से जुड़ी समस्याओं के समाधान का प्रयास किया जाता है। जीवन के सार्वजनिक क्षेत्र में परंपराओं, सांस्कृतिक मान्यताओं, रीति-रिवाजों, धर्मों, संप्रदायों, शक्ति, सत्ता आदि से संबंधित व्यक्तिगत अनुभवों एवं व्यक्तिनिष्ठ मूल्यों हेतु कोई स्थान नहीं होता है। इसमें सहभागिता तथा अन्य लोगों से व्यक्तियों की अंतक्रियात्मक पारस्परिकता के प्रभाव में समाज में व्याप्त पारस्परिक विरोधों की समाप्ति के अवसर निर्मित होते हैं और जीवन के सावर्जनिक क्षेत्र में सद्भाव की दशा अपेक्षाकृत बढ़ जाती है। हैबरमास ने व्यक्ति के मूलभूत हितों को तीन श्रेणियों में विभाजित किया है- पहला, तकनीकी हित, दूसरा, व्यावहारिक हित और तीसरा, मुक्ति संबंधी हित। हैबरमास ने स्पष्ट कहा है कि, व्यक्ति का ज्ञान उसके हितों की पूर्ति और संरक्षण के संदर्भ में आवश्यक

साधनों तथा उपायों की पहचान में सहायता करता है। व्यक्ति के ज्ञान और हितों की ही तरह हितों की पूर्ति के साधन तीन प्रकार के हैं– पहला, कार्य एवं गतिविधियाँ, दूसरा, भाषा और तीसरा प्राधिकार।

हैबरमास का तर्क है कि सार्वजनिक क्षेत्र के लिए व्यक्तिगत-संबन्ध द्वारा 'जनमत' की अवधारणा में आकार दिया जा सकता है। इतना ही नहीं आर्थिक और संरचनात्मक परिवर्तनों की वजह से बुर्जुआ सार्वजनिक क्षेत्र अंततः समाप्त हो गया। अंतत: राज्य और समाज के बीच की सीमाएँ धुंधली हुई हैं। उनका स्पष्ट मत है कि जन मीडिया की दुनिया सस्ती और शक्तिशाली है और यह हेरफेर करने का प्रयास करता है जहाँ कोई भी मौजूद नहीं है तथा सर्वसम्मति पैदा करता है। यहाँ यह कहना समीचीन है कि पूँजीपतियों के सार्वजनिक क्षेत्र से पहले प्रतिनिधि प्रचार हुआ, जो मध्य युग से अठारहवीं शताब्दी तक मौजूद था। इसमें राजा या स्वामी को शामिल किया गया, जो दर्शकों के सामने खुद का प्रतिनिधित्व करता है; राजा एकमात्र सार्वजनिक व्यक्ति था और अन्य सभी दर्शक थे, सार्वजनिक और निजी क्षेत्र अलग नहीं हुए थे।

सार्वजनिक क्षेत्र के विकास में आर्थिक विकास महत्वपूर्ण है। हैबरमास के अनुसार-"बाजार की प्रधानता वाली आधुनिक अर्थव्यवस्था के विकास एवं वर्चस्व में भी सार्वजनिक क्षेत्र की भूमिका महती है क्योंकि यह आम-नागरिकों, बुद्धिजीवियों, व्यापारियों, उद्यमियों, उपभोक्ताओं, सार्वजनिक क्षेत्रों में कार्य करने वाले व्यक्तियों, कलाकारों आदि की आवश्यकताओं-आकांक्षाओं के साथ-साथ नवीन विचारों एवं नवाचार को सामाजिक स्वीकृति दिलाने के साथ-साथ नवीन तकनीकी एवं आवश्यकताओं की पूर्ति की व्यापारिक एवं औद्योगिक संभावनाओं के मूल्यांकन हेतु एक व्यापक, सहज और सर्वसुलभ मंच उपलब्ध कराता था। हैबरमास का मत है कि 'पूँजीवाद के अनावश्यक एवं अतार्किक विस्तार, नौकरशाही के विकास एवं कानूनों की सहायता से राज्य द्वारा व्यक्ति की स्वतंत्रता पर नियंत्रण मानव जीवन के सार्वजनिक क्षेत्र के संकुचन अथवा पतन के प्रमुख कारण रहे हैं। उनके अनुसार सार्वजनिक क्षेत्र को जीवित करके व्यक्ति के दमन और शोषण को कम किया जा सकता है।" हैबरमास उत्पादन के पूँजीवादी तरीके और इस विकास में समाचारों और वस्तुओं के व्यापार की भूमिका पर बल देता है। इसने राज्य द्वारा वर्चस्व की जाँच की और सत्ता के अवैध इस्तेमाल पर भी विवेचन प्रस्तुत किया। कॉफी हाऊस, सैलून, चाय की दुकान आदि संस्थानों में, बुर्जुआ पब्लिक के भीतर तर्कसंगत-महत्वपूर्ण बहस हुई। हैबरमास सार्वजनिक क्षेत्र को परिवार की निजी संस्था के विकास के रूप में देखता है, और वह 'साहित्यिक सार्वजनिक क्षेत्र' कहता है, जहाँ कला और साहित्य की चर्चा पहली बार संभव हो गई थी। हैबरमास सार्वजनिक क्षेत्र की भूमिका पर जोर देता है कि सिविल सोसायटी के अपने हितों को स्पष्ट करने के लिए एक बेहतर अवसर प्रदान करता है।

3.7. जनमत

जनसंचार माध्यमों द्वारा व्यक्ति के मनो-सामाजिक दशा को व्यक्त किया जाता है। माध्यमों द्वारा प्रसारित संदेशों के माध्यम से व्यक्ति के व्यवहार में परिवर्तन आता है। जनसंचार माध्यम द्वारा किसी संदेश के प्रति व्यक्तियों के दिलो दिमाग में ऐसा संवेग बनाता है, जिससे प्रेरित होकर व्यक्ति किसी खास मुद्दों के प्रति अपना सहमति व्यक्त करता है। सहमति निर्माण की प्रक्रिया व्यक्तिगत होती है हालांकि जनसंचार माध्यमों द्वारा जनमत का निर्माण किया जाता है। सहमति निर्माण से ही जनमत की निर्मिति संभव है या यों कहें कि सहमति निर्माण और जनमत दोनों अन्योन्याश्रित हैं। इसलिए हम यहाँ जनमत पर प्रकाश डालेंगे।

3.7.1. जनमत : अर्थ एवं स्वरूप- जनमत शब्द दो शब्दों- जन और मत के योग से बना है। जनमत से आशय है- जनता का मत (Public Opinion)। जनता या जन ऐसा मनुष्य–समूह होता है जिनके हित समान होते हैं और जो किसी भी विवादास्पद विषय पर समान मत रखते हैं। जनमत जनता का मत होता है। मनोवैज्ञानिक रूप से जनता का प्रयोग उस समूह के लिए किया जाता है, जिसके सदस्यों में आमने-सामने को संबंध तो नहीं होता किंतु वे सभी समान मत और इच्छाओं से बँधे होते हैं। सुप्रसिद्ध राजनीतिशास्त्री जॉन स्टुअर्ट मिल ने जनमत के संबंध में कहा है, "जनमत के नाम पर या कानून द्वारा स्थापित व्यवस्था के आधार पर, जनसाधारण से एक विशेष स्तर के व्यवहार और आचरण की अपेक्षा की जाती है। व्यवहार के यह मापदंड या तो स्वयं जनसाधारण स्थिर करते हैं या समाज के सत्ताधारी वर्ग अपने प्रभाव से काम लेते हैं। यह निर्णय संबंधित वर्गों की रुचि या अरुचि पर ही होता है, जिसे जनमत की संज्ञा दी जाती है।" जेम्स ब्राइस कहते हैं, "एक समुदाय के सदस्य जनसाधारण के जीवन से संबंधित समस्याओं पर जो भी विचार रखते हैं, उन सबके सामूहिक रूप को जनमत की संज्ञा दी जाती है।" यंग के शब्दों में "जनमत स्वयं सचेत समुदाय का एक सामान्य महत्व के प्रश्न के उपर विवेकपूर्ण सार्वजनिक विवेचना के बाद का सामाजिक निर्णय है।" विलोबी के अनुसार- "जनमत वह शक्ति है, जो कानून और व्यवस्था को ठोस आधार देती है। इसके बिना सामाजिक जीवन में स्थिरता असंभव है।" डॉ. बलदेवराज गुप्त के अनुसार- "मनुष्य आज के संचार माध्यमों और विभिन्न साधनों को अपनाकर जनमत निर्माण के कार्य में जूझा हुआ है। यह व्यवसाय दिनदिन तकनीकी और वैज्ञानिक रूप लेता जा रहा है।" जेम्स टी. यंग के अनुसार- "जनमत स्वयं सचेत समुदाय का एक सामान्य महत्व के प्रश्न के ऊपर विवेकपूर्ण सार्वजनिक विवेचना के बाद सामाजिक निर्णय है।' जनमत एक ऐसा निर्णय है, जो बहुत वाद-विवाद के बाद सोच-विचार से लिया जाता है। इसमें विवेकशीलता का गुण होता है। जनमत के संदर्भ में उपरोक्त परिभाषाओं के आधार पर कहा जा सकता है कि जनमत में जनसाधारण की विविध अभिवृत्तियों एवं स्थितियों का अध्ययन करने और इसके तद्रूप परिणामों से जनमत निर्माण की प्रक्रिया अपनाने की जरूरत है। यह इसलिए भी आवश्यक है कि जनसंचार में से व्यक्ति स्तर पर किसी भी अभिवृत्ति या स्थिति को स्पष्टत: और पूर्णत: जाने बगैर जनमत निर्माण का सार्थक लाभ नहीं मिलता है।

3.7.2. जनमत का निर्माण- जनमत का निर्माण कुछ मान्यताओं पर आधारित होता है, जिसमें कहा जाता है कि जनता के सदस्य एक दूसरे के प्रति सहनशील, विचार सुनने वाला, विचार प्रस्तुत करने की स्वतंत्रता हो, निर्णय का आदर करने वाले (बहुमत-अल्पमत) जनमत का निर्माण सदस्यों के आपसी सहयोग से होता है। जनमत का संबंध सार्वजनिक विषयों से होता है।

3.7.3. जनमत के रूप- यह जनसाधारण की समान अभिवृत्तियों की स्पष्टत: व्यक्त की जा सकने वाली व्यवस्था है, जिसके दो प्रमुख रूप हैं-

क. प्रत्यक्ष जनमत– प्रत्यक्ष जनमत से आशय है जनता का ऐसा आचरण जिसको सभी प्रत्यक्ष देख सकते हैं यानी कथनी और करनी में भेद नहीं दिखता।

ख. अप्रत्यक्ष जनमत– अप्रत्यक्ष जनमत से आशय है जनमत का अप्रत्यक्ष रूप ऐसा होता है जिसकी प्रत्यक्षत: कोई जानकारी नहीं दी जा सकती तथा अनसाधारण अपने सुविचारित एवं सुनिश्चित निर्णय का उल्लेख किसी से नहीं करता है।

3.7.4. जनमत निर्माण की प्रक्रिया (Process of formulation of Public Opinion)- इसके लिए निम्न बिंदुओं पर ध्यान देना आवश्यक है- 1. कोई समस्या या मुद्दा (Any Problem or issues), 2. प्रारंभिक छानबीन संबंधी विचार विमर्श (Preliminary and exploratory thinking), 3. सार्वजनिक वाद-विवाद (Public Debate) और 4. एकमत का स्तर (The stage of consensus)।

1. कोई समस्या या मुद्दा (Any Problem or issues)- जनमत का संबंध किसी समस्या या मुद्दा से होता है, जिसका संबंध सारे समूह, समाज या समुदाय से होता है।
2. प्रारंभिक छानबीन संबंधी विचार विमर्श (Preliminary and exploratory thinking)- जनमत निर्माण के दूसरे स्तर पर समूह या समुदाय से संबंधित लोग उस विषय या समस्या से संबंधित छानबीन करते हैं, उसके कारणों, परिणामों एवं गंभीरतापूर्वक उसे हल करने के उपायों पर सोचते हैं।
3. सार्वजनिक वाद-विवाद (Public Debate)- किसी समस्या पर विचार करते समय प्रारंभिक छानबीन एवं तथ्यों के ज्ञात हो जाने के उपरांत संबंधित विषय पर पक्ष एवं विपक्ष में तर्क वितर्क करते हैं। इससे समस्या के समाधान के लिए कई उपाय सामने आते हैं।
4. एकमत का स्तर (The stage of consensus)- किसी भी समस्या के समाधान के लिए पक्ष विपक्ष में तर्क वितर्क करने के उपरांत एकमत पर पहुँचते हैं। इसका आशय यह कदापि नहीं कि समूह के सभी व्यक्ति एक मत को स्वीकार कर लेते हैं।

3.7.5. जनमत निर्माण के साधन (The agencies of formation of Public Opinion)- लोकतांत्रिक व्यवस्था में किसी भी प्रकार का परिवर्तन करने के लिए उसके पक्ष में जनमत निर्माण करना आवश्यक हो जाता है। आज भारत में संसदीय बनाम राष्ट्रपति प्रणाली पर जनमत तैयार करने की बात शुरू हो गई है। जनमत किसी साधन के बिना संभव नही होता। जनमत निर्माण के प्रमुख साधन हैं– 1. समाचार पत्र, पत्रिकाएँ एवं एजेंसियाँ (Newspaper, Magazine and Agencies), 2. रेडियो (Radio), 3. चलचित्र (Cinema), 4. दूरदर्शन (Television), 5. इश्तेहार (Posters) और 6. जनमत नेता (Opinion Leaders)।

1. समाचार पत्र, पत्रिकाएं एवं एजेंसियां (Newspaper, Magazine and Agencies)- वर्तमान समय में जनमत निर्माण के लिए समाचार पत्र-पत्रिकाओं की महती भूमिका है। समाचार एजेंसियाँ सहित पत्र-पत्रिकाएँ समाज में व्याप्त समस्याओं पर विविध दृष्टिकोणों से विचार व्यक्त करते हैं, जिससे समाज में किसी खास मुद्दे पर जनमत तैयार होता है।

2. रेडियो (Radio)- रेडियो जनमत निर्माण के लिए आवश्यक उपकरण है। भारत में कुछ लोग निरक्षर भी हैं, उनसे संवाद स्थापित करने के लिए रेडियो एक महत्वपूर्ण माध्यम है। किसी समस्या या विषय के पक्ष में जनमत बनाने के उद्देश्य से अनुकूल सूचनाओं को प्रसारित किया जाता है।

3. चलचित्र (Cinema)- चलचित्र या सिनेमा अभिव्यक्ति का एक सशक्त माध्यम है। जनमत निर्माण में इसकी भूमिका महत्वपूर्ण है। फिल्म निर्माता किसी विशेष उद्देश्य को ध्यान में रखकर ही फिल्म की कहानी, संवाद, गीत आदि का निर्माण करता है। अभिनेता-अभिनेत्री द्वारा आकर्षक तरीके से समस्याओं के समाधान पर प्रकाश डालते हैं, इससे जनता प्रभावित होती है और जनमत का निर्माण होता है।

ज्ञान शांति मैत्री

4. दूरदर्शन (Television)- आधुनिक युग में दूरदर्शन सबसे शक्तिशाली एवं प्रभावशाली माध्यम है क्योंकि इसमें श्रव्य तथा दृश्य दोनों विद्यमान हैं। दूरदर्शन पर विविध विषयों तथा समस्याओं से संबंधित भाषणों, विद्वानों एवं विशेषज्ञों के विचार, वाद-विवाद, नाटक आदि प्रस्तुत किए जाते हैं, जिससे एक विशेष जनमत का निर्माण होता है।

5. इश्तेहार (Posters)- आजकल भिन्न-भिन्न चित्रों एवं शब्दों के माध्यम से घटनाओं को प्रस्तुत करके जनता के मतों को एक विशेष दिशा में मोड़ने का प्रयास इश्तेहार द्वारा किया जाता है। सामाजिक मुद्दे यथा कन्या भ्रूण हत्या से बचाव, परिवार कल्याण, पर्यावरण, सुरक्षा, शिक्षा आदि के संबंध में इश्तेहार का प्रयोग काफी सफल रहा है।

6. जनमत नेता (Opinion Leaders)- जनमत नेता समाज में प्रभावशाली लोग होते हैं और इनकी बातों से लोग प्रभावित होते हैं। हमारे समाज में जनमत नेताओं का व्यक्तिगत प्रभाव लोगों के मतों एवं रवैये को परिवर्तित करने में सर्वाधिक महत्वपूर्ण होता है। जनमत नेता संगोष्ठियों, बैठकों एवं अपने संपर्कों द्वारा व्यक्तिगत रूप से सूचनाओं का विश्लेषण अपने तरीके से करते हैं।

3.7.6. जनमत निर्माण के स्तर (Important step involved in the Public Opinion)

क. किसी समस्या या मुद्दे का उपस्थित होना- किसी समस्या या मुद्दे का होना जनमत निर्माण का पहला चरण होता है- हिंदूओं में विधवा पुनर्विवाह की प्रथा के अनुकूल जनमत बनाने के लिए यह आवश्यक है कि हिंदू यह समझे कि विधवा पुनर्विवाह उनके समाज की एक समस्या है और इसका समाधान होना चाहिए।

ख. प्राथमिक खोजबीन का स्तर- समस्या के प्रति रूचि रखने वाले व्यक्ति कुछ ऐसे साधनों की खोज करें, जो समस्या के समाधान में सहायक हो। वे समस्या को समझने की कोशिश भी करते हैं। जैसे हिंदुओं में विधवा पुनर्विवाह के संबंध में इस स्तर पर पता लगाया जाता है कि यह किस सीमा तक जटिल समस्या है। इस समस्या के कारण विधवा स्त्रियाँ कितनी दयनीय है।

ग. सार्वजनिक वाद-विवाद का संगठित रूप- जब समस्या एक निश्चित स्वरूप धारण कर लेती है, तो समस्या के संबंध में लोगों में वाद-विवाद होता है और मतों का परस्पर आदान-प्रदान होता है।

घ. मत निर्माण का स्तर- यह जनमत निर्माण का अंतिम चरण है। इस स्तर पर जनता की बातों, वाद-विवादों, विचार-विमर्श आदि के द्वारा सहमति का निर्माण हो जाता है। यहाँ यह उल्लेखनीय है कि जिस अंतिम मत पर लोग पहुँचते हैं वह सभी व्यक्तियों का एक सा विचार नहीं होता है कुछ लोग इस मत का विरोध भी कर सकते हैं।

3.7.7. जनमत को प्रभावित करने वाले तत्व (Influencing factors of Public Opinion)

1. **व्यक्तिगत निश्चय-** जनमत को प्रभावित करने वाले तत्वों में व्यक्तिगत तत्वों का महती योगदान है। प्रत्येक व्यक्ति में अपनी कुछ मानसिक प्रतिमाएँ, अभिवृत्तियाँ, मूल्य व आदर्श होते हैं, जो जनमत को ज्यादा प्रभावित करते हैं।
2. **विरोधी दवाब-** समाज में किसी समस्या के प्रति लोगों का मत भिन्न-भिन्न होता है, समूहों में बँटे रहते हैं। इन समूहों के उद्देश्य एवं कार्य भिन्न-भिन्न होते हैं, जो एक-दूसरे के विरोधी हो सकते हैं। इन

ज्ञान शांति मैत्री

विरोधी प्रभावों को हम विरोधी दवाब कहते हैं। विरोधी दवाब का जनमत के निर्माण में महत्वपूर्ण योगदान होता है।

3. **सामाजिक वर्ग-** व्यक्ति जिस सामाजिक वर्ग का सदस्य होता है उस वर्ग का भी उसके मत निर्धारण में योगदान होता है प्रायः वह दूसरे वर्गों के विचारों और हितों से अनुशासित होता है इसलिए जैसा उसके सामाजिक वर्ग का मत होता है वैसा ही अपना ही मत बनाता है।
4. **नेतृत्व-** किसी भी समस्या के प्रति जनमत बनाने के लिए नेतृत्व की जरूरत पड़ती है। समाज के ईमानदार और साफ सुथरा चरित्र वाले व्यक्ति का नेतृत्व जनमत निर्माण के लिए आवश्यक तत्व है।
5. **शिक्षा-** जनमत निर्माण के लिए शिक्षा एक प्रमुख तत्व है।
6. **व्यक्तियों के सूचना का स्तर-** सूचना ही शक्ति है। किसी भी घटना या समस्या के प्रति तथ्यों के संदर्भ में जानकारी रखकर लोगों से वार्तालाप करने से संबंधित व्यक्ति या समूह पर असर पड़ता है।
7. **समाजिक घटनाएँ-** जनमत निर्माण में सामाजिक घटनाओं का भी प्रभाव पड़ता है।
8. **मध्यमों का प्रभाव-** जनमत के निर्माण में जनसंचार माध्यमों की भूमिका महत्वपूर्ण है। जनसंचार माध्यम यथा रेडियो, टेलीविजन, समाचार पत्र, पत्रिकाएँ, सोशल मीडिया द्वारा प्रसारित संदेशों का प्रभाव जनमत निर्माण में किया जाता है।
9. **सार्वजनिक भाषण-** समाज से जुड़ी किसी भी समस्या के प्रति भाषण द्वारा वक्ता प्रत्यक्ष रूप से संवाद करते हैं और श्रोताओं को विषय से संबंधित तथ्यों से अवगत कराते हैं। सार्वजनिक भाषण से जनमत का निर्माण किया जाता है।
10. **जनमत नेता-** जनमत नेता समाज में किसी समस्या के प्रति जनमत निर्माण में महत्वपूर्ण भूमिका का निर्वाह करता है।

इस प्रकार से कहा जा सकता है कि जनमत के निर्माण में जनसंचार माध्यमों की महत्वपूर्ण उपयोगिता होती है।

ज्ञान शांति मैत्री

3.8 सारांश

इस इकाई में संचार सैद्धांतिकी को व्याख्यायित करते हुए जनसंचार के नियामक सिद्धांतों की विस्तारपूर्वक चर्चा की गई है। संस्कृति का संबंध मानव जीवन की गतिविधियों से सन्निहित है। मानव सभ्यता के विकास के साथ संस्कृति का विकास होता है और इसमें जनसंचार माध्यमों की भूमिका महत्वपूर्ण होती है। प्रौद्योगिकी समाज में जन संस्कृति के विस्तार के साथ संस्कृति ने एक उद्योग का रूप धारण कर लिया है। सांस्कृतिक उत्पादों को एक उद्योग का रूप देना पूँजीवादी व्यवस्था की परिघटना है, जिसका मकसद इसके द्वारा पूँजी का संचयन और मुनाफा कमाना है। एर्डोनो और होर्खाइमर द्वारा प्रतिपादित 'संस्कृति उद्योग' को भी समझने का प्रयास किया गया है। हैबरमास द्वारा प्रतिपादित पब्लिक स्फियर द्वारा इस बात को समझने का प्रयास किया गया है कि बाजार की प्रधानता वाली आधुनिक अर्थव्यवस्था के विकास एवं वर्चस्व में भी सार्वजनिक क्षेत्र की भूमिका उल्लेखनीय है। जनमत पर विस्तार से चर्चा करते हुए यह समझने का प्रयास किया गया है कि, जनमत का निर्माण सदस्यों के आपसी सहयोग से होता है और इसका संबंध सार्वजनिक

विषयों से होता है। जनमत निर्माण के लिए सामाजिक, राजनीतिक, आर्थिक, शैक्षिक परिवेश की अनुकूलता आवश्यक होती है।

3.9. बोध प्रश्न

बहुविकल्पीय

प्रश्न 1 : शब्द Theoria की उत्पत्ति किस भाषा से हुई है?

विकल्प : क. ग्रीक ख. लैटिन

ग. पुर्तगीज घ. फ्रेंच

उत्तर : क.

प्रश्न 2 : 'पब्लिक स्फियर' पदबंध के प्रयोगकर्ता थे?

विकल्प : क. एर्डोनो ख. होर्खाइमर

ग. मार्क्यूज घ. हैबरमास उत्तर : घ.

प्रश्न 3 : निम्न में से किस विद्वान ने 'संस्कृति उद्योग' का प्रतिपादन किया ?

विकल्प : क. हैबरमास ख. एर्डोनो

ग. लासवेल घ. श्रेम उत्तर : ख.

प्रश्न 4 : जनसंचार के नियामक सिद्धांत के लिए निम्न में से किस विद्वान का संबंध नहीं रहा है ?

विकल्प : क. टी. पीटर्सन ख. जी.एफ. साइबर्ट

ग. हेराल्ड डी. लासवेल घ. डब्ल्यू. श्रेम उत्तर : ग.

प्रश्न 5 : निम्न में से किस कमिटी की रिपोर्ट 'मेनी वायसेज वन वर्ल्ड' के रूप में प्रतिपादित की गई?

विकल्प : क. चंदा समिति ख. मैकब्राइड समिति

ग. वर्गीज समिति घ. जोशी समिति उत्तर : ख.

ज्ञान शांति मैत्री

लघु उत्तरीय

प्रश्न 1 : संस्कृति उद्योग पर टिप्पणी लिखिए।

प्रश्न 2 : जनमत से आप क्या समझते हैं, जनमत निर्माण के साधन बताइए।

प्रश्न 3 : जनमाध्यमों का विकास सिद्धांत को व्याख्यायित कीजिए।

दीर्घ उत्तरीय

प्रश्न 1 : जनसंचार के नियामक सिद्धांत पर प्रकाश डालिए।

प्रश्न 2 : जनसंचार और संस्कृति के अंतर्संबंधों की समीक्षात्मक विवेचना कीजिए?

व्यवहार

कार्य एक : जनसंचार माध्यमों द्वारा सांस्कृतिक उत्पादों के उद्योग के रूप में विकसित होने की सामाजिक स्थितियों पर अपना दृष्टिकोण प्रस्तुत कीजिए?

3.10. कठिन शब्दावली

- **संस्कृति** : मनुष्य की विवेक क्षमता के कारण उसे अन्य जानवरों से अलग करती है। यह विवेक क्षमता उसके जीवन को सांस्कृतिक आयाम देती है। संस्कृति मनुष्य जीवन की सभी क्रियाओं में समाहित होता है। उसके खाने-पीने, पहनने-ओढ़ने से लेकर उसके रचने, बनाने की सारी क्रियाओं का संबंध संस्कृति से है। संस्कृति मनुष्य को मनुष्य होने के अर्थ देती है।
- **प्रौद्योगिकी समाज** : ऐसा समाज जो अपनी अधिकांश संपदा और आय उन उत्पादन विधियों से प्राप्त करता है जो ऊर्जा के आधुनिक स्रोतों जैसे कि कोयले, बिजली, पेट्रोल, न्यूक्लीय शक्ति इत्यादि पर आधारित हो।

3.11. संदर्भ एव उपयोगी ग्रंथ सूची

1. कुलश्रेष्ठ, वि. एवं जैन, हं., (2005). *जनसंचार शोध प्रविधियां*. जयपुर : माया प्रकाशन।
2. सिंह, श्रीकान्त. (2001). *संप्रेषण : प्रतिरूप एवं सिद्धांत'*. फैजाबाद : भारती पब्लिशर्स एण्ड डिस्ट्रीब्यूटर्स।
3. जनसंचार के सिद्धांत-4, कोटा खुला विश्वविद्यालय, कोटा
4. कौल, अशोक कुमार एवं कुमार सुशील. (2016). *उच्चतर समाजशास्त्रीय सिद्धांत*. नोएडा : पियर्सन इंडिया एजुकेशन सर्विसेज प्रा. लि.।
5. एडर्नो, टी.डब्ल्यू., अनु. सिंह, राम कवींद्र, (2006). *संस्कृति उद्योग*. दिल्ली : ग्रंथ शिल्पी प्रकाशन।
6. विलियम्स, रेमंड. *संचार माध्यमों का वर्ग चरित्र*. दिल्ली : ग्रंथ शिल्पी प्रकाशन।
7. पारख, जवरीमल. *जनसंचार माध्यमों का वैचारिक परिप्रेक्ष्य*. दिल्ली : ग्रंथ शिल्पी प्रकाशन।
8. जोशी, पूरनचंद्र. *संस्कृति विकास और संचार क्रांति*. दिल्ली : ग्रंथ शिल्पी प्रकाशन।
9. कुलश्रेष्ठ, विजय. *जनसंपर्क, प्रचार एवं विज्ञापन*. जयपुर : राजस्थान प्रकाशन।

ज्ञान शांति मैत्री

इकाई – 4
भारत में संचार परिदृश्य

इकाई की रूपरेखा

4.1. उद्देश्य
4.2. मानव संचार का विकास
4.3. जनसंचार माध्यमों की विकास यात्रा
4.4. श्रव्य माध्यम-आकाशवाणी (रेडियो) की विकास यात्रा
4.5. दृश्य-श्रव्य माध्यम (टेलीविजन) का विकास
4.6. वैकल्पिक मीडिया के रूप में इंटरनेट
4.7. सारांश
4.8. बोध प्रश्न
    4.8.1. बहुविकल्पीय
    4.8.2. लघु उत्तरीय
    4.8.3. दीर्घ उत्तरीय
    4.8.4. व्यवहार
4.9. उपयोगी ग्रंथ सूची

4.1. उद्देश्य

इस इकाई के उद्देश्य निम्नवत हैं –

1. प्रस्तुत इकाई में मानव संचार के विकास क्रम को समझना।
2. भारत में मुद्रित माध्यम के विकास को जानना।
3. श्रव्य माध्यम आकाशवाणी (रेडियो) को जानना।
4. दृश्य-श्रव्य माध्यम (टेलीविजन) को समझना।
5. वैकल्पिक मीडिया के संवाहक इंटरनेट की विकास यात्रा को समझना।

ज्ञान शांति मैत्री

4.2. मानव संचार का विकास

मानव जीवन में सांस और संचार का अटूट रिश्ता है। अतएव हमें संचार के विकास क्रम को जानना आवश्यक है। दरअसल मानव विकास का इतिहास प्रकृति से जूझते हुए निरंतर अपने अस्तित्व को बचाए रखने का इतिहास है। इस संघर्ष के दौरान ही उसने समूह में रहना शुरू किया। आदि मानव अपने सहयोगियों के साथ शिकार के दौरान संकेतों और ध्वनियों के रूप में संचार करता था। मनुष्य जब से समूह में रहना सीखा तभी से हम संचार कर रहे हैं, खतरों की चेतावनी देने के लिए संदेश के आदान-प्रदान की बड़े पैमाने पर जरूरत महसूस की गई। ध्वनियों और इशारों के सामूहिक रूप में विशेष अर्थ थे। कई आदिमानव समाजों ने

अपनी गुफाओं में भित्तिचित्रों की मदद से अपनी भावनाओं को उकेरना शुरू किया। दुनिया के कई हिस्सों में इस प्रकार के चित्र उपलब्ध हैं। मध्यप्रदेश के भीमबेटका में भी शिकार करते मानव के चित्र मिलते हैं, जिन्हें विद्वान आदि मानव काल में संचार के रूप को बताते हैं। संचार का यह आदिम रूप था। मनुष्य जब झुंडों में रहने के बजाए कबीलों में जीवन जीने लगा तो उसका संचार पहले से अधिक व्यवस्थित हुआ। मानव ने तस्वीरों और प्रतीकों के जरिए संचार करना सीख लिया। व्यवस्थित भाषा का जन्म मनुष्य की एक बड़ी उपलब्धि थी। मनुष्य शिकारी जीवन से कृषक जीवन को अपनाया। वे अब घुमंतू जीवन छोड़ एक स्थान पर नगर बसाने लगे। हड़प्पा, मोहनजोदड़ों की संस्कृति में हम मूर्तियों और सिक्कों के रूप में अनेक प्रतीक पाते हैं, जिससे पता चलता है कि ये नगरीय समाज एक समृद्ध भाषा विकसित कर चुका था। यही नहीं प्रतीकों की भाषा (पिक्टोग्राफिक्स) के कई चित्र मिले हैं, जिन्हें अभी तक पूरी तरह पढ़ा नहीं जा सका है।

वैदिक काल में श्रुतियाँ और वेद सभी कुछ वाचिक परंपरा में मौजूद था। यज्ञों में मंत्रोच्चारण के जरिए ही देवताओं को खुश करने की कोशिश की जाती थी। सारा ज्ञान भी वाचिक परंपरा के माध्यम से ही एक पीढ़ी से दूसरी पीढ़ी तक पहुँचता था। वेदों को बहुत बाद में लिपिबद्ध किया गया। गुरु अपने शिष्यों को पूरा का पूरा वेद याद करवा देता था। ऋचाओं को पत्तों पर लिखकर संरक्षित करने की कोशिश की गई। बौद्ध और जैन काल में समृद्ध भाषा विकसित हो चुकी थी और उसको पत्थरों पर उकेर कर स्थायी बनाने की भी परंपरा प्रचलित हो गई थी। महात्मा बुद्ध ने आम लोगों द्वारा बोली जाने वाली प्राकृत भाषा में अपने प्रवचन दिए, ताकि जन-जन तक उनकी बात पहुँच सके। मंदिर या सार्वजनिक स्थल संचार के प्रभावशाली केंद्र बने। इस काल में ढ़ोल-नगाड़ों के माध्यम से गाँव-गाँव में मुनादी भी राजा के आदेशों को जनता तक पहुँचाने का एक माध्यम था। इस सबके बावजूद प्राचीन समाज में वाचिक परंपरा ही लंबे समय तक प्रमुख संचार माध्यम बनी रही।

लिखित इतिहास में सबसे पहले भाषा का विकास हुआ और इस क्रम में अक्षरों का जन्म हुआ। नगाड़ों और अन्य संकेतों की गूँज पहले पहल हवा में प्रसारित हुई। तराशे गए पत्थरों के संकलन से पहली लाइब्रेरी बनी। जैसे ही पहली पुस्तक और दस्तावेज छापाखानों से छपकर बाहर निकली तो वे सत्ताधारियों का हथियार बन गए, क्रांति के अस्त्र भी बने। अखबार का पन्ना व्यापार व्यवसाय का प्रभावी माध्यम साबित हुई। मुद्रित किताबों से शिक्षा व ज्ञान का अकूत भंडार मिल गया।

16वीं 17वीं शताब्दी आते-आते पत्र-पत्रिकाएँ और पोस्टर-पर्चे आदि ज्ञान के प्रमुख औजार बन गए। ब्रिटिश, अमरीकी और फ्रांसीसी क्रांतियाँ संभव इसलिए हो पाई क्योंकि इन्होंने जनसंचार के साधनों को अपनाया। 15वीं शताब्दी की बड़ी घटना क्या है?, एक ऐसी मशीन का विकास हुआ, जिससे हस्तलिपि की 100 प्रतिलिपियाँ शीघ्रता से तैयार कर सके। इसी तरह 19वीं शताब्दी में बेल, मार्कोनी जैसे वैज्ञानिकों व अन्य प्रयोगशालाओं ने ऐसी मशीनों का इजाद किया, जो काफी दूर बैठे लोगों के लिए देखने व सुनने के लिए संभव हुआ। 20वीं शताब्दी में अंतरिक्ष में जगह-जगह लटके उपग्रहों ने पूरी दुनिया को एक गाँव में बदल दिया।

ज्ञान शांति मैत्री

4.3 जनसंचार माध्यमों की विकास यात्रा

मुद्रित माध्यम का विकास– जनसंचार माध्यमों का विकास मानव विकास के इतिहास में एक नवीन परिघटना है। छापाखाना का आविष्कार जॉन गुटेनबर्ग द्वारा 1450 ई. में किया गया, जो कि जनसंचार माध्यमों के विकास के मार्ग को प्रशस्त किया। इस छापेखाने के आविष्कार ने एक अभूतपूर्व क्रांति का सूत्रपात किया, जिसे औद्योगिक क्रांति ने काफी तीव्र गति से बढ़ाया। औद्योगिक क्रांति से उत्पन्न पूँजीवादी व्यवस्था में इस तकनीक का व्यावसायिक इस्तेमाल उस समय की माँग बन गई। जे.बी. प्रिमरोज के अनुसार भारत में प्रथम छापेखाने की स्थापना गोवा के 'संत पॉल कॉलेज' में नवंबर 1556 ई. में की गई थी। यह अविसीनियन प्रोजेक्ट का एक हिस्सा था। यहीं से भारत में मुद्रण का प्रारंभ माना जा सकता है। सन् 1557 में गोवा में स्थापित छापाखाने में पहली पुस्तक के रूप में सेंट फ्रांसिस सैक्वीयर लिखित 'ईसाई धर्म की पुस्तकें' मलयालम भाषा में छपीं। भारत में जनसंचार के माध्यमों के प्रारंभ होने में अंग्रेजों एवं पुर्तगालियों का बहुत बड़ा योगदान है। यूरोपियनों द्वारा छापेखाने की स्थापना का प्रारंभिक उद्देश्य ईसाई धर्म का प्रचार-प्रसार करना था, लेकिन जैसे-जैसे वे व्यापारी से शासक के रूप में तब्दील होने लगे, उनके कार्यक्षेत्र में विस्तार होता गया। दूसरा प्रेस सन् 1578 में तमिलनाडु के तिनेवेली जिले के पौरीकील नामक स्थान पर लगा। तीसरा प्रेस मालाबार के विपिकोटा में पादरियों ने सन् 1602 में स्थापित किया। सन् 1616 में जब अंग्रेज भारत में आए तो पुर्तगालियों ने बंबई में प्रेस लगाया। ईसाई पादरियों से उत्साहित और प्रेरित होकर कुछ भारतीयों ने अपने धर्म ग्रंथ मुद्रित और प्रकाशित करने का साहस किया। काठियावाड़ के 'भीमजी पारख' ने सन् 1662 में बंबई में छापाखाना स्थापित किया।

''कंपनी द्वारा 1674 ई. में ही बंबई में प्रिंटिंग प्रेस की स्थापना हो गई थी और उसे काफी मात्रा में टाइप और कागज की आपूर्ति की जाती थी। एक दूसरा प्रेस मद्रास में 1772 ई. में स्थापित किया गया और एक सरकारी प्रिंटिंग प्रेस की स्थापना 1779 ई. में कलकत्ता में की गई।'' कंपनी के पास प्रिंटिंग प्रेस तो था लेकिन वे समाचारपत्र निकालने की पहल नहीं कर रहे थे। ''इस संदर्भ में यह बात महत्वपूर्ण है कि समाचारपत्र शुरू करने का पहला प्रयास कलकत्ता में ही 1776 ई. में विलियम बोल्टस द्वारा किया गया, जिसने उसी वर्ष कुछ समय पहले कंपनी के प्राधिकार के तहत निजी व्यापार करने पर कोर्ट ऑफ डायरेक्टर्स द्वारा प्रतिबंध लगा दिए जाने के बाद कंपनी की सेवा से त्यागपत्र दे दिया था।'' लेकिन उसके इरादों को जानकर कंपनी ने उसे ऐसा करने से रोक दिया और उसे वापस यूरोप भेज दिया।

इसके बाद जेम्स आगस्टस हिकी (जो अपने आपको कंपनी का पूर्व मुलाजिम घोषित करता था), ने 30 जनवरी, 1780 को 'बंगाल गजट' या 'कलकत्ता जनरल एडवरटाइजर' नाम के समाचारपत्र का प्रकाशन शुरू किया। यह समाचारपत्र मूलतः कंपनी के कर्मचारियों के निजी जीवन को सार्वजनिक करने का कार्य करती थी। उसके द्वारा किए जा रहे इन कार्यों के कारण थोड़े दिनों अर्थात् सन् 1782 में उसके छापाखाना एवं संपत्ति जब्त कर ली गई। इससे उसे अनेक कठिनाईयों का सामना करना पड़ा और जनरल पोस्ट ऑफिस से समाचारपत्र को वितरित करने की सुविधा से भी वंचित कर दिया गया। उसे एक मामले में जून 1781 में एक वर्ष की सजा एवं 5000 रुपये का जुर्माना भी लगाया गया। लेकिन इसके बावजूद भी वह विचलित नहीं हुआ। हिकी को गिरफ्तार किया गया परंतु वे निर्भीक की भाँति जेल से पत्र का संपादन करते रहे। हिकी का यह वक्तव्य कि 'अपने मन और आत्मा की स्वतंत्रता के लिए अपने शरीर को बंधन में डालने में मुझे आनंद आता

है।' यह वक्तव्य पत्रकारों के लिए आज भी प्रेरणाप्रद है। अपने पत्र की नीति के बारे में उन्होंने लिखा था कि- "यह राजनीतिक और व्यापारिक पत्र खुला तो सबके लिए है, पर प्रभावित किसी से नहीं। भारत में प्रेस को जन्म देने का श्रेय हिकी को ही है।

हिकी के इस प्रयास से सबक लेते हुए हेस्टिंग्स समर्थित समाचारपत्र 1780 ई. में मेसर्स बी. मेसनिक और पीटर रीड ने 'इंडिया गजट' का प्रकाशन शुरू किया। 1784 में 'कलकत्ता गजट' का प्रकाशन सीधे सरकार के संरक्षण में शुरू हुआ। 1785 में 'बंगाल जर्नल' और मासिक पत्र 'ओरिएंटल मैगजीन ऑफ कलकत्ता एम्यूजमेंट' प्रकाशित हुए। ''हिकी की तरह 'बंगाल जनरल' के संपादक विलियम डुएन ने कंपनी की कारगुजारियों के विरुद्ध अभियान चलाने का प्रयास किया लेकिन कंपनी की ताकत भारी पड़ी और उसे अपनी संपत्ति छोड़कर भारत से जाना पड़ा।'' इसी दौरान मद्रास में सबसे पहला समाचारपत्र 1785 ई. में 'मद्रास कूरियर' नाम से, 1791 में 'हरकारू' के नाम से प्रकाशित हुआ। इसका प्रकाशक रिचर्ड जौनसन एक सरकारी मुद्रक था। बंबई से 1789 में 'बम्बई हेराल्ड' का प्रकाशन शुरू हुआ।

भारतीय भाषाई समाचारपत्रों का दौर सन् 1816 से प्रारंभ हुआ। इससे पूर्व जो भी समाचारपत्र प्रकाशित हुए उनके संपादक और प्रकाशक यूरोपीय ही थे। इस वर्ष पहला भारतीय समाचारपत्र 'बंगाल गजट' के नाम से अस्तित्व में आया। इसे 'गंगाधर भट्टाचार्य' ने प्रगतिवादी हिंदुत्व धर्म के प्रतिपादन के लिए निकालना शुरू किया था। लेकिन यह एक वर्ष में ही बंद हो गया। दरअसल इस समय देश में ऐसे शिक्षित वर्ग का उदय होने लगा था जो देश की बदहाली, सामाजिक पिछड़ेपन और सांस्कृतिक हीनताबोध के मूलभूत कारणों को समझने लगे थे और इन्हें दूर करने के लिए प्रयासरत भी थे। इसी बीच सेरामपुर के ईसाई मिशनरियों ने अपने धार्मिक विश्वासों के प्रचार के लिए तीन पत्रिकाओं का प्रकाशन शुरू किया। दिग्दर्शन नाम से बांगला भाषा की मासिक पत्रिका, समाचार दर्पण नाम से बांगला साप्ताहिक समाचारपत्र और फ्रेंड ऑफ इंडिया नाम से अंग्रेजी मासिक पत्रिका।

इसी दौरान भारतीय समाचारपत्र जगत में दो विशिष्ट व्यक्तियों का पदार्पण हुआ- जेम्स सिल्क बकिंघम और राजा राममोहन राय। इन दोनों ने प्रेस की स्वतंत्रता के लिए चले संघर्ष में महत्वपूर्ण भूमिका निभाई। जेम्स सिल्क बकिंघम ने आठ पृष्ठों का सप्ताह में दो बार प्रकाशित होने वाला 'कलकत्ता जर्नल' शुरू किया। उसने बताया कि संपादक का काम 'गवर्नरों को उनके व्यक्तित्व की याद दिलाना, उनके द्वारा की जाने वाली गलतियों के लिए उनकी भर्त्सना करना और असहमतिजनक सत्य भी बोलना है'। दूसरी ओर राजा राममोहन राय (जो कि प्रखर सामाजिक और धार्मिक सुधारक थे) ने भारतीय भाषाई पत्रकारिता की नींव रखी। उन्होंने बांगला में 'संवाद कौमुदी', फारसी में 'मिरात-उल-अखबार' तथा अंग्रेजी में 'दि ब्राह्मणिकल मैगजीन' का प्रकाशन किया। वे भारतीय पत्रकारिता की नींव ऐसे समय में रखी जब ईस्ट इंडिया कंपनी अपनी तानाशाही को सामाजिक, आर्थिक, सांस्कृतिक क्षेत्र में मूर्त रूप प्रदान कर रही थी। राजा राममोहन राय ने सांस्कृतिक हमले के विरुद्ध संघर्ष की नींव रखी। उन्होंने पत्रकारिता के माध्यम से समाज में व्याप्त समस्याओं के समाधान करने का प्रयास किया और वे कुछ हद तक इसमें सफल भी हुए। उन्होंने सती-प्रथा का अंत करने के लिए अभियान चलाया, जिसके परिणामस्वरूप लार्ड विलियम बेंटिक ने 14 जनवरी, 1830 को इसे समाप्त करने के लिए विधेयक पारित किया।

भारत में हिंदी पत्रकारिता की नींव रखी जा रही थी। 'पंडित जुगल किशोर शुक्ल' ने ''उदन्त मार्तण्ड' का घोषणापत्र 9 फरवरी, 1826 को कलकत्ता में सरकार के समक्ष प्रस्तुत किया। 30 मई, 1826 को 'उदन्त मार्तण्ड' पहली बार प्रकाशित हुई। यह हिंदी का प्रथम समाचारपत्र था। पंडित जुगलकिशोर शुक्ल कानपुर के मूल निवासी थे और कलकत्ता में प्रवासी रहकर सदर दीवानी अदालत में क्लर्क की पेशा से जुड़े थे। श्री शुक्ल अंग्रेजी, फारसी, संस्कृत, ब्रजभाषा और खड़ी बोली के निष्णात विद्वान थे। 'उदन्त मार्तण्ड' भाषा और समाचार दोनों प्रकार से सुसंपादित पत्र था। इसकी रिपोर्ट देश-विदेश के समाचार, अग्रलेख आदि को पाठक खूब पसंद करते थे।'' इस पत्र को निकालने के पीछे उनका उद्देश्य भारतीयों का हित एवं हिंदी प्रेम भी था। अपनी भाषा में अपने भावों को अभिव्यक्ति मिले और अपनी भाषा में समाचार ज्ञात हो, यही उनका मुख्य उद्देश्य था। 'उदन्त मार्तण्ड' ने निर्भीक नीति अपनाने के साथ-साथ सरकारी सहायता का याचक भी बना। इसके बाद भी बंगाल में हिंदी का प्रचार न होने, विज्ञापन न मिलने एवं अन्य आर्थिक कठिनाईयों के कारण यह पत्र मात्र 19 महीने ही प्रकाशित हो सका। इसके मात्र 79 अंक ही प्रकाशित हो पाए। दिसंबर, 1827 के अंतिम अंक में 'उदन्त मार्तण्ड' की यात्रा की पीड़ा इन शब्दों में रेखांकित की गई है-

''आज दिवस लौं उग चुक्यों, मार्तण्ड उदन्त।
अस्ताचल को जात है दिनकर दिन अब अन्त।।''

हिंदी के पहले समाचारपत्र से हिंदी पत्रकारिता को सत्य, संकल्प एवं सही दिशा मिली। इसके बाद राजा राममोहन राय ने अपने अंग्रेजी के पत्र 'हिन्दू हेराल्ड' को अपने विचारों के व्यापक प्रचार-प्रसार के लिए 10 मई 1829 को हिंदी में 'बंगदूत' निकाला। इसके प्रथम संपादक नीलरतन हालदार थे। सन् 1845 में प्रथम हिंदी साप्ताहिक 'बनारस अखबार' को काशी से राजा शिवप्रसाद सितारे हिन्द ने निकाला। इसके संपादक पं. गोविन्द रघुनाथ थे। इसमें अरबी-फारसी शब्दों की भरमार रहती थी। 1846 ई. में कलकत्ता से 'इंडियन सन' पाँच भाषाओं में निकला, जिसमें हिंदी भी शामिल था।

1850 ई. के बाद हिंदी पत्रकारिता का तीव्र गति से विकास हुआ। 1854 ई. में श्यामसुन्दर सेन के संपादकत्व में कलकत्ता से प्रकाशित 'समाचार सुधावर्षण' हिंदी का पहला दैनिक पत्र था। सन् 1857 के प्रथम स्वाधीनता संग्राम में इसका महत्वपूर्ण योगदान रहा। फरवरी, 1857 में दिल्ली से प्रकाशित 'पयामे आजादी' हिंदी पत्रकारिता में अपना विशिष्ट स्थान रखता है। इस पत्र के प्रवर्तक 'अजीमुल्ला खाँ' स्वयं स्वतंत्रता सेनानी थे। अब लोगों में विभिन्न प्रदेशों के समाचारों को जानने की इच्छा पैदा हो चुकी थी ताकि वे समकालीन स्थितियों को समझ सकें। इस संग्राम के बाद सत्ता तो ईस्ट इंडिया कंपनी के हाथों से निकलकर सीधे ब्रिटिश सत्ता संरचना के आधीन आ गई। लेकिन सत्ता के मूल चरित्र में कोई बदलाव नहीं आया। ''सरकार की व्यवहारिक नीति पूर्ववत् बनी रही। पहले जैसी ही लूट और शोषण जारी रहा।'' यूरोप में हुए औद्योगिक क्रांति के उपरांत माल का उत्पादन संभव हो गया था। लेकिन इसके लिए कच्चे माल एवं बिक्री के लिए बाजार की आवश्यकता थी। भारत इन दोनों के लिए उपयुक्त था। ब्रिटिशों ने अपने व्यापार विस्तार के लिए यहाँ की अर्थव्यवस्था के संतुलन को समाप्त कर दिया। इन औपनिवेशिक नीतियों का दुष्परिणाम यह हुआ कि यहाँ के लोग अकाल, भूखमरी और बेरोजगारी के शिकार होने लगे।

1857 ई. के बाद प्रकाशित होने वाले हिंदी समाचारपत्रों में देश की बदहाली को बार-बार रेखांकित किया गया। ''सन् 1854 में कलकत्ता से प्रकाशित प्रथम हिंदी दैनिक 'समाचार सुधावर्षण' को अपनी

निर्भिकता और प्रगतिशीलता के कारण ब्रिटिश सरकार का कोपभाजन बनना पड़ा।'' लेकिन यही समय हिंदी पत्रकारिता के विकास और विस्तार का भी है। ''हिंदी में पत्र-पत्रिकाओं की कोई जीवित परंपरा न थी, परंतु एकाएक उत्तर भारत में न जाने कितने नगरों से पत्रों की एक बाढ़ सी आ गयी। इसमें से बहुत-से कुछ महीने या कुछ वर्ष चलकर ठप हो गये; कुछ दीर्घकाल तक हिंदी की सेवा करते रहे। लाहौर, बम्बई और कलकत्ता को यदि तीन सीधी रेखाओं में मिला दिया दिया जाय तो जो त्रिकोण बनेगा, उसके भीतर देश का वह भाग आ जाएगा, जहां से इस प्रकार के पत्र निकले थे।'' 19वीं शताब्दी के उत्तरार्द्ध में हिंदी पत्रकारिता ने अपना विस्तार बंगाल, बिहार, उत्तर प्रदेश, मध्य प्रदेश और पंजाब तक किया, जहां से अनेक पत्र-पत्रिकाएं प्रकाशित होने लगी। सन् 1874 में कलकत्ता से 'बिहार बंधु' अलीगढ़ से 'भारत बंधु', मेरठ से 'नागरी प्रकाश', जबलपुर से 'जबलपुर समाचार' और दिल्ली से 'सदादर्श' एवं 'पयामे आजादी' का प्रकाशन शुरू हुआ।

सन् 1857 के बाद के भारतेन्दु हरिश्चन्द्र ने हिन्दी पत्रकारिता और साहित्य को नई दिशा प्रदान की जिसके कारण इसे भारतेन्दु युग भी कहा जाता है। उन्होंने साहित्यकारों और पत्रकारों के एक ऐसे नए वर्ग को उभारा जिन्होंने साहित्य एवं पत्रकारिता के क्षेत्र में नई पहचान बनाई। भारतेन्दु हरिश्चन्द्र ने 15 अगस्त 1867 को 'कवि वचन सुधा' का प्रकाशन किया। उन्होंने 'हरिश्चन्द्र मैगजीन', 'हरिश्चन्द्र चन्द्रिका' तथा 'बालबोधिनी' का संपादन व प्रकाशन भी किया। भारतेन्दु जी का हिंदी पत्रकारिता में वही स्थान है जो बंगला पत्रकारिता में राजा राममोहन राय का है। इस काल के दौरान पं. बालकृष्ण भट्ट ने सितम्बर, 1877 में प्रयाग से 'हिन्दी प्रदीप' मासिक निकाला। इस युग में पं. दुर्गाप्रसाद मिश्र के संपादकत्व में कलकत्ता से प्रकाशित होने वाले तीन प्रमुख पत्र थे- 'भारत मित्र' (1878), 'सार सुधानिधि' (1879) और 'उचित वक्ता'(1880)। 'उचित वक्ता' ने वर्नाक्यूलर प्रेस एक्ट का खुलकर विरोध किया। सन् 1885 में कालाकांकर से राजा रामपालसिंह द्वारा प्रकाशित 'हिन्दोस्तान' हिंदी क्षेत्र से प्रकाशित होने वाला सम्पूर्ण हिंदी दैनिक पत्र था। पं. मदन मोहन मालवीय इसके संपादक थे। बालमुकुन्द गुप्त, महामना मदन मोहन मालवीय तथा प्रतापनारायण मिश्र जैसे प्रतिभाशाली लेखकों के संपादन में इसकी भूमिका मर्यादित, राष्ट्रवादी, जागरूक प्रहरी और सांस्कृतिक संरक्षण की रही। ''हिन्दोस्थान' हिंदी भाषा और उदार विचारों का समर्थक था।'' हिंदी दैनिकों का प्रारंभ भारतेन्दु युग में होने लगा था। इसी समय दूसरी भाषाओं में महादेव गोविंद रानाडे, बाल गंगाधर तिलक तथा गोखले ने समाज सुधार पर ज्यादा जोर दिया। तिलक ने 'केसरी' और 'मराठा' अखबारों के माध्यम से समाज सुधार के कार्यों को बढ़ावा दिया।

सन् 1857 की असफल क्रांति ने लोगों में एक जागरूकता का संचार किया जिसके कारण वे देश और दुनिया का हाल जानने के लिए उत्सुक हुए। वे जानना चाहते थे कि देश की इतनी बुरी अवस्था के लिए जिम्मेदार कौन है। साम्राज्यवादी शोषण के कारण किसान, मजदूर और शिल्पकारों की अवस्था धीरे-धीरे खराब होने लगी। अकाल, भुखमरी और महामारी ने आम जन जीवन की समस्याओं को और बढ़ा दिया था। इनके कारण देश में एक ऐसा बुद्धिजीवी वर्ग उत्पन्न हो गया था जो इन परिस्थितियों से अत्यन्त खिन्न था। धार्मिक अंधविश्वासों और सामाजिक रूढ़ियों ने उसकी चिंता को और बढ़ा दिया था। इस बुद्धिजीवी वर्ग ने राजनीतिक शोषण, सामाजिक-राजनीतिक रूढ़ियों के विरोध में जनता को जागरूक करने का कार्य किया। हिंदी अखबारों ने इस पुर्नजागरण में महत्वपूर्ण योगदान किया। वे इसके लिए ऐसे खबरों को प्रकाशित करने लगे जो शोषण और उत्पीड़न से संबंधित थे। 'कविवचन सुधा' से भारतेन्दु ने स्वदेशी की नींव रख दी थी।

''साम्राज्यवाद की लूट के कारण कैसे देशी पूंजी बाहर चली जाती है, कैसे देशी पूंजी और जीवन की रक्षा के लिए स्वदेशी का होना अनिवार्य है, इस सार को भारतेन्दु और उसके समकालीनों ने अच्छी तरह समझ लिया था।''

हिंदी पत्रकारिता की दृष्टि से बीसवीं शताब्दी का श्रीगणेश गौरवपूर्ण ढ़ंग से हुआ। 20वीं सदी का शुरूआती दशक पत्रकारिता और राजनीति में अनेक परिवर्तनों एवं हलचलों से भरा था। इस युग में एक ओर 'भारत मित्र' कलकत्ता से प्रकाशित होकर संपूर्ण जगत को आलोकित कर रहा था तो दूसरी ओर प्रयाग से पं. महावीर प्रसाद द्विवेदी के संपादन में 'सरस्वती' का उदय हुआ। द्विवेदी जी 1903 में जब 'सरस्वती' के संपादक बने तब उन्होंने 'सरस्वती' को हिंदी पत्रकारिता का 'सरस्वती' बना दिया। इस समय देश में पत्रकारिता की दो धाराएं चल रही थी। एक धारा साम्राज्यवादी व्यवस्था की पक्षधर थी या पूरी तरह से तटस्थ। जबकि दूसरी धारा राष्ट्रीय विचारधारा से प्रेरित एवं संचालित हो रही थी। ''महावीर प्रसाद द्विवेदी इस युग की पत्रकारिता के केन्द्र बिंदु थे। उन्होंने आगे आने वाली पत्रकारिता के दो मूलभूत तत्वों का खुलासा कर दिया था। एक विचार प्रधानता ताकि लोगों में जनजागरण हो, उनमें बौद्धिक उर्जा पनपे। दूसरे जन रुचि को जानना।''

''सन् 1905 से 1918 तक आते-आते हिंदी पत्रकारिता घुटनों चलने लगी थी। वित्तीय पूंजीवाद के इस दौर में भारत पर शोषण का शिकंजा और कस गया था। प्रथम विश्व युद्ध का भारतीय अर्थ-व्यवस्था पर गहरा प्रभाव पड़ा। जिसने देश के आर्थिक आधार की नींव हिला दी। हिंदी पत्र-पत्रिकाओं ने उपनिवेशवादी शासन के इस दोहरे चरित्र को बखूबी उजागर किया कि साम्राज्यवादी हितों की रक्षा के लिए भारतीय संसाधनों का इस महायुद्ध में ब्रिटिश शासन ने कितना दुरूपयोग किया।'' इस काल की हिन्दी पत्रकारिता की मूल विषय-वस्तु सामाजिक या धार्मिक ही थी। इस समय के पत्र-पत्रिकाओं में 'सरस्वती'(1900), 'देवनागर'(1907), 'नृसिंह'(1907), 'कलकत्ता समाचार'(1914), 'विश्वमित्र'(1916) आदि प्रमुख थे। 'सरस्वती' जिसके संपादक महावीर प्रसाद द्विवेदी थे, ने भाषा, साहित्य और सांस्कृतिक विकास की दृष्टि से महत्वपूर्ण कार्य किया। राजनीतिक अखबारों में 'हिंदी प्रदीप' सबसे पुराना अखबार था। ''इस श्रृंखला के अन्य अखबार थे- 'हिंदी केसरी'(1907), जो तिलक के मराठी अखबार का हिंदी रूपांतर था, अरविंद घोष के 'कर्मयोगीन' से प्रभावित 'कर्मयोगी'(1910), मदन मोहन मालवीय द्वारा संचालित 'अभ्युदय'(1907), 'प्रताप'(1913) और 'ज्ञान शक्ति' (1916)। इन समाचार पत्रों ने स्वाधीनता आंदोलन के लिए एक पृष्ठभूमि निर्मित की।

भारतीय राजनीति में महात्मा गांधी का प्रवेश 1920 ई. में हुआ। उनके प्रभाव के कारण भारतीय राजनीति में व्यापक बदलाव आया। अब स्वतंत्रता आन्दोलन के केन्द्र में महात्मा गांधी थे। उन्होंने उग्र तेवर अपनाने के बदले रचनात्मक तेबर अपनाये और ब्रिटिश सत्ता से विरोध दर्ज कराने के लिए सत्याग्रह, असहयोग आन्दोलन एवं सविनय अवज्ञा आन्दोलनों का सहारा लिया और इन आंदोलनों में उन्होंने पत्रकारिता को एक हथियार बनाया। उन्होंने गुजराती 'नवजीवन' का हिन्दी रूपांतर 'हिन्दी नवजीवन' 1921 ई. में और 1933 ई. में 'हरिजन सेवक' हिंदी में निकाला। अपनी बातों को जनता तक पहुंचाने के लिए गांधीजी ने 'यंग इंडिया' के संपादन का कार्य 8 अक्टूबर, 1919 ई. से प्रारंभ किया। ''इसके साथ-साथ उन्होंने 'नवजीवन' का संपादन-कार्य भी शुरू कर दिया, जिसे उन्होंने गुजराती मासिक पत्र से एक साप्ताहिक पत्र में

परिवर्तित कर दिया था।'' बाद में गांधी जी ने महादेव देसाई के संपादन में 'हरिजन' का प्रकाशन भी शुरू किया जिसके ज्यादातर लेख गांधी जी ही लिखा करते थे। बाद में 1933 ई. में उन्होंने 'हरिजन सेवक' हिन्दी में निकाला। ''गांधीजी अपनी आत्मकथा में पत्रकारिता के उद्देश्यों को निम्नलिखित शब्दों में परिभाषित करते हैं; ''किसी समाचारपत्र का पहला उद्देश्य सार्वजनिक संवेदना को समझना तथा उसे अभिव्यक्ति प्रदान करना, दूसरा उद्देश्य लोगों में वांछनीय भावनाएं जाग्रत करना तथा तीसरा उद्देश्य सार्वजनिक दोषों का निडर होकर पर्दाफाश करना होता है।'' गांधीजी के प्रभाव में आकर हिन्दी पत्रकारिता में भी एक नई ऊर्जा का प्रवाह हुआ। ''उनके रचनात्मक कार्यक्रम और असहयोग आन्दोलन के प्रचार के लिए देश में अनेक दैनिक, साप्ताहिक और मासिक पत्रों का प्रकाशन हिंदी में हुआ।'' गांधीजी ने सम्पर्क भाषा के रूप में अंग्रेजी के स्थान पर 'हिन्दुस्तानी' को आगे बढ़ाया। उनके विचारों के कारण हिंदी के समाचार पत्रों के विकास में प्रेरक के रूप में कार्य किया। इन समाचार पत्रों ने आजादी के आन्दोलन को जन-जन तक पहुंचाने में अपना महत्वपूर्ण योगदान दिया। इसके कारण इन्हें अनेक दमनात्मक कार्यवाहियों का सामना करना पड़ा। ''समय-समय पर प्रकाशित सरकारी रिपोर्टों से ज्ञात होता है कि अनायास ही सम्पादकों को चेतावनी देना, पत्रों को जब्त कर लेना या प्रेस को तहस-नहस कर देना उच्च अधिकारियों की हाबी थी फिर भी हिन्दी पत्रकारिता के कर्णधार हार स्वीकारने को तैयार नहीं थे।'' इन स्थितियों में भी सम्पादकों-पत्रकारों ने अपने कर्म के प्रति निष्ठा का पालन किया और अनेक आर्थिक एवं प्रशासनिक कठिनाईयों के बावजूद उन्होंने अखबार निकाले। 1925 ई. में वृंदावन साहित्य सम्मेलन के अन्तर्गत आयोजित प्रथम सम्मेलन में प्रख्यात सम्पादक पराडकर जी ने कहा था कि -''हमारे समाचार-पत्रों की वर्तमान अवस्था अभी संतोषजनक नहीं है। पर भविष्य उज्वल है।... पहले पत्रों के प्रसार अधिक न होने के कारणों पर विचार करना आवश्यक है। मेरी अल्पमति के अनुसार प्रधानतः तीन कारण हैं- 1. पत्रों का समाज के प्रतिबिम्ब न होना, 2. धनाभाव और जनता में विशेषकर हिन्दी भाषियों में साक्षरता का अल्प प्रसार। अस्तु कहने का तात्पर्य यह है कि पत्रों की उन्नति के साथ-साथ पत्रों पर धनियों का प्रभाव अधिकाधिक परिमाण में अवश्य पड़ेगा। अभी तो धनी अपने अप्रत्यक्ष स्वार्थ से अथवा कवचित शुद्ध देश भक्ति से प्रेरित होकर इस काम में धन लगाते हैं।... अंग्रेजी के बड़े-बड़े समाचार-पत्र क्या भारत में, क्या भारत के बाहर, लागत से कम दाम में ग्राहक को दिए जाते हैं। हिन्दी पत्र भी लागत की चरम सीमा तक पहुंच गए हैं। अब यह आवश्यक हो गयी है कि मूल्य लागत से कम किया जाए। अर्थात् पत्र के व्यय और लाभ के लिए विज्ञापन की आय पर हमें अधिकाधिक निर्भर रहना पड़ेगा। यह निर्भरता जितनी बढ़ेगी उतनी ही लेखन पर सम्पादक की स्वतंत्रता घटेगी और कार्यकुशल व्यवस्थापक की बढ़ेगी।'' इस बदलते दौर में भी सम्पादकों की स्वतंत्रता ज्यादा बाधित नहीं हुई थी।

1920 ई. में अंबिका प्रसाद वाजपेयी द्वारा 'स्वतंत्र' नामक अखबार निकाला गया जो गांधीजी के असहयोग आंदोलन को समर्थन देने एवं 1930 ई. में सरकार द्वारा जमानत-राशि के रूप में जमा करने के निर्देश के बाद बहुत जल्द ही लोकप्रिय हो गया। 1920 ई. में ही बनारस से 'आज' का प्रकाशन प्रारंभ हुआ, जो आज भी प्रकाशित हो रहा और हिंदी का एक महत्वपूर्ण अखबार है। इसके प्रथम संपादक श्रीप्रकाश थे और बाबूराव विष्णु पराड़कर उनके सहायक थे। 1923 ई. में पराडकर जी स्वयं संपादक बन गए और लगातार 30 वर्षों तक इसका संपादन कार्य (बीच के चार वर्ष को छोड़कर) किया एवं इस अखबार को पत्रकारिता जगत में नई ऊंचाईयों तक पहुंचाया। ''सन् 1923 ई. में घनश्याम दास बिड़ला ने दिल्ली से 'अर्जुन' नामक

अखबार का प्रकाशन शुरू किया। लेकिन कुछ ही समय बाद संपादक को जेल हो गई और कुछ महीनों बाद प्रेस अधिनियम के तहत अखबार को 10,000 रुपये जमानत-राशि के रूप में जमा करने को कहा गया। इसके बाद अखबार निकलना बंद हो गया और फिर जमानत-राशि घटकर 4,000 रुपए किए जाने के बाद ही यह निकल पाया।''

बीसवीं शताब्दी के तीसरे और चौथे दशक में जैसे-जैसे भारतीय स्वतंत्रता आन्दोलन तेज हुआ, हिंदी में अनेक अखबार निकले और उन्होंने इसमें अपना महत्वपूर्ण योगदान दिया। उग्र राष्ट्रीय विचारों के लिए ही मालवीय जी ने 1907 ई. में 'अभ्युदय', गणेशशंकर विद्यार्थी ने 1913 में 'प्रताप' शिव प्रसाद गुप्त और पराड़कर जी ने 1920 में 'आज', आचार्य नरेन्द्र देव ने 1937 में 'संघर्ष', कमलापति त्रिपाठी ने 1944 में 'संसार', कृष्णदत्त पालीवाल ने 1925 में 'सैनिक' जैसे महत्वपूर्ण पत्रों का प्रकाशन किया। आचार्य नरेन्द्रदेव व बाबूराव विष्णु पराड़कर ने 'रणभेरी' नामक भूमिगत पत्र के द्वारा स्वाधीनता आंदोलन के अलख को जलाये रखा। इसी प्रकार मध्य प्रदेश से भी अनेक पत्र निकले। माधवराव सप्रे का 'छत्तीसगढ़ मित्र' (1902), माखनलाल चतुर्वेदी का 'कर्मवीर' (1919), सिद्धनाथ माधव आगरकर का 'स्वराज्य', पं. द्वारिकाप्रसाद मिश्र के 'लोकमत' (14फरवरी, 1930) और 'सारथी' (1941) आदि का स्वतंत्रता आंदोलन में महती भूमिका रही। आजादी आंदोलन के दौरान जो अखबार ज्यादा महत्वपूर्ण रहे वे क्रमिक रूप से निम्न हैं- ''सैनिक (आगरा, 1928), शक्ति (लाहौर, 1930), प्रताप (कानपुर), नवयुग (दिल्ली), नवराष्ट्र (बंबई), भारत (इलाहाबाद, 1933), लोकमत (नागपुर, 1931), लोकमान्य (कलकत्ता, 1930), वर्तमान (कानपुर, 1920), विश्वमित्र (कलकत्ता, 1917; बंबई, 1941, नई दिल्ली, 1942), नवभारत (नागपुर, 1934), अधिकार (लखनऊ, 1938), अग्रगामी (काशी, 1938), उजाला (आगरा, 1940), आर्यावर्त (पटना, 1942), इंदौर समाचार (इंदौर, 1943), राष्ट्रवाणी (पटना, 1942), संसार(काशी, 1943), नया हिंदुस्तान (दिल्ली, 1944), जयहिंद (जबलपुर, 1946) और सन्मार्ग (काशी व कलकत्ता, 1946)। सामान्य रूप से महत्वपूर्ण अन्य पत्र थे- अर्जुन(1923), वीर अर्जुन(दिल्ली, 1934), हिंदुस्तान (दिल्ली, 1934), मजदूर समाचार (1934), कांग्रेस (दिल्ली, 1940), हिंदी मिलाप (लाहौर, 1930), हिंदी स्वराज (मध्य प्रांत 1930) और हिंदू संसार (दिल्ली)।'' इस समय की हिन्दी पत्रिकाओं 'माधुरी' (1923), 'चांद' (1922), 'हंस' (1930), 'कल्याण' (1926), 'त्यागभूमि' (1928), 'मतवाला'(1923), 'सेनापति' (1926), 'सरोज' (1928), 'वाणी' (1930), 'नालन्दा' (1935) आदि ने भी साहित्यिक जगत में अपने को स्थापित किया एवं साथ ही साथ स्वाधिनता आन्दोलन को आगे बढ़ाने में भी योगदान दिया। 1938 ई. में गांधीजी के विचारों का समर्थन करते हुए रामगोपाल माहेश्वरी ने 'नवभारत' का प्रकाशन शुरू किया। इस युग में पत्रकारिता वृति से नहीं व्रत की भावना से की जाती थी। इस युग में व्यवसायिकता तो थी जरूर पर नैतिकता का आवरण भी निहित था। फलस्वरूप पत्रकार समाज के विकास को अपनी जिम्मेदारी मानते थे।

देश की स्वतंत्रता के बाद हिंदी समाचार-पत्रों में उत्साह की एक नई लहर आयी और बड़ी पूंजी के निवेश के साथ ही अनेक नए अखबार भी निकलने लगे। इस दौर में हिंदी पत्रों ने तमाम क्षेत्रों में अपनी प्राथमिकताओं के एजेण्डे का पुनर्निर्धारण किया। यह सम्पादकों का स्वर्णिम काल भी था, जहां अब वे अंग्रेजों की गुलामी से मुक्त थे वहीं आर्थिक रूप से भी ज्यादा सबल थे। अब इसका लक्ष्य आर्थिक हितों को साधना भी बनने लगा था। बड़ी पूंजी के निवेशकर्ताओं ने इसके आर्थिक सफलता का आकलन पहले ही कर

लिया था। आजादी के बाद जो प्रमुख हिन्दी समाचार-पत्र निकले उनमें ‘नवभारत टाइम्स’ (दिल्ली, 1947), ‘प्रदीप’ (पटना, 1947), ‘नई दुनिया’ (इंदौर,1947), ‘स्वतंत्र भारत’ (लखनऊ, 1947), ‘जागरण’ (कानपुर, 1947), ‘नवजीवन’ (लखनऊ, 1947), ‘सन्मार्ग’ (कलकत्ता, 1948), ‘नवप्रभात’ (ग्वालियर, 1948), ‘अमर उजाला’(आगरा, 1948), 'जागरण' (1950), ‘युगधर्म’(नागपुर, 1951), ‘वीर प्रताप’(जालंधर), ‘राजदूत’(जयपुर, 1951), ‘वीर अर्जुन’ (दिल्ली, 1954), ‘नवयुग दैनिक’ (जयपुर), ‘राजस्थान पत्रिका’ (जयपुर, 1956), ‘देशबंधु’ (भोपाल, रायपुर 1956), ‘पंजाब केसरी’ (जालंधर, 1964) आदि प्रमुख हैं जिन्होंने अपने को स्थापित किया। इन समाचारत्रों ने पत्रकारिता को वृति से नहीं अपितु व्रत की भावना से समाज को एक दिशा देने का कार्य किया है।

1962 ई. के भारत चीन युद्ध ने नेहरू की राजनीतिक असफलता को उजागर किया और जनता में एक नये प्रकार की उत्तेजना एवं राष्ट्रवाद की लहर दौड़ा दी। ‘‘इस जागृति के कारण हमारे अखबारों और पत्रकारों में एक नयी यथार्थ चेतना, एक नयी ताजगी और नया संकल्प प्रकट हुआ और हिंदी में सार्थक और यथार्थवादी पत्रकारिता सामने आयी।’’ युद्ध ने लोगों के मन में जानने की नई ललक पैदा कर दी। इसके कारण अनेक नये पाठक अखबारों से जुड़े। ‘‘सन् 1964 में नेहरूजी की मृत्यु के पश्चात् लालबहादुर शास्त्री के रूप में हिंदी पत्रकारिता को एक ऐसा नायक मिला जो कि पगडण्डी से उठकर प्रधानमंत्री बना था। हिंदी पत्रकारिता ने नये प्रधानमंत्री को औसत भारतीय के रूप में देखा और सन् 1965 की भारत पाक जंग के बाद शास्त्रीजी को ‘भारत का नया हीरो’ के रूप में चित्रित किया।’’ इसके कारण समाचार-पत्रों की प्रसार संख्या में अभूतपूर्व वृद्धि दर्ज की गई। इसका फायदा उठाने के लिए कई नए समाचार-पत्र प्रकाशित होने लगे एवं साथ ही साथ नए संस्करण भी सामने आए।

सातवें दशक में हिंदी पत्रकारिता ने भारतीय राजनीति में आए बदलाव, जिसमें गैर-कांग्रेसी सरकारों का राज्यों में बनना एवं अनेक क्षेत्रीय पार्टियों का उभार के साथ-साथ प्रशासनिक भ्रष्टाचार की शुरूआत के कारण समाचार-पत्रों ने अपने को व्यावसायिक रूप से सफल बनाने के प्रयास में अपने में बदलाव लाया। बीसवीं सदी के आठवें दशक में हिंदी समाचारपत्रों ने देश में राजनीतिक, आर्थिक, सामाजिक एवं सांस्कृतिक क्षेत्रों में हो रहे व्यापक बदलाव को प्रस्तुत किया एवं विनियोजित विकास की कमियों यथा भ्रष्टाचार, लालफीताशाही, शक्ति का केन्द्रीकरण जैसी समस्याओं का समाधान तलाशने पर अपना ध्यान केन्द्रीत किया। ‘‘नक्सलबाड़ी आन्दोलन’ इस दौर का ऐतिहासिक विस्फोट था जिसने भारतीय राजसत्ता को सीधे हिंसात्मक तेवरों से ललकारा था और बदलाव के नये विकल्प जनता के समक्ष रखे थे। पश्चिम बंगाल और आन्ध्रप्रदेश के पश्चात् लगभग समूचा हिंदी क्षेत्र कम-ज्यादा इससे प्रभावित था।’’ इसी दौरान देश में आपातकाल लागू किया गया जो भारतीय लोकतंत्र के लिए सबसे कठिन दौर था। इस दौरान समाचार-पत्रों पर अनेक प्रकार की पाबंदियां भी लगाई गईं और प्रेस की स्वतंत्रता को पहली बार खतरे में महसूस किया गया। ‘‘प्रेस पर चारों ओर से दवाब डालकर कमजोर करने का प्रयास किया गया।’’ यह आजादी के पहले के दिनों को फिर से जीवंत करने के जैसा था। ‘‘आपातकाल ने तो पत्रकारिता को सरासर बेनकाब कर दिया और दिखला दिया कि महावीरप्रसाद द्विवेदी, गणेशशंकर विद्यार्थी, मदनमोहन मालवीय, सूर्यकान्त त्रिपाठी ‘निराला’, माखनलाल चतुर्वेदी, बाबूराव विष्णु पराड़कर, अम्बिकाप्रसाद वाजपेयी जैसे योद्धा पत्रकारों के उत्तराधिकारियों की रीढ़ किस कदर पोली है।’’ लेकिन इस दौर में भी अनेक संपादकों एवं पत्रकारों ने

पत्रकारिता की गरिमा के अनुरूपक कार्य किया और विरोध के स्वर को जिंदा रखा। इनमें राजेन्द्र माथुर, प्रभाष जोशी, गिरधर राठी, कमलेश शुक्ल आदि को शामिल किया जाता है। आपातकाल के बाद बनी जनता पार्टी सरकार के समय कुछ पत्रकारों ने सरकार का साथ दिया और बदले में अनेक प्रकार के लाभ उठाये। आपात काल के दौरान हिंदी की क्षेत्रीय पत्रकारिता का तीव्र गति से विस्तार हुआ और इनके प्रसार की व्यापक संभावना थी। इसी दौरान हिंदी में राजनीतिक विश्लेषणों की प्रधानता वाली साप्ताहिकों का भी तेजी से प्रसार बढ़ा। 'रविवार' इसका सबसे बड़ा उदाहरण है।

1980 ई. के बाद हिंदी समाचारपत्रों को सरकारी विज्ञापनों के साथ-साथ निजी कंपनियों से भी विज्ञापन मिलने लगे क्योंकि सरकार ने अर्थव्यवस्था को निजी क्षेत्र के लिए खोलना प्रारंभ कर दिया था। बाजार के विस्तार की इस संभावना को व्यावसायिक अवसर के रूप में देखते हुए हिंदी समाचारपत्रों का व्यापक विस्तार होने के साथ ही इसकी व्यवस्था में प्रबंधन का महत्व बढ़ने लगा और मशीनों का तेजी से आधुनिकीकरण किया जाने लगा ताकि प्रसार संख्या के अनुरूप उत्पादन किया जा सके। हिंदी अखबारों के नए संस्करण भी प्रकाशित होने लगे। हिंदी अखबारों ने खुले व्यापार की संभावनाओं को देखकर आए बहुराष्ट्रीय निगमों और बड़ी कंपनियों की आवश्यकताओं के अनुरूप जिसमें वे शहरों के अतिरिक्त कस्बों में भी अपना बाजार विस्तार करना चाहते थे, के लिए अखबारों को कस्बों और गांवों तक पहुंचाना शुरू किया। जुलाई, 1991 ई. के बाद भारत ने मुक्त व्यापार को बढ़ावा देने के लिए उदारीकरण तथा निजीकरण को पूर्णतः अपना लिया। मुक्त व्यापार को बढ़ावा देने के लिए आर्थिक नीतियों को लाल फीताशाही व्यवस्था से मुक्त करने का हर संभव प्रयास किया गया। उद्योग-धन्धों को सरकार अपने हाथों से मुक्त कर निजी क्षेत्र को देने लगी। अब सरकार की सोच यह बनी कि सरकार का कार्य व्यापार करना नहीं बल्कि प्रशासन और सुरक्षा जैसे मुद्दे पर ध्यान केंद्रित करना है। यह पूर्णतः बाजारवादी व्यवस्था के अनुकूल थी। इन नीतियों को अपनाने के पीछे का तर्क आर्थिक संकट से निपटना बताया गया।

4.4 श्रव्य माध्यम- आकाशवाणी (रेडियो) की विकास यात्रा

आकाशवाणी शब्द से हमारे जेहन में श्रव्य माध्यम के रूप में रेडियो का नाम याद आता है। आकाशवाणी का दुनिया में नियमित प्रसारण अमेरिका के पीट्सबर्ग में सन् 1920 में शुरू हुआ था जबकि इंग्लैण्ड में मार्कोनी की कंपनी चेम्सफोर्ड ने 23 फरवरी, 1920 को पहली बार सफल प्रसारण किया था। यही कारण है कि ब्रिटिश ब्रॉडकास्टिंग कंपनी ने नवंबर, 1922 में काम करना शुरू किया। इसी दौरान भारत में ''अगस्त 1921 में 'द टाइम्स ऑफ इंडिया' ने डाक एवं टेलीग्राफ विभाग के साथ मिलकर अपने बंबई स्थित कार्यालय से पहला रेडियो प्रसारण किया।'' नवंबर 1923 में कलकत्ता स्थित रेडियो क्लब ऑफ बंगाल को अस्थायी तौर पर रेडियो प्रसारण की अनुमति दे दी गई। अगले वर्ष जून 1924 में बॉम्बे रेडियो क्लब ने भी अपना प्रसारण शुरू किया। इसके चंद दिनों बाद मद्रास में 31 जुलाई, 1924 को रेडियो प्रसारण की औपचारिक शुरूआत हुई। 20 मार्च 1925 को उद्योग एवं श्रम विभाग द्वारा शिमला के मैटकैफ हाऊस में आयोजित बैठक में हुए निर्णय के बाद समिति द्वारा 'ब्रॉडकास्टिंग इन ब्रिटिश इंडिया' नाम से एक नोट जारी कर सिफारिश की गई कि रेडियो प्रसारण के लिए कंपनी को दस साल के लिए लाइसेंस दिया जाए। रेडियो प्रसारण के दौरान सरकार को किसी भी रेडियो स्टेशन पर सेंसरशिप, प्री सेंसरशिप या अन्य प्रकार की रोक लगाने की छूट होनी चाहिए। इसके

अलावा लाइसेंसधारी कंपनी को सरकार संबंधी सभी सूचनाएं यथा: सरकारी आदेश, मौसम समाचार, शैक्षणिक प्रचार निशुल्क करना पड़ेगा। 31 मार्च, 1926 को रेडियो प्रसारण के लिए एक अलग कंपनी (इंडियन ब्रॉडकास्टिंग कंपनी) का कंपनी अधिनियम के तहत पंजीकरण करवाया गया। इसी वर्ष 13 सितंबर को रेडियो प्रसारण के समझौते पर कंपनी ने सरकार के साथ हस्ताक्षर किए। 23 जुलाई 1927 को संध्या 6 बजे लार्ड इरविन ने बंबई स्टेशन का उद्घाटन करते हुए कहा था कि ''प्रसारण की भारत में असीम संभावनाएं हैं। इसकी लंबी दूरियां और विशाल क्षेत्रफल इसे प्रसारण के लिए संभावनाओं से भरा बनाता है। भारत के दूर-दराज के गांवों में ऐसे लोग हैं जो काम से थकने के बाद सुस्ताना चाहते हैं। इसी प्रकार काम के लिए अपने घरों से दूर जानेवाले अनेक लोग भी अपने परिजनों की कमी महसूस करते हैं। भारत में अनेक घर ऐसे हैं, जिनकी परंपराएं उन्हें मनोरंजन के लिए घरों से बाहर जाने की अनुमति नहीं देतीं। इन सब के लिए प्रसारण किसी शानदार उपहार से कम नहीं है। चाहे मनोरंजन की बात हो या फिर शिक्षा की, रेडियो प्रसारण में असीम संभावनाएं छिपी हैं, इतनी कि हम अभी तक उसका ठीक से अनुमान भी नहीं लगा पाए हैं। भारत में प्रसारण अभी अपनी बाल्यावस्था से गुजर रहा है; किंतु मुझे यकीन है कि कुछ ही सालों में रेडियो के श्रोताओं की संख्या कई गुना बढ़ जाएगी और विज्ञापन के इस नए प्रयोग को पसंद करनेवाले भारत के हर कोने में मौजूद होंगे।'' रेडियो यहां के लोगों के दिलों पर राज करने लगा था। जगह-जगह रेडियो स्टेशन खोले जा रहे थे। 1 अप्रैल 1930 को इंडियन ब्रॉडकास्टिंग कंपनी का नाम बदलकर 'इंडियन स्टेट्स ब्रॉडकास्टिंग सर्विस (आई.एस.बी.एस.) कर दिया गया। यह वही दौर था जब हम आर्थिक मंदी से झुलस रहे थे। करीब एक वर्ष बाद सरकार ने निरंतर हो रहे घाटे से ऊबकर रेडियो प्रसारण बंद करने की घोषणा कर दी। हालांकि इसका तीव्र विरोध हुआ, खासकर बंगाल में। ''विरोध को देखते हुए सरकार ने अस्थायी तौर पर रेडियो प्रसारण को जारी रखने का फैसला किया और सारी अटकलों को विराम देते हुए अंततः मई 1932 में सरकार ने इंडियन स्टेट्स ब्रॉडकास्टिंग सर्विस को सरकारी प्रबंधन के तहत चलाने का निर्णय लिया।''

30 अगस्त, 1935 को बी.बी.सी. से आए लियोनल फिल्डन ने देश के पहले प्रसारण नियंत्रक का पदभार संभाला। वे अपनी रचनात्मकता से ऑल इंडिया रेडियो के स्वरूप को बदलते रहे। उनकी प्रशासनिक क्षमता को देखते हुए सरकार ने इंडियन स्टेट्स ब्रॉडकास्टिंग सर्विस के विकास के लिए 20 लाख रुपये की ग्रांट दी। फिल्डन भारत में रेडियो सेवा के नाम 'इंडियन स्टेट्स ब्रॉडकास्टिंग' को नापसंद करते थे। उन्होंने इंडियन स्टेट्स ब्रॉडकास्टिंग सर्विस का नाम बदलकर 'ऑल इंडिया रेडियो' करवाया। दरअसल, ''उनका तर्क था कि एक तो 'इंडियन स्टेट्स' बोलना बड़ा अटपटा सा लगता है; दूसरा 'ब्रॉडकास्टिंग' भारतीयों के लिए उच्चारण में दिक्कत पैदा करता है। फिल्डन ऐसा नाम चाहते थे जो आम लोगों की जुबान पर चढ़ जाए। फिल्डन भारतीय संस्कति के हिमायती थे।'' फिल्डन बीमार हो गए थे तो उनकी अनुपस्थिति में प्रो. अहमद शाह बुखारी ने पदभार संभाला। आजादी आंदोलन के दौरान सरकार रेडियो पर शिकंजा कसना चाहती थी पर राष्ट्रीय नेताओं ने रेडियो के विकास के लिए अभूतपूर्व योगदान दिया। ''सन् 1938 के महासम्मेलन में नेशनल प्लानिंग कमेटी का गठन किया गया था। स्वयं जवाहरलाल नेहरू इस समिति के अध्यक्ष थे। इस समिति ने देश के विकास से जुड़े हर मसले पर उप-समितियों का भी गठन किया। इस समिति ने ऑल इंडिया रेडियो के प्रबंधन और उपयोग के संबंध में अपने सुझाव सरकार के पास भेजे। समिति की सिफारिशों के

आधार पर प्लानिंग कमेटी ने प्रस्ताव पास किया कि संचार और प्रसारण जन-उपयोग की सेवाएं हैं और आम लोगों के जीवन को प्रभावित करती हैं।''

स्वतंत्रता प्राप्ति के उपरांत सरदार पटेल देश के पहले सूचना एवं प्रसारण मंत्री बने। सरकार ने आकाशवाणी के चहुंमुखी विकास की वृहद योजना बनायी। ''इसे 'पायलट प्रोजेक्ट' के नाम से जाना जाता है। देश के सभी हिस्सों में रेडियो स्टेशन और स्टूडियो स्थापित करने की योजना बनाई गई। सबसे पहले जालंधर में 1 नवम्बर, 1947 को रेडियो स्टेशन खोला गया; क्योंकि पंजाब में बड़ी संख्या में शरणार्थियों का आना जारी था और उनकी व्यवस्था के लिए रेडियो सही सूचनाओं को प्रसारित करने में महत्वपूर्ण भूमिका निभा सकता था। एक महीने बाद ही 1 दिसंबर, 1947 को जम्मू में रेडियो स्टेशन ने काम करना आरंभ कर दिया। अगले साल पटना, कटक, गुवाहाटी, नागपुर, विजयवाड़ा, श्रीनगर में एक के बाद एक नए रेडियो स्टेशन खोले गए। सन् 1949 में इलाहाबाद और अहमदाबाद में रेडियो स्टेशनों ने काम करना प्रारंभ कर दिया तो 1950 में धारवाड़ और कोझीकोड में रेडियो स्टेशन खोले गए।'' रेडियो जनमानस के लिए मनोरंजन का एक प्रमुख जरिया बन चुकी थी। रेडियो सीलोन की लोकप्रियता का मुकाबला करने के लिए 3 अक्टूबर, 1957 को आकाशवाणी ने अपनी 'विविध भारती' सेवा प्रारंभ की। सन् 1956 में यूनेस्को ने भारत को अपने रेडियो रूरल फोरम्स प्रोजेक्ट के लिए चुना। इस प्रोजेक्ट के तहत पूना के 144 गांवों को चुनकर रेडियो रूरल फोरम बनाए गए और आकाशवाणी द्वारा कार्यक्रम प्रसारित करने के बाद वहां ग्रामीणों के साथ वार्तालाप किया गया। ''इस परियोजना का नारा था-सुनो, चर्चा करो और उसके बाद उसे लागू करो।'' रेडियो के विकास के लिए 4 दिसम्बर, 1964 को गठित चंदा कमिटी ने 18 अप्रैल, 1966 को अपनी रिपोर्ट देते हुए कहा कि अगर आकाशवाणी का विकास अधिक व्यवसायिक ढ़ंग से करना है तो इसे एक स्वायत्त निगम के हवाले कर देना चाहिए। आकाशवाणी और दूरदर्शन को अलग-अलग कर दिया जाए। विज्ञान और कृषि से जुड़े कार्यक्रमों को प्राथमिकता दी जाए। चौथी पंचवर्षीय योजना (1969-74) के दौरान 1967 ई. में आकाशवाणी ने व्यवसायिक सेवा आरंभ की। अब विविध भारती सेवा के प्रसारण में विज्ञापन प्रसारित किये जाने लगे। ''सन् 1967 में स्थानीय केंद्रों के लिए नौ बिंदुओं की एक प्रसारण आचार संहिता उस समय बनाई गई जब कलकत्ता के आकाशवाणी केंद्र पर वामपंथी साझा सरकार के श्रममंत्री सुबोध बनर्जी के प्रसारित किए जाने वाले एक भाषण पर केंद्र निदेशक पी.सी. चटर्जी ने आपत्ति उठाई। इस विवाद के बाद संसद में स्थानीय केंद्रों के लिए एक आचार संहिता बनाई गई।''

आपातकाल के दौरान सरकारी माध्यमों की स्वायत्तता का मुद्दा जोर-शोर से उठा। आपातकाल के हटते ही जनता पार्टी की सरकार ने 17 अगस्त, 1977 को हिन्दुस्तान टाइम्स के पूर्व संपादक बी.जी. वर्गीज की अध्यक्षता में एक समिति का गठन किया। समिति ने 24 फरवरी, 1978 को अपनी रिपोर्ट में 'आकाश भारती' राष्ट्रीय प्रसारण न्यास बनाना, शैक्षणिक चैनल खोलने के लिए निजी कंपनियों को आमंत्रित करने आदि का सुझाव दिया। सरकार ने 1976 में चंदा कमिटी की रिपोर्ट को स्वीकार करते हुए आकाशवाणी से दूरदर्शन को अलग कर दिया। सन् 1977 में देश में पहला एफ.एम. प्रसारण मद्रास से आरंभ हुआ। 15 अगस्त, 1993 से दिल्ली और मुम्बई में निजी रेडियो चैनल खोला। 1994 ई. में आकाशवाणी की उपग्रह सेवा स्काई रेडियो आरंभ की गई तथा 1995 ई. में रेडियो पेजिंग की शुरूआत हुई। 1996 ई. में आकाशवाणी के कार्यक्रम इंटरनेट पर उपलब्ध होने लगे। 23 नवंबर, 1997 को प्रसार भारती अधिनियम लागू होने के बाद

ज्ञान शांति मैत्री

आकाशवाणी को प्रसार भारती निगम के अंतर्गत लाया गया। ''अप्रैल 1998 में आकाशवाणी द्वारा निजी निर्माताओं से कार्यक्रम बनवाने पर रोक लगा दी। इसके बाद एक बार फिर सारे कार्यक्रम आकाशवाणी केंद्रों द्वारा ही बनाए जाने लगे। लेकिन इस बार निजी एफ.एम. चैनलों को अनुमति देने पर सरकार ने गंभीरता से विचार किया और सन् 1999 में अंततः केंद्र सरकार ने नीतिगत निर्णय लेते हुए एफ.एम. तरंगों को निजी कंपनियों के लिए खोल दिया। क्योंकि सर्वोच्च न्यायालय ने सन् 1995 में अपने एक महत्वपूर्ण निर्णय में रेडियो तरंगों को सार्वजनिक संपत्ति घोषित किया था। सूचना एवं प्रसारण मंत्रालय बनाम क्रिकेट एसोसिएशन ऑफ बंगाल मामले में फैसला देते हुए न्यायालय ने रेडियो तरंगों पर सरकार के एकाधिकार को सही नहीं बताया था। न्यायालय ने कहा कि सरकार को यह सुनिश्चत करना चाहिए कि रेडियो तरंगों का जनहित में व्यापक इस्तेमाल किया जाए ताकि देश में अभिव्यक्ति की स्वतंत्रता का सही उपयोग हो सके।'' सन् 2003 में आकाशवाणी ने दिल्ली के एफ.एम.-1 को एफ.एम. 'गोल्ड' और एफ.एम.-2 को एफ.एम. 'रेनबो' नाम दे दिया। अब गोल्ड पर पुराने फिल्मी गीत तथा रेनबो पर नए व अंग्रेजी गाने भी प्रसारित होने लगे। रेडियो के संदर्भ में कहा जा सकता है कि जहां सामुदायिक रेडियो से समाज के विकास की संकल्पना को साकार होते हम देख पा रहे हैं वहीं नए, पुराने गीत, रेडियो जॉकी तथा घंटे-घंटे समाचार से यह आम दिलों पर राज कर रहा है।

4.5 दृश्य-श्रव्य माध्यम (टेलीविजन) का विकास- दूर-दर्शन (Television) आज हमारे जीवन का महत्वपूर्ण हिस्सा बन चुका है। जब हम 'दूर-दर्शन' लिखते हैं तो हमारा आशय "Television" या TV से होता है; लेकिन जब हम 'दूरदर्शन' लिखते हैं तो इसका अर्थ है- भारत का सरकारी टेलीविजन केंद्र और चैनल, जिसे अंग्रेजी में "Doordarshan" के रूप में जाना जाता है। टेलीविजन ग्रीक एवं लैटिन भाषा से लिया गया एक संयुक्त शब्द है। टेली ग्रीक भाषा का शब्द है, जिसका अर्थ है-दूरी और विजन लैटिन शब्द है जिसका अर्थ है-देखना। सन् 1925 में जे. एल. बेयर्ड ने ब्रिटेन में टेलीविजन का पहला सार्वजनिक प्रदर्शन किया था। यूनेस्को ने टेलीविजन प्रसारण आरंभ करने के लिए भारत के सामने मदद का प्रस्ताव दिया। सरकार दूरदर्शन केंद्र लगाने में आर्थिक स्थिति के कारण पेशोकश में थी। इसी दौरान 1957 ई. में दिल्ली के प्रगति मैदान में औद्योगिक व्यापार मेला लगा। इधर फिलिप्स कंपनी औद्योगिक व्यापार मेले में अपने साथ लाए टेलीविजन उपकरण को बेचने का प्रस्ताव सरकार को दिया। 15 सितम्बर 1959 को राजधानी दिल्ली की पार्लियामेंट स्ट्रीट में आकाशवाणी भवन से देश का पहला टेलीविजन ट्रांसमीटर काम करना शुरू किया। दूरदर्शन नामक इस टेलीविजन सेवा का उद्घाटन तत्कालीन राष्ट्रपति डॉ. राजेन्द्र प्रसाद ने किया। करीब 25 किमी की रेंज के इस ट्रांसमीटर से सप्ताह में दो दिन मंगलवार और शुक्रवार को कुल 60 मिनट के कार्यक्रम प्रसारित किये जाते थे। जिसमें 40 मिनट सूचनात्मक तथा 20 मिनट मनोरंजनात्मक कार्यक्रम होते थे। 'सोशल एजुकेशन प्रोजेक्ट' के तहत प्रयोगिक प्रसारण के रूप में ये कार्यक्रम आस-पास के क्षेत्र के 21 सामुदायिक टेलीविजन सेटों पर देखे जाते थे। ''सन् 1961 में दूरदर्शन की प्रायोगिक सेवा को नियमित करके पी.वी. कृष्णामूर्ति को इसका पहला निदेशक बनाया गया। इसी दौरान जनवरी से मार्च 1960 के दौरान प्रायोगिक रूप में टेलीविजन पर शाम को 3 से 4 बजे तक स्कूली बच्चों के लिए कार्यक्रम प्रसारित किए गए। बच्चे नियमित टेलीविजन देख पाएं, इसके लिए दिल्ली सरकार ने स्कूलों से बच्चों को टेली-क्लबों तक लाने की व्यवस्था

कर दी।'' इसके विस्तार स्वरूप 23 अक्टूबर, 1961 को आकाशवाणी ने अमेरिका के फोर्ड फाऊंडेशन के साथ एक सहमति-पत्र पर हस्ताक्षर किए, जिसके अंतर्गत चार साल तक दिल्ली के स्कूलों में शैक्षणिक प्रसारण किया जाना था। समझौते के अनुसार अमेरिका के विशेषज्ञ भारत आए और दिल्ली के माध्यमिक स्कूलों में 600 टेलीविजन सेट स्थापित किए गए। बाद में ट्रांसमीटर की प्रसारण क्षमता को भी बढ़ाकर 5 किलोवाट कर दिया गया। 15 अगस्त 1965 को भारतीय टेलीविजन पर रोजाना समाचार बुलेटिन की शुरूआत हुई। उस समय टेलीविजन आकाशवाणी का एक अंग था। जाहिर है कि टेलीविजन समाचार भी आकाशवाणी की समाचार इकाई पर पूरी तरह निर्भर था। समाचारों में स्थिर चित्रों को दिखाया जाता था। 1960 ई. का दशक भारत में हरित क्रांति का दौर था। हरित क्रांति के जनक डॉ. एम.एस. स्वामीनाथन और सुविख्यात वैज्ञानिक डॉ. विक्रम साराभाई की पहल पर 26 जनवरी 1967 से 'कृषि दर्शन' का प्रसारण शुरू किया गया। सप्ताह के बुधवार व शुक्रवार के 20 मिनट के कार्यक्रम में किसानों को नए खाद, बीज और उत्तम खेती के बारे में बताकर जनजागृति फैलायी जाने लगी।

सन् 1975 भारतीय टेलीविजन के इतिहास में मील का पत्थर साबित हुआ क्योंकि इसी साल भारतीय वैज्ञानिकों ने पहली बार उपग्रह प्रसारण शुरू किया। सैटेलाइट इंस्ट्रक्शनल टेलीविजन एक्सपेरीमेंट (SITE) नामक इस परियोजना के तहत अमेरिकी सैटेलाइट ATS-6 को एक साल के लिए किराए पर लिया गया। प्रयोगिक तौर पर देश के छह राज्यों (बिहार, उड़ीसा, आंध्र प्रदेश, राजस्थान और कर्नाटक) के 2400 सबसे पिछड़े गांवों में उपग्रह के जरिए एक साल (1 अगस्त 1975 से 31 जुलाई, 1976) का प्रसारण किया गया। इस कार्यक्रम के तहत स्वास्थ्य, कृषि, परिवार नियोजन, राष्ट्रीय एकता, संस्कृति के मसलों पर ज्ञानात्मक जानकारियां दी जाने लगी। ये कार्यक्रम हिंदी, उड़िया, तेलुगु और कन्नड़ भाषा में प्रसारित किए जाते थे। रोजाना चार घंटे के कार्यक्रम में सुबह 90 मिनट शैक्षणिक और शाम को 150 मिनट अन्य विषयों पर प्रसारण होता था। साइट के कार्यक्रम समाज को दिशा देने में महती भूमिका अदा की।

1 जनवरी 1976 को दूरदर्शन पर पहली बार विज्ञापनों का प्रसारण शुरू हुआ। इसी वर्ष 1 अप्रैल को दूरर्शन को आकाशवाणी से अलग कर दिया गया। ''इस दिन को विशिष्ट बनाने के लिए प्रधानमंत्री इंदिरा गांधी ने देश के नाम संदेश भी दिया। यह विशेष प्रसारण साइट परियोजना के 2400 गांवों में भी उपग्रह के जरिए प्रसारित किया गया। अलग होने के बाद दूरदर्शन के पहले महानिदेशक पी.वी. कृष्णमूर्ति बनाए गए और दिल्ली के मंडी हाऊस में दूरदर्शन का मुख्य कार्यालय बनाया गया। दूरदर्शन का अपना मोनोग्राम और संकेत धुन भी बनाई गई।''

1980 के दशक में दूरदर्शन के विकास में चार चांद लगा। 10 अप्रैल, 1982 को अमेरिका के केप कैनेडी से देश का पहला संचार सैटेलाइट इनसेट 1-ए छोड़ा गया। लेकिन यह उपग्रह अधिक दिनों तक काम नहीं कर पाया लेकिन इसी वर्ष 30 अगस्त को एक और उपग्रह इनसेट-1 बी छोड़ा गया तदुपरांत देशभर के टेलीविजन केंद्रों को उपग्रह से जोड़ दिया गया। सन् 1982 में 19 नवम्बर से 4 दिसम्बर को हुए एशियाई खेलों का मनोरंजन दूरदर्शन के माध्यम से भारत सहित अन्य देशों के दर्शकों ने उठाया। स्वतंत्रता दिवस 15 अगस्त, 1982 के दिन लाल किले पर ध्वजारोहण के सीधे प्रसारण के साथ दूरदर्शन ने अपना रंगीन प्रसारण की शुरूआत की। संचार माध्यमों द्वारा विकसित राष्ट्रों के कार्यक्रमों को अधिकाधिक दिखाने के कारण पिछड़े देशों में सांस्कृतिक पहचान का संकट पैदा होने लगा था तो इसी दौरान वैश्विक मीडिया परिदृश्य में बनाए गए

मैकब्राइड कमीशन की तर्ज पर भारत में मार्च 1983 में पी.सी. जोशी की अध्यक्षता में एक समिति का गठन किया। समिति ने 2 अप्रैल, 1984 को अपनी रिपोर्ट (An Indian Personality for Television Report of the Working Group on Software for Doordarshan) में दूरदर्शन के कार्यक्रमों में सुधार लाने के लिए विस्तृत सुझाव दिया। जोशी कमेटी के नाम से इस समिति ने भारतीय आवश्यकताओं के अनुरूप देशज कार्यक्रम बनाने पर बल दिया। खास देशज संस्कृति पर केंदित कार्यक्रम बनने लगे। 15 जुलाई 1984 को देश का पहला प्रायोजित धारावाहिक 'हमलोग' शुरू किया गया। कुल 156 कड़ियों के इस धारावाहिक को नेस्ले मैगी नूडल्स ने प्रायोजित किया था। हमलोग की सफलता के बाद तमस, बुनियाद, खानदान, कक्का जी कहिन, भारत एक खोज जैसे धारावाहिकों के प्रसारण से दूरदर्शन की लोकप्रियता बढ़ी। राजीव गांधी के प्रधानमंत्री बनते ही समाज के विकास के लिए दूरदर्शन को अनिवार्य अंग माना। यही कारण है कि सन् 1987 में रामानंद सागर द्वारा निर्मित रामायण, 1988 में बी आर चोपड़ा द्वारा बनाए गए महाभारत और श्याम बेनेगल द्वारा बनायी गई भारत एक खोज, जैसे बड़े धारावाहिकों को राजीव गांधी के निजी रूचि के फलस्वरूप हम देख पाए। सन् 1984 में डीडी-2 नाम से दूरदर्शन का दूसरा चैनल शुरू किया गया। इसी वर्ष शैक्षणिक प्रसार के लिए विश्वविद्यालय अनुदान आयोग ने कंट्रीवाइड क्लास रूम का प्रसारण शुरू किया। 1987 ई. में रामायण धारावाहिक को दूरदर्शन पर दिखाये जाने से अपनी लोकप्रियता के सारे रिकार्ड तोड़ दिए। इसके बाद महाभारत के प्रसारण को भी लोगों ने खूब सराहा। कहा जाता है कि रामायण और महाभारत जैसे धारावाहिकों ने टीवी को घर-घर पहुंचा दिया।

1990 के दशक में खासकर जब भूमंडलीकरण का दौर शुरू हो रहा था। बहुराष्ट्रीय कंपनियां अपने उत्पादों को ग्राहकों तक पहुंचाने के लिए टीवी विज्ञापनों को एक अच्छा माध्यम समझने लगी तो ऐसे ही दौर में सन् 1992 में देश का पहला निजी टेलीविजन चैनल जी टीवी को हरियाणा के उद्योगपति सुभाषचंद्र ने शुरू किया। अब चौबीसों घंटे समाचार, मनोरंजन के चैनलों की भरमार हो गई है।

4.6 वैकल्पिक मीडिया के रूप में इंटरनेट- इंटरनेट आज सर्वव्यापी उपकरण या माध्यम बन गया है। आज इंटरनेट ग्लोबल है, इसके सभी विधा रूप ग्लोबल हैं। इसकी तेज गति इसे अन्य माध्यमों से गुणात्मक तौर पर अलग करती है। यह दुनिया को वैश्विक ग्राम का वासी होने का अवसर मुहैया कराता है। कोई भी इंटरनेट प्रयोगकर्ता यह कह सकता है कि अब तक जितने माध्यम विकसित हुए हैं उनमें इंटरनेट सबसे ज्यादा ताकतवर है। दरअसल यह हाई-टेक का पर्याय है और सूचना क्रांति का संवाहक भी। अब तक ईजाद हुए माध्यमों में यह एक माध्यम नहीं है, बल्कि माध्यमों का पितामह है। यह अपने आप में स्वतंत्र कोई आविष्कार नहीं है, बल्कि यह कंप्यूटर और टेलीफोन से मिलाकर किया गया एक अभिनव प्रयोग के तौर पर सूचनाओं को बड़ी तेजी से एक स्थान से दूसरे स्थान पर भेजे जाने की युक्ति है। ''इसे कुछ लोग वर्ल्ड वाइड वेब यानी विश्व व्यापी तरंग कहते हैं, किंतु इंटरनेट विशेषज्ञ इस नाम से सहमत नहीं हैं। वे इसके कई और भी नाम देते हैं जैसे-साइबर स्पेस, सुपर हाइवे, इन्फोर्मेशन सुपर हाइवे, द नेट या ऑन लाइन आदि।''

1990 के दशक में इंटरनेट की तेजी से प्रगति हुई। इसके विकास पर नज़र डालें तो हम पाते हैं कि अमेरिका के पेंटागन एडवांस्ड रिसर्च प्रोजेक्ट एजेंसी (ए.आर.पी.ए) ने 1969 में एआरपीएनेट के रूप में इसकी शुरूआत की थी। इसका मूल उद्देश्य देश के विभिन्न भागों में फैली सैनिक छावनियों के बीच आपसी संपर्क

स्थापित करना था। आपसी संवाद के लिए एआरपीएनेट कंप्यूटरों को आपस में जोड़ने और डाटा भेजने हेतु विकसित की गई प्रक्रिया को ट्रांसमिशन कंट्रोल प्रोटोकोल/इंटरनेट प्रोटोकोल (टीपीसी/आई.पी.) कहा गया। ''अमेरिका में सैनिक मुख्यालयों में कार्यरत वैज्ञानिक और इंजीनियरों ने इस एआरपीएनेट का उपयोग रक्षा संबंधी सूचनाओं के आदान-प्रदान करने के लिए भी करना शुरू किया। इसके अगले कथन के रूप में उन्होंने इलेक्ट्रॉनिक मेल का तरीका भी विकसित किया जिसे 'ई-मेल' की संज्ञा दी गई।'' इंटरनेट की उपयोगिता को देखते हुए करीब दस वर्षों के उपरांत 1979 ई. में एक शैक्षणिक नेटवर्क 'यूजनेट न्यूज' के रूप में इसका पहला सार्वजनिक विस्तार हुआ। इंटरनेट की लोकप्रियता के कारण यह अब सरकारी नियंत्रण से बाहर आकर आम जनता के लिए सुलभ हो गया है। भारत में इसकी शुरूआत सर्वप्रथम सैनिक अनुसंधान नेटवर्क (ईआर नेट) ने रक्षा और अनुसंधान क्षेत्रों के लिए उसका उपयोग शुरू किया। यह ईआरनेट भारत सरकार के इलेक्ट्रॉनिक विभाग तथा यूनाईटेड नेशन्स डेवलपमेंट प्रोग्राम का एक संयुक्त उपक्रम था। इसके उपरांत संचार के माध्यम के रूप में एक बूम आयी और लोग इसको पसंद करने लगे। इंटरनेट के उपयोग के मुख्य पांच क्षेत्र हैं यथाः ई-मेल, बातचीत (चैटिंग), ई-बैंकिंग, ई-कॉमर्स, ई-प्रशासन आदि। आज इंटरनेट पर अभिव्यक्ति का सशक्त माध्यम बना है-ब्लॉग। जहां कि कोई संपादकीय कैंची नहीं चलती, अपने मन की अभिव्यक्ति कर सकते हैं। इंटरनेट स्वभावतः सामाजिक है। यह प्रत्येक को समान अवसर देता है। इसका साझा क्षेत्र है सार्वजनिक स्थान। अन्ना आंदोलन हो या मिश्र में हुए जनांदोलन में इंटरनेट के सोशल मीडिया नेटवर्कों की अहम भूमिका रही है। इंटरनेट ने प्रिंट समर्थित एकाधिकार को समाप्त कर दिया। ऐसे में कहा जा सकता है कि मौजूदा दौर मीडिया का नहीं बल्कि साइबर मीडिया का है।

4.7 सारांश

जनसंचार ऐसी संचार व्यवस्था का रूप है जो यांत्रिक संचालन के साथ-साथ सामूहिक रूप से समाज की प्रत्येक इकाई की भूमिका लिए हुए है। संचार व्यवस्था, चाहे वह प्रिंट हो या इलेक्ट्रॉनिक माध्यम (रेडियो, टेलीविजन या न्यू मीडिया), इससे भारत की सामाजिक, आर्थिक, सांस्कृतिक एवं राजनीतिक क्षेत्रों में व्यापक बदलाव आया है। भारतीय मीडिया तो इससे व्यापक स्तर पर प्रभावित हुई है। यह प्रभाव उसके ढ़ांचागत स्तर से लेकर समाचारों के चयन, प्रस्तुतीकरण तक में देखने को मिल रहा है। हिंदी के अखबार पूंजी, तकनीक, प्रस्तुतिकरण, प्रसार और कलेवर की दृष्टि से ज्यादा सम्पन्न हुए हैं। इलैक्ट्रानिक मीडिया के प्रभाव से हम रू-ब-रू हैं। इंटरेनट के माध्यम से हम वैकल्पिक मीडिया का उपयोग कर रहे हैं।

4.8 बोध प्रश्न

4.8.1 बहुविकल्पीय

प्रश्न 1 : हिंदी का पहला समाचार पत्र 'उदन्त मार्तण्ड' का प्रकाशन कब हुआ?

विकल्प : क. 30 जनवरी, 1826 ख. 30 फरवरी, 1826
ग. 30 जून, 1826 घ. 30 दिसंबर, 1826 उत्तर : क.

प्रश्न 2 : आकाशवाणी की विविध भारती सेवा कब प्रारंभ हुई?

विकल्प : क. 03 अक्टूबर, 1960 ख. 03 अक्टूबर, 1959

ग. 03 अक्टूबर, 1958 घ. 03 अक्टूबर, 1957 उत्तर : घ.

प्रश्न 3 : निम्न में से किस संपादक का सम्बद्ध 'कविवचनसुधा' से रहा है ?

विकल्प : क. भारतेंदु हरिश्चंद्र ख. राजा राममोहन राय

ग. पं. युगल किशोर शुक्ल घ. पं. बालकृष्ण भट्ट उत्तर : क.

प्रश्न 4 : निम्न में से किस कमिटी की रिपोर्ट पर आकाशवाणी से दूरदर्शन को अलग किया गया?

विकल्प : क. वर्गीज कमिटी ख. मुद्लियार कमिटी

ग. चंदा कमिटी घ. मजीठिया कमिटी उत्तर : ग.

प्रश्न 5 : देश का पहला टेलीविजन ट्रांसमीटर कब से काम करना शुरू किया?

विकल्प : क. 15 सितंबर, 1959 ख. 15 सितंबर, 1949

ग. 15 सितंबर, 1939 घ. 15 सितंबर, 1929 उत्तर : क.

4.8.2 लघु उत्तरीय

1. हिंदी का पहला समाचार पत्र 'उदन्त मार्तण्ड' पर प्रकाश डालिए।
2. पत्रकारिता को राजा राममोहन राय की देन पर टिप्पणी लिखिए।
3. टेलीविजन के विकास क्रम में 'साइट' (SITE - सैटेलाइट इंस्ट्रक्शनल टेलीविजन एक्सपेरीमेंट)पर प्रकाश डालिए।

4.8.3 दीर्घ उत्तरीय

प्रश्न एक : गांधीजी ने पत्रकारिता को आंदोलन का हथियार बनाया, स्पष्ट कीजिए।

प्रश्न दो : टेलीविजन के विकास क्रम पर प्रकाश डालिए?

ज्ञान शांति मैत्री

4.8.4 व्यवहार

कार्य एक : आज वैकल्पिक मीडिया की महत्ता अपरिहार्य है, इस कथन की पुष्टि कीजिए

4.9 उपयोगी ग्रंथ सूची

सिंह, देवव्रत, (2007). 'भारतीय इलेक्ट्रॉनिक मीडिया', दिल्ली : प्रभात प्रकाशन।

पचौरी, सुधीश, (1994). 'दूरदर्शन : विकास से बाजार तक', नई दिल्ली : प्रकाशन विभाग, संचना एवं प्रसारण मंत्रालय

चौधरी, ओमकार, (2011). 'टेलीविजन पत्रकारिता', पंचकुला : हरियाणा साहित्य अकादमी।

कुमार, सुरेश, (2004). 'इंटरनेट पत्रकारिता', नई दिल्ली : तक्षशिला प्रकाशन।

मेहरा, रमेश, (2007). 'मीडिया और प्रसारण', नई दिल्ली : तक्षशिला प्रकाशन।

शर्मा, कमल, (2009). 'रेडियो प्रसारण', नई दिल्ली : प्रतिभा प्रतिष्ठान।

नटराजन, जे., (2002). 'भारतीय पत्रकारिता का इतिहास', नई दिल्ली : प्रकाशन विभाग, संचना एवं प्रसारण मंत्रालय।

Kumar, keval j., (2004). '*Mass Communication in India*', Mumbai : Jaico Publishing House.

Rayudu, C.S., (2008). '*Communication*', Mumbai : Himalya Publishing House.

जैन, रमेश, (2003). '*जनसंचार एवं पत्रकारिता*', जयपुर : मंगलदीप पब्लिकेशन्स।

Desai, Amit, '*Journalism and Mass Communication*', New Delhi: Reference Press.

बघेल, संजय सिंह, 'संचार, समाज और साहित्य', गाजियाबाद : के.एल. पचौरी प्रकाशन।

ज्ञान शांति मैत्री

खंड – 4
संचार एवं समाज कार्य

इकाई -1 सामाजिक वैयक्तिक सेवाकार्य और संचार

इकाई की रूपरेखा

1.0 उद्देश्य
1.1 प्रस्तावना
1.2 सामाजिक वैयक्तिक सेवाकार्य
1.3 सामाजिक वैयक्तिक सेवा कार्य प्रक्रिया के चरण
1.4 संचार की अवधारणा
1.5 संचार के प्रकार एवं कार्य
1.6 सामाजिक वैयक्तिक सेवा कार्य प्रक्रिया में संचार की भूमिका
1.7 सारांश
1.8 बोध प्रश्न
1.9 संदर्भ एवं उपयोगी ग्रंथ

1.0 उद्देश्य

इस इकाई का अध्ययन करने के पश्चात आप -

1. सामाजिक वैयक्तिक कार्य की अवधारणा को स्पष्ट कर सकेंगे।
2. सामाजिक वैयक्तिक कार्य की प्रक्रिया एवं अंगभूत सिद्धांतों से भली-भांति परिचित हो सकेंगे।
3. संचार की अवधारणा एवं प्रकार्य को व्याख्यायित कर सकेंगे।
4. सामाजिक वैयक्तिक सेवा कार्य प्रक्रिया में संचार की भूमिका को अभिव्यक्त कर सकेंगे।

ज्ञान शांति मैत्री

1.1 प्रस्तावना

सामाजिक वैयक्तिक सेवाकार्य समाज कार्य की प्राथमिक प्रणाली के रूप में जानी जाती है। यह एक कला है जिसमें मानवीय संबंधों के विज्ञान के ज्ञान और संबंधों में निपुणता का उपयोग इस दृष्टि से किया जाता है कि व्यक्ति में उसकी योग्यताओं और समुदाय में साधनों को गतिमान किया जाए जिससे सेवार्थी और उसके पर्यावरण के कुछ या समस्त भागों के बीच उच्चतर समायोजन स्थापित हो सके । कार्यकर्ता द्वारा सेवार्थी के परिप्रेक्ष्य में यह प्रयास किया जाता है कि किन-किन प्रविधियों, तकनीकों एवं कुशलताओं से वह सेवार्थी के साथ मिलकर कार्य कर सके। सामाजिक वैयक्तिक सेवाकार्य व्यावसायिक गुणों पर आधारित एक कार्य है, जिसमें विभिन्न प्रकार की कौशलों या जिसे हम निपुणता भी कहते हैं, का उपयोग किया जाता है। वैयक्तिक कार्यकर्ता कुछ कौशलों के साथ-साथ कुछ तकनीकों का भी उपयोग संपूर्ण वैयक्तिक कार्य प्रक्रिया में करता है, जिसके आधार पर वह सेवार्थी की समस्या का समाधान करने में सक्षम बन पाता है। कौशल एवं तकनीकों का उपयोग समूह कार्य प्रक्रिया प्रारंभ होने से अंत तक किया जाता है। किसी व्यावसायिक कार्य में कुशलता एवं तकनीकों का होना उसके स्वरूप व महत्व को स्पष्ट करता है। मानव व्यवहार की जो समस्याएं

हैं, उन समस्याओं का तब तक समाधान नहीं किया जा सकता, जब तक कि उन समस्याओं के समाधान हेतु विशेष योग्यता एवं कौशल का उपयोग न किया गया हो। सामाजिक वैयक्तिक सेवाकार्य प्रक्रिया में संचार को एक तकनीक एवं कौशल के रूप में जाना जाता है जिसका उपयोग कर कार्यकर्ता सेवार्थी एवं सेवार्थी से संबंधित व्यक्तियों तक अपनी बातों को पहुंचाने का प्रयास करता है। उक्त इकाई के माध्यम से विद्यार्थी वैयक्तिक कार्य प्रक्रिया में संचार के महत्व एवं भूमिका के संबंध में विस्तार से अध्ययन कर सकेंगे।

1.2 सामाजिक वैयक्तिक सेवाकार्य

सामाजिक वैयक्तिक सेवा कार्य एक ऐसी प्रणाली है जिसमें सेवार्थी की मुख्य रूप से मनोसामाजिक समस्याओं का अध्ययन कर निदान प्रस्तुत करने का प्रयास किया जाता है। जिसका केंद्र बिंदु व्यक्ति एवं व्यक्ति से संबंधित समस्या होती है। इस प्रणाली के माध्यम से कार्यकर्ता सेवार्थी को समाज में समायोजित करने उसमें सामंजस्य स्थापित करने का प्रयास करता है। सामाजिक वैयक्तिक सेवाकार्य को विभिन्न विद्वानों ने भिन्न-भिन्न प्रकार से परिभाषित करने का प्रयास किया है।

मेरी रिचमंड के अनुसार "सामाजिक वैयक्तिक सेवाकार्य में वे प्रक्रियाएँ आती हैं जो एक-एक करके व्यक्तियों एवं उनके सामाजिक पर्यावरण के बीच सचेतन रूप से समायोजन स्थापित करती है।"

टैफ्ट एक दूसरे विद्वान थे जिन्होंने 1920 में सामाजिक वैयक्तिक सेवाकार्य को व्यक्ति की सामाजिक चिकित्सा के रूप में परिभाषित किया। उनके अनुसार-

''सामाजिक वैयक्तिक सेवाकार्य समायोजन रहित व्यक्ति की सामाजिक चिकित्सा है जिससे इस बात का प्रयास किया जाता है कि उसके व्यक्तित्व, व्यवहार एवं सामाजिक संबंधों को समझा जाए और उसकी सहायता की जाए जिससे कि वह एक उच्चतर सामाजिक एवं वैयक्तिक समायोजन प्राप्त कर सके।''

वैयक्तिक कार्य की प्रक्रिया को पूर्ण रूप से परिभाषित करने वाली परिभाषा गोर्डन हेमिल्टन (1956) अपनी किताब *Theory and Practice a Social Case Work* में देते हैं। उनके अनुसार-

''सामाजिक वैयक्तिक कार्य में सेवार्थी को स्वयं अपनी परिस्थितियों के अध्ययन में सहभागी बनाते हुए उसके लिए बनी योजनाओं को उनसे साझा करने और उन योजनाओं का उपयोग वह अपनी समस्या सुलझाने में सक्रिय प्रयास करें इसके लिए वह खुद के संसाधन या उस समुदाय, जिसमें वह रह रहा है, में उपलब्ध एवं उपयुक्त संसाधनों का उपयोग करने के लिए सेवार्थी को प्रोत्साहित किया जाता है।''

उक्त सभी परिभाषाएँ सामाजिक वैयक्तिक कार्य को एक प्रक्रिया के रूप में परिभाषित करती दिखती है किन्तु इनमें कुछ छूट रहा था जिसे एच.एच. पर्लमन ने अपनी किताब Social Case Work : A Problem Solving Process में विश्लेषित किया है। एच.एच. पर्लमन (1957) के अनुसार-

''सामाजिक वैयक्तिक सेवाकार्य एक प्रक्रिया है जिसका प्रयोग कुछ मानव कल्याण संस्थाएँ करती है ताकि व्यक्तियों की सहायता की जाए जिससे कि वे सामाजिक कार्यात्मकता की समस्याओं का सामना उच्चतर प्रकार से कर सकें।'' पर्लमन ने अपनी पुस्तक में सामाजिक वैयक्तिक कार्य के चार प्रमुख अंगों (Constituents) का वर्णन किया है:

1) व्यक्ति (Person)

2) समस्या (Problem)

3) स्थान (Place)

4) प्रक्रिया (Process)

इसको वैयक्तिक सेवाकार्य में मॉडल की तरह भी उपयोग में लाया जाता है, आमतौर पर इसे सामाजिक वैयक्तिक कार्य की शब्दावली में 4P के रूप में जाना जाता है।

अत: इस प्रकार से विभिन्न विद्वानों ने सामाजिक वैयक्तिक सेवाकार्य को परिभाषित करने का प्रयास किया है । जिससे इसका अर्थ भी स्पष्ट हो जाता है कि सामाजिक वैयक्तिक सेवाकार्य एक व्यक्ति को सामाजिक कार्यकर्ता द्वारा दी जाने वाली सेवा है, यह सेवा उपचारात्मक या सहायता परक दोनों हो सकती है।

1.3 सामाजिक वैयक्तिक सेवा कार्य प्रक्रिया के चरण

सामाजिक वैयक्तिक सेवाकार्य (Case Work) की प्रक्रिया को मैरी रिचमण्ड (1917) ने तीन भागों - *अध्ययन, निदान* और *उपचार* में विभाजित किया लेकिन वर्तमान परिवेश को देखते हुए मौजूदा विद्वानों ने इस प्रक्रिया को पाँच भागों *अध्ययन, निदान, उपचार, समाप्ति* तथा *मूल्यांकन* में विभाजित कर उसका विस्तृत वर्णन प्रस्तुत किया है जो निम्नवत है :-

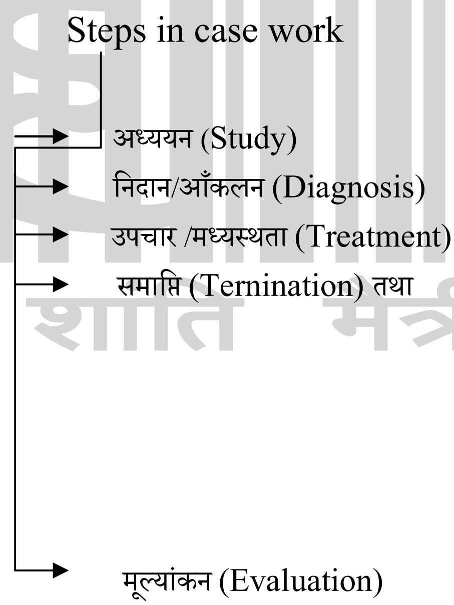

सामाजिक वैयक्तिक सेवा कार्य में अध्ययन (Study) से तात्पर्य उस प्रक्रिया से है जिसके द्वारा केस वर्क (Case Work) को प्रारंभ किया जाता है और कार्यकर्ता सेवार्थी (Client) की मनोसामाजिक (Psychosocial) समस्याओं का अध्ययन विस्तार से करता है। मैरी रिचमण्ड कहती है कि “सामाजिक अध्ययन में वैयक्तिक कार्य को उस प्रत्येक कारक को सुरक्षित करना चाहिए जो एक साथ होने पर तर्कपूर्ण तथा अनुमानित तर्क के जरिए, सेवार्थी के व्यक्तित्व तथा उपयुक्त उपचार, मध्यस्थता के लिए स्थिति को उजागर करेगा।”

सामाजिक वैयक्तिक कार्य में निदान आँकलन के जरिए कार्यकर्ता सेवार्थी की समस्या से संबंधित तीन प्रश्नों का उत्तर ढूँढने की कोशिश करता है कि *समस्या क्या है? यह कैसे उत्पन्न हुई है? इसे दूर करने के लिए क्या किया जा सकता है?* इन्हीं तीन प्रश्नों के उत्तर के जरिए कार्यकर्ता सेवार्थी (Client) समस्याओं की पहचान करने की कोशिश करता है।

केस वर्क में उपचार मध्यस्थता से तात्पर्य सेवार्थी को क्षमतावान बनाना, उसके आत्मविश्वास को बढ़ाना और उसे सामाजिक रूप से विघटित होने से बचाना है। यह सेवार्थी के सुकून, संतुष्टि तथा आत्म अनुभव को बढ़ाने के लिए होता है।

केस वर्क में समाप्ति (Termination) से तात्पर्य इस प्रक्रिया (अध्ययन, निदान और उपचार) को समाप्त करना है जो तब आरंभ हुई थी जब सेवार्थी सामाजिक वैयक्तिक कार्य मध्यस्थता (निदान) प्रक्रिया से गुजरने को सहमत हुआ था। समाप्ति प्रक्रिया का निर्णय सेवार्थी तथा कार्यकर्ता द्वारा आपसी सहमति से लिया जाता है। यह वह स्थिति होती है जब सेवार्थी को वर्तमान तथा विगत स्थितियों से निपटने की अपनी क्षमता में विश्वास हो जाता है।

केस वर्क में मूल्यांकन से तात्पर्य उस प्रक्रिया से है जिसमें यह जानने की कोशिश की जाती है कि क्या केस वर्क अपने वांछित लक्ष्य को प्राप्त कर चुका हैं और क्या सेवार्थी (Client) अपनी विभिन्न मनोसामाजिक (Psychosocial) समस्याओं से वाकई निजात प्राप्त कर चुका है या अपनी समस्याओं को दूर करने में सक्षम हो चुका है ? आदि प्रश्नों का उत्तर कार्यकर्ता जानने की कोशिश करता है। वैयक्तिक सेवा कार्य की उपरोक्त प्रक्रिया के संदर्भ में फर्न लॉरी (1936) अपने विचारों को प्रकट करते हुए कहते है कि जिस प्रकार किसी रस्सी की लड़ियों को बीच से काट दिया जाता है तो वह उझलकर गिर जाती हैं ठीक उसी प्रकार इस केस वर्क की प्रक्रिया भी एक दूसरे से गुथी हुई है, अगर इसमें से किसी एक के बिना इस प्रक्रिया को आगे बढ़ाया जाए तो वाकई कहीं न कहीं सेवार्थी की समस्या, समस्या ही बनकर रह जाएगी।

ज्ञान शांति मैत्री

संस्था, सेवार्थी प्रणाली तथा कार्य

सामाजिक कार्यकर्ता का उद्देश्य है सेवार्थी की सामाजिक कार्यप्रणाली में सुधार करना। सेवार्थी के साथ संबंध स्थापित करके ही सामाजिक कार्यकर्ता यह उद्देश्य प्राप्त कर सकता है। प्रक्रिया तब शुरू होती है जब सेवार्थी अपने आप पहल करके या फिर किसी और के कहने पर संस्था के पास मदद के लिए आता है। कई बार तो सेवार्थी का यह कार्य संस्था द्वारा संचालित किए गए किसी कार्यक्रम का ही परिणाम होता है। उदाहरण के लिए एच.आई. वी. एड्स के बारे में जागरूकता अभियान उन लोगों को संस्था से संपर्क करने के लिए प्रोत्साहित करेगा जो सक्रंमित होने की शंका से ग्रस्त हैं। अन्य मामलों में वह दूसरे संगठनों व संस्थाओं के पास भेजा जा सकता है। इसके पश्चात संस्था यह मामला सामाजिक कार्यकर्ता को आवंटित कर देता है। संस्था की भूमिका है आवश्यक संसाधनों की व्यवस्था करना। सेवार्थी इस सारी प्रक्रिया का केंद्र बिंदु होता है। इसलिए सेवार्थी सामाजिक कार्यकर्ता संस्था प्रणाली को ठीक प्रकार से समझा जाना चाहिए।

सेवार्थी कुछ अपेक्षाओं या हो सकता है कि कुछ आशंकाओं के साथ संस्था से संपर्क करता है। उसकी अपने मूल्य-तंत्र, व्यक्तिगत अनुभवों और सामाजिक संरचना में स्थिति पर आधारित अपनी एक विश्व दृष्टि होती है।

सामाजिक कार्य की प्रक्रिया के बारे में सेवार्थी के अपने कुछ निश्चित विचार हो सकते है। उदाहरण के लिए आर्थिक समस्याओं से ग्रस्त एक व्यक्ति वित्तीय मदद की अपेक्षा करता है तो उसके लिए सलाह-मशविरे की सारी प्रक्रिया समय की बर्बादी है। दूसरी तरफ संस्था की अपनी विचारधारा तथा अपनी सीमाएं होती हैं। उनको इन्हीं मूल्यों एवं विचारधारा के आधार पर आगे बढ़ना होता है। सामाजिक कार्यकर्ता का व्यावसायिक मूल्यों और नैतिकता पर आधारित अपना मूल्यांकन होता है। यह महत्वपूर्ण है कि विशिष्ट व्यक्तिगत अनुभवों से निर्मित व्यक्तिगत मूल्य सेवार्थी के प्रति उसकी अवधारणा को प्रभावित न करें। सामाजिक कार्य के सिद्धांत सहभागिता, सामाजिक कार्यकर्ता की ओर से गुणवत्ता की आवश्यकता पर बल देते हैं। इसलिए एक सामाजिक कार्यकर्ता को संबंधों में व्यक्तिगत अनुभवों के असर को संयमित करने के लिए स्वचेतना का एक निश्चित स्तर कर लेना चाहिए -

1. आपकी सामाजिक कार्यप्रणाली के संदर्भ में अपनी पसंद एवं नापसंद, जैसे मित्रों के बारे में आपकी पसंद और वह कार्य जिसमें आपको आनंद आता है या जिसे आप नापसंद करते हों तथा ऐसे मामले में आपके विचार से महत्वपूर्ण हैं, की सूची बना लें एवं उन पर विचार-विमर्श करें।

2. एक व्यक्ति/समूह/समुदाय का पहला प्रभाव कैसा है और क्या तदुपरांत हुए सत्रों तथा अधिक सूचनाओं की प्राप्ति के बाद इसमें कोई परिवर्तन हुआ है।

3. सेवार्थी, संस्था को किस दृष्टि से देखता है और क्यों?
क) सहायक ख) मित्र ग) संबंधी घ) दलाल ड.) डॉक्टर च) व्यवसायी छ) अन्य कुछ

4. संस्था की सेवार्थी के बारे में क्या सोच है?
क) गरीब और असहाय ख) संसाधनहीन

(यहाँ सेवार्थी को सेवा प्रदान करने के औचित्य पर विचार किया जा सकता है। सेवा प्रदान करने के लिए कुछ महत्वपूर्ण कारण इस प्रकार हैं-धार्मिक, परोपकारी, व्यावसायिक, उद्यमशीलता संबंधी एवं जन संपर्क में सुधार।)

वैयक्तिक कार्य की प्रक्रिया में कार्यकर्ता को निम्न सत्रों के माध्यम से संपूर्ण कार्य प्रणाली को क्रियान्वित करना होता है।

प्रथम सत्र (प्रथम अनुकूलन दौरा)

प्रथम सत्र में कार्यकर्ता सेवार्थी के साथ निम्न प्रकार से मिलकर कार्य करता हैं-

- सर्वप्रथम कार्यकता सेवार्थी के साथ व्यावसायिक संबंध स्थापित करता हैं।
- सेवार्थी से संबंधित समस्याओं को परिभाषित एवं रेखांकित करता हैं।
- सेवार्थी की समस्या एवं कार्यो का मूल्यांकन करता हैं।
- सेवार्थी एवं वैयक्तिक कार्यकर्ता के उद्देश्य एवं भूमिका को निर्धारित करता हैं।
- सेवार्थी की आवश्यक जानकारी जैसे – सेवार्थी का नाम , सेवार्थी का पता, सेवार्थी की उम्र, लिंग, शैक्षिक योग्यता, धर्म, जाति, श्रेणी (ग्रामीण, शहरी, जनजातीय) सेवार्थी का व्यवसाय, सामाजिक स्तर एवं आय इत्यादि संबंधी जानकारी को एकत्रित करता हैं।

- सेवार्थी की पारिवारिक पृष्ठभूमि को जानना – कार्यकर्ता सेवार्थी की पारिवारिक पृष्ठभूमि को जानने का प्रयास करता हैं यदि सेवार्थी अनाथ हैं या उसके परिवार के सदस्य भी नहीं हैं तो कार्यकर्ता द्वारा सेवार्थी के अधिक निकट व्यक्तियों की सूची तैयार कर सेवार्थी से संबंधित तथ्य को एकत्रित किया किया जाता हैं। इसके लिए कार्यकर्ता द्वारा निम्न तालिका का उपयोग किया जाता हैं -

क्रमांक	संबंधित व्यक्तियों के नाम	सेवार्थी से संबंध	उम्र	शैक्षिक योग्यता	व्यवसाय एवं आय

- सेवार्थी संबंध – सामाजिक वैयक्तिक कार्य प्रक्रिया में संबंध स्थापन एक महत्वपूर्ण कौशल माना जाता हैं जिसके अंतर्गत समाज कार्यकर्ता सेवार्थी से संबंध रखने वाले विभिन्न व्यक्तियों से सेवार्थी संबंधित जानकारी एकत्रित करता हैं। कार्यकर्ता सेवार्थी से प्रत्यक्ष एवं अप्रत्यक्ष रूप से संबंध रखने वाले व्यक्तियों से जानकारी प्राप्त कर सकता हैं एवं मूल्यांकन करता हैं। सेवार्थी के जीवन में उन लोगों से संबंध, जो सर्वाधिक महत्वपूर्ण हैं एवं सेवार्थी को प्रभावित करते हैं इन्हें उदाहरण के रूप में देखा जा सकता हैं।
    - सेवार्थी के माता से संबंध
    - सेवार्थी के पिता से संबंध
    - अन्य बच्चों के साथ संबंध
    - चाचा, चाची एवं अन्य चचेरे भाई-बहनों के साथ संबंध
    - माता-पिता के बीच संबंध
    - बच्चों के साथ माता –पिता के संबंध
    - महत्वपूर्ण संबंध यदि कोई है (किसी भी अन्य के साथ)
    - पडोसियों के साथ संबंध
    - स्कूल एवं शिक्षण संस्थाओं के साथ संबंध
    - व्यवसाय एवं रोजगार से संबंध रखने वाले व्यक्तियों से संबंध
- दुघर्टना तथा सदमे से प्रभावित व्यक्ति की जानकारी : यदि सेवार्थी किसी दुघर्टना या सदमे से प्रभावित हैं या वह किसी मनोसामाजिक समस्या से ग्रसित हो गया हैं तो यह सुनिश्चित करे कि क्या

ज्ञान शांति मैत्री

किसी दुर्घटना या सदमे ने सेवार्थी को प्रभावित किया हैं ? उसके प्रभाव को जानने के पश्चात ही आप किसी निदान तक पहुँच सकते हैं।

- भावी योजनाएॅ: सेवार्थी की मनोदशा को ज्ञात करने के लिए आप सेवार्थी से उसकी भावी योजना के संबंध
  में जानकारी प्राप्त कर सकते हैं।

- सत्र का समापन : सत्र का समापन करते समय सेवार्थी से यह पूछ लेना चाहिए कि वह पुन: कब मिलेगा ? साथ ही साथ समय एवं स्थान का भी निर्धारण कर लेना चाहिए। आपको (कार्यकर्ता को) भी ध्यान रखना चाहिए कि आप सेवार्थी को दिए समयानुसार ही उससे मिले।
  इस तरह से कार्यकर्ता संपूर्ण प्रक्रिया कर प्रथम सत्र की समाप्ति कर द्वितीय सत्र की ओर अग्रसर होता है।

सत्र द्वितीय (द्वितीय अनुकूलन दौरा)

प्रथम सत्र के पश्चात आपके पास सेवार्थी से संबंधित विभिन्न प्रकार की आवश्यक सूचनाएं एकत्रित हो जाती है। इसके आधार पर ही आप सेवार्थी से संबंधित विभिन्न प्रकारों के सवालों को पूछकर उनसे आपको सेवार्थ से संबंधित महत्वपूर्ण जानकारी प्राप्त हो जाएगी। प्रथम सत्र के माध्यम से आपने सेवार्थी से संबंध स्थापित कर लिया हैं अब सेवार्थी किसी भी प्रकार से आपसे हिचकिचाहट महसूस नहीं करेगा जिससे आप सेवार्थी की समस्या से सबंधित सीधे प्रश्नों को पूछ सकते हैं। संबंध स्थापित हो जाने के पश्चात आप सेवार्थी से यह भी पूछ सकते हैं कि आपकी समस्या के पीछे कौन-कौन से कारण हैं क्या कोई दूसरे व्यक्ति आपको किसी कारण से परिशान कर रहे हैं? या आपने आस-पास के लोगों से आपको कोई परेशानी हैं ? आप यह भी पूछ सकते हैं कि जो दूसरे लोग समस्या पैदा कर रहे हैं उनका कारण क्या हैं? कई बार सेवार्थी आपसे झूठ भी बोल सकता है। आपको इस बात का अहसास हो जाता है फिर भी आपको ऐसा बर्ताव करना चाहिए जिससे सेवार्थी पर नकारात्मक प्रभाव न पड़े। आगे आप बडी ही सावधानीपूर्वक सेवार्थी के पारिवारिक माहौल के संदर्भ में जानकारी प्राप्त कर लेते हैं।

सत्र तृतीय (तृतीय अनुकूलन दौरा)

तृतीय सत्र के दौरान कार्यकर्ता सेवार्थी का गृह-भ्रमण अर्थात् घरों का दौरा करता हैं। घरों का दौरा करने के पूर्व कार्यकर्ता को इस प्रकार का संबंध स्थापित कर लेना चाहिए जिससे सेवार्थी सहज रूप से सहयोग प्रदान कर सके। इस सत्र में सेवार्थी संबंधित व्यक्तियों से अवलोकन एवं साक्षात्कार विधि के माध्यम से समस्या सबंधी कारणों को ज्ञात करने का प्रयास करता हैं। अवलोकन के संदर्भ में कार्यकर्ता सेवार्थी के निवास स्थान की स्थिति, आसपास का वातावरण, जीवन स्तर, पडोस की स्थिति इत्यादि का अवलोकन करता हैं। साक्षात्कार के दौरान कार्यकर्ता सेवार्थी के माता, पिता एवं अन्य संबंधित व्यक्तियों का साक्षात्कार करता है।

अवलोकन एवं साक्षात्कार की प्राक्रिया के पश्चात आप अंत:क्षेप की योजना बना सकते हैं जाकि निम्न प्रकार से हो सकती हैं –

- समस्या की जॉच और विश्लेषण

- समस्या के कारण
- संभावित समाधान
- उपलब्ध भौतिक और गैर-भौतिक संसाधन
- सेवार्थी, संस्था एवं कार्यकर्ता की सीमाएं
- अंत: क्षेप योजना के उद्देश्य
- अंत:क्षेप के प्रतिरूप के कार्यान्वयन की समय सीमा।

सत्र चतुर्थ (चतुर्थ अनुकूलन दौरा – सत्र समाधान की खोज)

उपर्युक्त सत्रों की प्रक्रिया पूर्ण होने के पश्चात आपको सेवार्थी की समस्या के कारण ज्ञात हो जाते हैं इस सत्र के माध्यम से आप सेवार्थी को निम्न प्रकार से सहायता कर सकते हैं -

- सेवार्थी को परामर्श देकर आप उसकी समस्या का समाधान कर सकतें हैं।
- सेवार्थी की समस्या के आधार पर कार्यकर्ता सेवार्थी को समस्या समाधान के तरीकों के संदर्भ में सूचना प्रदान करा सकता हैं जैसे कि किसी समस्या समाधान करने वाले व्यक्ति के पास सेवार्थी को पहुंचा सकता हैं या फिर सरकारी एवं गैर-सरकारी योजनाओं के माध्यम से सेवार्थी को अवगत कराकर उसे सूचना प्रदान कराई जा सकती हैं।
- सेवार्थी को समझा-बूझाकर एवं दिशा – निर्देशन का प्रयोग कर।
- कार्यकर्ता सेवार्थी को भावनात्मक रूप से सहयोग देकर उसकी सहायता कर सकता हैं।
- कार्यकर्ता द्वारा सेवार्थी को ऐसे कौशलों को सिखाना चाहिए जिससे सेवार्थी सामाजिक परिस्थिति में प्रभावपूर्ण तरीके से कार्य कर सके।

सत्र पाँच एवं छह (पंचम अनुकूलन दौरा – मूल्यांकन एवं समापन)

सत्र पाँच में कार्यकर्ता को समस्त कार्यप्रणाली का मूल्यांकन कर समस्या का उपचार करना चाहिए एवं सत्र छठवें में कार्यर्ता द्वारा निर्धारित किए गए उद्देश्यों के अनुरूप स्वरूप परिणाम प्राप्त हो जाने पर प्रक्रिया का समापन कर देना चाहिए।

सामाजिक वैयक्तिक सेवा का कौशल और सिद्धांत

विभिन्न विद्वानों ने सामाजिक वैयक्तिक कार्यकर्ता में प्रयुक्त किए जाने वाले विभिन्न कौशलों का वर्णन किया है जैसे:

1. संबंध स्थापना का कौशल
2. समस्या का गहराई के साथ अन्वेषण करने का कौशल
3. मानव व्यवहार के ज्ञान का कौशल
4. उपलब्ध संसाधनों के उपयोग का कौशल
5. समस्या समाधान-ढूँढने का कौशल
6. संचार कौशल

उक्त इकाई में संचार कौशल के संदर्भ में विस्तृत वर्णन प्रस्तुत किया जा रहा है।

इन कुशलताओं के साथ कार्यकर्ता और सेवार्थी के बीच संबंध निश्चित करने हेतु एफ.बी. बीस्टेक (1957) ने The Casework Relationship में कार्यकर्ता –सेवार्थी संबंध के निम्नलिखित सिद्धांत बताएँ है-

1. स्वीकृति सिद्धांत
2. गोपनीयता का सिद्धांत
3. वैयक्तिकरण का सिद्धांत
4. भावनाओं का उद्देश्यपूर्ण प्रगटन का सिद्धांत
5. नियंत्रित संवेगात्मक संबंध का सिद्धांत
6. अनिर्णयात्मक मनोवृत्ति
7. सेवार्थी का आत्म-निर्धारण का अधिकार

1.4 संचार की अवधारणा

संचार का प्रत्येक मानव जीवन में अत्यंत महत्व होता है। इसी तकनीक के माध्यम से प्रत्येक व्यक्ति अपनी बातों या आवश्यकताओं को दूसरे व्यक्ति तक पहुँचाने का प्रयास करता है। यह एक ऐसा माध्यम है जिसकी सहायता से कार्यकर्ता संपूर्ण प्रक्रिया को सफलतापूर्वक क्रियान्वित करता है। प्रत्येक कार्यकर्ता में सेवार्थी के प्रति परस्पर कार्य की विश्वसनीयता और सहजता को स्थापित किया जाना एक आवश्यक पहलू होता है। कार्यकर्ता का यह उत्तरदायित्व होता है कि वह अपनी बात, सुझाव, मदद, प्रस्ताव आदि को सेवार्थी के समक्ष रखे साथ ही उसे उचित अभिव्यक्ति भी दे सके। इसी कुशलता के लिए संचार कौशल की आवश्यकता महत्वपूर्ण साबित होती है। संचार कौशल में सेवार्थी के प्रति संवेदना, उत्साह व सहानुभूति प्रकट करने के साथ सकारात्मकता आदि को व्यक्त करने की दक्षता महत्वपूर्ण होती है। हांलाकि यह स्थिति पर निर्भर करेगा कि किस परिस्थिति में किस प्रकार का संचार करना उचित होगा। वहीं संचार कौशल के रूप में तकनीक का प्रयोग भी प्रासंगिक होता है। प्राय: संचार के किसी माध्यम का प्रयोग सेवार्थी या सेवार्थी समूह को बेहतर समझ विकसित करने में मदद करता है। यह एक प्रकार से बात रखने और परस्पर समझने की कला है जिसकी निपुणता का लाभ समाजकार्य के क्षेत्र में संचार कौशल के माध्यम से किया जा सकता है। वैयक्तिक कार्यकर्ता तब सफल माना जाता है जब वह सेवार्थी से संचार प्रक्रिया करने की प्रविधि में निपुण होता है । इसी संदर्भ में के.ए.हसन ने तीन प्रकार से संचार कौशल को बताया है –

(1) ***सांवेगिक स्तर में संचार*** – जब कोई कार्यकर्ता (चिकित्सीय) सेवार्थी के प्रति सहिष्णुता तथा लगाव प्रदर्शित करते हुए उसकी समस्याओं को ध्यान पूर्वक सुनता है तो सेवार्थी के मन में यह भाव आने लगते है कि कार्यकर्ता उसमें रूचि ले रहा है तो वह गोपनीय तथ्यों को बताने में हिचकिचाहट महसूस नहीं करता है। संबंध घनिष्ठ तभी बनते हैं जब सेवार्थी अपनी संपूर्ण बातों को कार्यकर्ता से बताए।

(2) ***सांस्कृतिक स्तर पर संचार*** – कार्यकर्ता को पूर्व से अवगत होना चाहिए कि वह जिस सेवार्थी के साथ कार्य कर रहा है वह किस सांस्कृतिक परिवेश से है क्योंकि सांस्कृतिक वातावरण से सेवार्थी की समस्या का

जुड़ाव कहीं न कहीं आवश्यक रूप से होता है अत: आवश्यक है कि सेवार्थी से सांस्कृतिक अनुकूलता के अनुसार व्यवहार करना चाहिए।

(3) ***बौद्धिक स्तर पर संचार***- कार्यकर्ता को हमेशा यह प्रयास करना चाहिए कि सेवार्थी जिस बौद्धिक स्तर का है उसी के अनुसार वह संचार एवं व्यवहार करें अन्यथा सेवार्थी को कार्यकर्ता की बातें समझ नहीं आएगी । इस प्रकार से संचार कौशल तकनीक का प्रयोग करते समय इन उपर्युक्त बातों को ध्यान में रखना चाहिए।

1.5 संचार के प्रकार एवं कार्य

सामाजिक वैयक्तिक सेवा कार्य प्रक्रिया में संचार एक महत्वपूर्ण प्रक्रिया है। इस प्रक्रिया के अंतर्गत कार्यकर्ता सेवार्थी से अपनी बातों को उचित माध्यम से पहुंचाने का प्रयास करता है। संचार प्रक्रिया में संचार के अनेक प्रकार होते है जिनकों निम्न प्रकार से समझा जा सकता है।

संचार के प्रकार – संचार के प्रकार को मुख्य रूप से चार भागों में बांटा गया है -

- अंतः वैयक्तिक संचार (Intrapersonal Communication)
- अंतर वैयक्तिक संचार (Inter Personal Communication)
- समूह संचार (Group Communication) एवं
- जनसंचार (Mass Communication)

- अंतः वैयक्तिक संचार (Intrapersonal Communication) : यह संचार मनुष्य के अंतःमन में सक्रिय रहता है। आत्म विवेचन, आत्म विश्लेषण, तर्क-वितर्क, अंतर्द्वन्द्व आदि इस श्रेणी के संचार हैं। वस्तुतः यह एक मनोवैज्ञानिक प्रक्रिया है जो व्यक्ति के मन के दायरे में ही संपन्न होती है। अपने निजी अनुभवों, विचारों, स्मृतियों के आधार पर यह मन ही मन व्यक्तियों, घटनाओं, प्रभावों के परिणामों का आंकलन करता है।

- अंतर वैयक्तिक संचार (Inter Personal Communication): ऐसा संचार दो या दो से अधिक व्यक्तियों के छोटे से समूह के भीतर घटित होता है इसमें प्रतिपुष्टि तुरंत ही संपन्न हो सकती है। अंतर संचार की प्रक्रिया में संदेशों का प्रेषण मौखिक भी हो सकता है अथवा स्पर्श या चेहरे के हाव-भाव या शरीर की मुद्राओं से संभव हो सकता है। दूरभाष द्वारा संचार भी वैयक्तिक संचार का ही अंग है जबकि दोनों व्यक्ति आमने-सामने भी उपस्थित नही होते हैं।

- समूह संचार (Group Communication) : समूह संचार में श्रोता एक व्यक्ति न होकर एकत्रित व्यक्ति समूह होता है। स्रोत द्वारा प्रेषित सूचना या संदेश इसी समूह श्रोता के लिए प्रेषित किया जाता

है जिसका हित या उद्देश्य समान होता है और जो संदेश प्राप्ति के लिए ही एक स्थान पर एकत्रित होता है। सभा, गोष्ठी, सम्मेलन, नाटक, वाद-विवाद, संगीत-नृत्य, समूह संचार के ही रूप हैं।

- जनसंचार (Mass Communication): जनसंचार का संबंध आधुनिक युग से है। पूंजीवाद के उदय के उपरांत विस्तृत बाजारों का उदय हुआ। अपना माल ज्यादा से ज्यादा लोगों तक पहुंचाने और उन्हें खरीदने के लिए यातायात और संचार के साधन पर्याप्त नहीं हो रहे थे। दुनिया के कई देशों में लोकतांत्रिक शासन व्यवस्था कायम होने से लोगों के विचारों को अपने पक्ष में मोड़ने की जरूरत के अनुसार ही जनसंचार के माध्यमों का विकास अति तीव्र गति से हुआ। मीडिया के माध्यमों से द्रुत गति में अपने संदेश को यथाशीघ्र भेजने की व्यवस्था कायम हुई।

जन संचार का अर्थ वह वृहत जन समुदाय है जिसे संदेश प्रेषित किया जाता है। यह जनसमुदाय समूह के रूप में कहीं एकत्र न होकर बिखरा होता है।

संचार प्रक्रिया निम्नलिखित कार्यों को संपन्न करती है –

• सूचना या जानकारी देना।
• संचार से जुड़े व्यक्तियों को प्रेरित और प्रभावित करना।
• संचार व्यक्तियों समाजों और देशों के बीच संबंध स्थापित करता है।
• संचार विभिन्न तथ्यों विचारों मसलों पर व्यापक विचार विमर्श करने में सहायक होता है।
• मनुष्यों का मनोरंजन करना संचार का एक महत्वपूर्ण कार्य है।
• संचार राष्ट्र की आर्थिक व औद्योगिक उन्नति में सहायक होता है।

संचार का महत्व एवं कार्य – 1. सूचना, 2. समाजीकरण, 3. प्रेरणा, 4. वाद-विवाद, 5. शिक्षा, 6. सांस्कृतिक प्रसार, 7. मनोरंजन, 8. एकीकरण, 9. सामूहिक सत्ता की अपेक्षा, 10. परिवर्तन, 11. नियंत्रण और 11. नियंत्रण एवं निगरानी।

संचार के चार कार्य

5. सूचनात्मक (To Inform)
6. प्रेरणात्मक (To Intimate)
7. शिक्षात्मक (To Educate)
8. मनोरंजनात्मक (To Entertainment)

संचार के तत्व - जे. पाल लीगन्स ने संचार प्रक्रिया के निम्नलिखित तत्वों का उल्लेख किया है

9. संप्रेषक या संचारक या स्रोत (Communicator or Source)
10. संदेश (Message or Content)
11. संचार माध्यम या संचार सरणी (Communication Channel)
12. संकेतीकरण (Encoding)
13. संकेतवाचन (Decoding)

ज्ञान शांति मैत्री

14. संचार बाधा (Communication Noise)
15. संग्राहक/प्रापक अथवा प्राप्तकर्ता (Receiver)
16. प्रतिक्रिया (Feedback)

1.6 लिखना बाकी है

1.7 सारांश

प्रस्तुत इकाई में हमने सामाजिक वैयक्तिक सेवा कार्य के सभी अंगों को समाहित करने का प्रयास किया है। जिसमें सामाजिक वैयक्तिक कार्य की अवधारणा और इसके निर्माण में सहयोगी विभिन्न ज्ञानशाखाओं का अध्ययन इस इकाई में किया है। साथ ही सामाजिक वैयक्तिक सेवा कार्य की मूल मान्यताओं पर भी प्रकाश डाला है और इसके अंग जिसमें व्यक्ति,समस्या, स्थान एवं प्रक्रिया निहित है, का विस्तार से अध्ययन किया है। इस इकाई में सामाजिक वैयक्तिक सेवाकार्य को प्रणाली के रूप में समझने की कोशिश की है, सामाजिक वैयक्तिक सेवाकार्य को एक प्रणाली के रूप में समझने योग्य सामग्री का यथासंभव विश्लेषण किया है। हमने देखा कि संचार की अवधारणा काफी महत्वपूर्ण हो गई है। समाज कार्य में सामाजिक कार्यकर्ता संचार की समझ से वैयक्तिक सेवाकार्य को बेहतर तरीके से क्रियान्वित कर सकता है।

1.8 बोध प्रश्न

1. वैयक्तिक सेवाकार्य की अवधारणा को स्पष्ट कीजिए।
2. सामाजिक वैयक्तिक सेवाकार्य के अर्थ को स्पष्ट करते हुए इसकी मूल मान्यताओं को विश्लेषित कीजिए।
3. सामाजिक वैयक्तिक सेवाकार्य के अंगभूत तत्वों की संक्षेप में चर्चा करें।
4. वैयक्तिक सेवाकार्य में संचार की भूमिका पर प्रकाश डालिए।

ज्ञान शांति मैत्री

1.9 संदर्भ एवं उपयोगी ग्रंथ

Felix Paul Biestek. (1957). The Casework Relationship.Chicago: Loyala University Press.
Gorden Hemilton. (1948). Theory and Practice of Social Case Work .Colambia University Press.
H. H. Aptekar. (1955). The Dynamics of Case Work and Counselling .Newyork: Hathton Miclin Co.
H.H. Parlman. (1957). Social Case Work: A Problem Solving Process .Chicago: The University of Chicago Press.
Wiliam Jems,&Others. (1955). Psychology.Fransisco Newyork: Freeman and Co.
पी. डी. मिश्र. (2003). सामाजिक वैयक्तिक सेवा कार्य. लखनऊ: उत्त र प्रदेश हिंदी संस्थान.

उपयोगी वेब लिंक

http://www.historyofsocialwork.org/PDFs/1922,%20Richmond,%20what%20is%20social%20casework%20OCR%20C.pdf (10-09-2015)

http://www.yourarticlelibrary.com/sociology/social-casework-nature-values-principles-and-trends/36541/(10-09-2015)

http://christcollegemsw.blogspot.in/

ज्ञान शांति मैत्री

इकाई – 2 समूह समाज कार्य अभ्यास में संचार

इकाई की रूपरेखा

2.0 उद्देश्य
2.1 प्रस्तावना
2.2 सामाजिक समूह कार्य अर्थ एवं परिभाषाएं
2.3 समूह कार्य के कौशल
2.4 संचार कौशल की तकनीक
2.5 सामाजिक समूह कार्य और संचार
2.6 सारांश
2.7 बोध प्रश्न
2.8 संदर्भएवं उपयोगी ग्रंथ

2 .0 उद्देश्य

इस इकाई का अध्ययन करने के पश्चात आप -

5. सामाजिक समूह कार्य की अवधारणा को स्पष्ट कर सकेंगे।
6. सामाजिक समूह कार्य की प्रक्रिया एवं अंगभूत सिद्धांतों से भली-भांति परिचित हो सकेंगे।
7. संचार की अवधारणा एवं प्रकार्य को रेखांकित कर सकेंगे।
8. सामाजिक वैयक्तिक सेवा कार्य प्रक्रिया में संचार की भूमिका को व्याख्यायित कर सकेंगे।

2.1 प्रस्तावना

मानव समाज के इतिहास में सभी देशों एवं युगों में निर्धन, निराश्रित, अपंग, अनाथ, बेरोजगार, रोगी व्यक्ति रहे है तथा ऐसी अनेक समस्याएँ आई है जहाँ इन व्यक्तियों को अनेक कठिनाईयों का सामना करना पड़ा है। अतः इन व्यक्तियों की समस्याओं का समाधान करने तथा इसकी परेशानियों को समझने के लिए आदि काल से प्रयास किए जा रहे हैं। समाज कार्य की उत्पत्ति इन्हीं प्रयासों के फलस्वरूप हुई है। मानव और समाज पूर्ण रूप से एक-दूसरे पर आश्रित है। जिस प्रकार समाज ने मनुष्य को अनेक प्रकार के मानवीय अस्तित्व प्रदान किए हैं, वहीं समाज में अनेक प्रकार की समस्याएँ जैसे बेरोज़गारी आदि भी व्याप्त हैं। अतः इन सभी समस्याओं को दूर करने हेतु अनेक प्रयास किए जा रहे हैं। इन्हीं प्रयासों के फलस्वरूप कार्यों को समाजकार्य के नाम से जाना जाता है। आज समाजकार्य के लिए केवल दया,करुणा, प्रेम की भावना ही पर्याप्त नहीं है। आज समाजकार्य ने व्यवसाय का रूप ले लिया है। सामाजिक समूह कार्य को समाज कार्य की एक प्रणाली के रूप में प्रयुक्त किया जाता है जिसमें वैक्तियों की सहायता समूह कुछ रचनात्मक गतिविधियों के माध्यम से एवं व्यक्तियों में नेतृत्व का विकास कर उन्हें सक्षम बनाने का प्रयास किया जाता है। समूह कार्य व्यावसायिक गुणों पर आधारित एक कार्य है, जिसमें विभिन्न प्रकार के कौशलों एवं तकनीकों का प्रयोग किया जाता है। समूह कार्यकर्ता कुछ कौशलों के साथ-साथ कुछ तकनीकों का भी उपयोग संपूर्ण समूह कार्य

प्रक्रिया में करता है, जिसके आधार पर समूह के उद्देश्यों को प्राप्त किया जाता है। कौशल एवं तकनीकों का उपयोग समूह कार्य प्रक्रिया प्रारंभ होने से अंत तक किया जाता है। किसी व्यावसायिक कार्य में कुशलता एवं तकनीकों का होना उसके स्वरूप व महत्व को स्पष्ट करता है। मानव व्यवहार की जो समस्याएं हैं, उन समस्याओं का तब तक समाधान नहीं किया जा सकता, जब तक कि उन समस्याओं के समाधान हेतु विशेष योग्यता एवं कौशल का उपयोग न किया गया हो। उक्त इकाई के माध्यम से छात्र-छात्राओं को समूह कार्य प्रक्रिया में प्रयुक्त की जाने वाली संचार कौशल के संबंध में विस्तार से बताया जा रहा है।

2. 2 सामाजिक समूह कार्य – अर्थ एवं परिभाषा

विभिन्न विद्वानों द्वारा समूह कार्य की कुछ परिभाषाएँ दी गई हैं- न्यूज टेट्र के द्वारा 1935 में दी गई परिभाषा में कहा गया है कि - 'स्वैच्छिक संघ द्वारा व्यक्ति के विकास तथा सामाजिक समायोजन पर बल देते हुए तथा एक साधन के रूप इस संघ का उपयोग सामाजिक इच्छित उद्देश्यों को आगे बढ़ाने के लिए शिक्षा प्रक्रिया के रूप में सामूहिक कार्य को परिभाषित किया जा सकता है।'

क्वायल, ग्रेस ने 1939 में कहा कि - 'सामाजिक सामूहिक कार्य का उद्देश्य सामूहिक स्थितियों में व्यक्तियों की अंत: क्रियाओं द्वारा व्यक्तियों का विकास करना तथा ऐसी सामूहिक स्थितियों को उत्पन्न करना जिससे समान उद्देश्यों के लिए एकीकृत, सहयोगी सामूहिक क्रिया हो सके।'

विल्सन एण्ड राइलैंड (1949) -'सामाजिक सामूहिक सेवा कार्य एक प्रक्रिया और एक प्रणाली है, जिसके द्वारा सामूहिक जीवन एक कार्यकर्ता द्वारा प्रभावित होता है जो समूह की परस्पर संबंधी प्रक्रिया को उद्देश्य प्राप्ति के लिए सचेत रूप से निर्देशित करता है। जिससे प्रजातांत्रिक लक्ष्यों को प्राप्त किया जा सके।'

हैमिल्टन ने सामाजिक समूह कार्य को 1949 में स्पष्ट करते हुए कहा कि - 'सामाजिक सामूहिक कार्य एक मनोसामाजिक प्रक्रिया है, जो नेतृत्व की योग्यता और सहकारिता के विकास से उतनी ही संबंधित है, जितनी सामाजिक उद्देश्य के लिए सामूहिक अभिरूचियों के निर्माण से है।'

कर्ले, आड्म (1950) - ''सामूहिक कार्य के एक पक्ष के रूप में, सामूहिक सेवा कार्य का उद्देश्य, समूह के अपने सदस्यों के व्यक्तित्व परिधि का विस्तार करना और उनके मानवीय संपर्कों को बढ़ाना है। यह एक ऐसी प्रणाली है जिसके माध्यम से व्यक्ति के अंदर ऐसी क्षमताओं का विकास किया जाता है, जो उसके अन्य व्यक्तियों के साथ संपर्क बढ़ाने की ओर निर्देशित होती है।'

ट्रैकर - 'सामाजिक समूह कार्य एक प्रणाली है। जिसके द्वारा व्यक्तियों की सामाजिक संस्थाओं के अंतर्गत समूहों में एक कार्यकर्ता द्वारा सहायता की जाती है। यह कार्यकर्ता कार्यक्रम संबंधी क्रियाओं में व्यक्तियों के परस्पर संबंधी प्रक्रिया का मार्गदर्शन करता है, जिससे वे एक-दूसरे से संबंध स्थापित कर सके और वैयक्तिक, सामूहिक एवं सामुदायिक विकास की दृष्टि से अपनी आवश्यकताओं एवं क्षमताओं के अनुसार विकास के सुअवसरों का अनुभव कर सकें।'

कोनोप्का - सामाजिक सामूह कार्य समाजकार्य की एक प्रणाली है जो व्यक्तियों की सामाजिक कार्यात्मकता बढ़ाने मे सहायता प्रदान करती है, उद्देश्यपूर्ण सामूहिक अनुभव द्वारा व्यक्तिगत, सामूहिक और सामुदायिक समस्याओं को प्रभावकारी ढ़ंग से सुलझाने मे सहायता प्रदान करती है।'' उपर्युक्त समस्त परिभाषाओं के विश्लेषण के पश्चात कहा जा सकता है कि न्यूज ट्रेट ने जी परिभाषा दी है उसमें केवल

सामूहिक कार्य को एक शिक्षात्मक प्रक्रिया बताया है और कहा कि स्वैच्छिक संघ ही इस दिशा में काम करते है। अनेक परिभाषाओं से स्पष्ट हो जाता है कि यह केवल शिक्षात्मक कार्य ही नहीं करता बल्कि इसके द्वारा सेवा प्रदान की जाती है। यह कार्य स्वैच्छिक एवं सार्वजनिक संगठनों दोनों के माध्यम से किया जाता है।
है मिल्टन ने अपनी परिभाषा में सबसे अलग प्रकार से समूह कार्य को प्रस्तुत किया है और बताया है कि समूह कार्य एक मनोसामाजिक प्रक्रिया है। उनका मानना है कि इसके द्वारा व्यक्ति को मानसिक तथा सामाजिक रूप से दोनों प्रकार से प्रभावित किया जाता है। यह सामाजिक उद्देश्यों की पूर्ति के लिए सामूहिक अभिरूचियों के विकास का प्रयत्न करता है। साथ ही साथ उनके नेतृत्व एवं सहकारिता की भावना के विकास पर बल देता है। टैकर ने सामाजिक सामूहिक कार्य की सबसे उपर्युक्त परिभाषा दी है। उनके अनुसार सामाजिक सामूहिक सेवाकार्य को एक प्रणाली या पद्धति कहा गया है जिसमें एक विशेष प्रणाली द्वारा योजनाबद्ध व सुव्यवस्थित कार्यक्रम से समूह को सेवा प्रदान की जाती है। इसमें सेवा प्रदान करने के दौरान वैज्ञानिक ज्ञान, समूह बोध सिद्धांत एवं कौशल का समावेश होता है। ट्रेकर ने सामाजिक समूह कार्य को और आगे स्पष्ट करते हुए कहा है कि सामूहिक कार्यकर्ता स्वीकृति, वैयक्तिकरण, कार्यक्रम एवं उद्देश्य निर्धारण में समूह की सहायता, प्रेरणा व निर्देशन ,संगठन तथा साधनों के उपयोग पर आधारित संबंधों द्वारा समूह का मार्गदर्शन करता है। उन्होंने कार्यक्रम नियोजन पर भी बल प्रदान किया है इसमें उन्होंने स्पष्ट किया कि कार्यक्रम का आयोजन समूह सदस्यों की योग्यता एवं क्षमता के अनुसार किया जाना चाहिए। आगे उन्होंने और विस्तृत रूप से कहा कि व्यक्ति एवं समूह के व्यवहार में इस प्रकार सुपरिवर्तन लाया जाना चाहिए जिससे वे प्रजातांत्रिक सिद्धांतों जैसे समानता स्वतंत्रता, सौहार्द्र, व्यक्ति का आदर, व्यक्ति की योग्यता में विश्वास, कर्त्तव्य एवं अधिकार, व्यक्ति की आत्म विकास की क्षमता के विश्वास और इस संबंध में अवसर प्रदान करने में विश्वास किया जा सके। अत: उपर्युक्त तथ्यों से समाज कार्य में समूह कार्य की उपयोगिता एवं इसके एक प्रणाली के रूप में कार्य करने को समझा जा सकता है।

2.3 समूह कार्य के कौशल

कौशलता व्यवसाय की दृष्टि से अत्यन्त महत्वपूर्ण गुण है। सामान्य भाषा में इसके अर्थ को कार्य करने की क्षमता के रूप में जाना जाता है। समूह कार्य प्रक्रिया में यह परम् आवश्यक होता है कि प्रत्येक कार्यकर्ता इस प्रकार की कुशलताओं से युक्त हो।

कुशलता का अर्थ

ट्रेकर ने कुशलता के अर्थ को स्पष्ट करते हुए लिखा कि ‘ कार्यकर्ता की विशेष परिस्थितियों में ज्ञान एवं समय के उपयोग की क्षमता हैं।’

विरजाइना रॉबिन्सन के अनुसार – ‘ विशिष्ट वस्तु में परिवर्तन की प्रक्रिया को इस प्रकार गतिशील व नियंत्रित करने की क्षमता, जिससे वस्तु में होने वाला परिवर्तन उस वस्तु की दक्षता व गुण की उपयोगिता और उच्च कोटि के चिंतन द्वारा प्रभावित होता है।

वेबस्टर शब्द के अनुसार निपुणता का तात्पर्य कार्य के क्रियान्वयन व उसे पूर्ण करने के ज्ञान एवं दक्षता से है। इन परिभाषाओं से स्पष्ट होता है कि व्यक्ति जो भी निपुणता प्राप्त करता है वह उसके ज्ञान व

ज्ञान शांति मैत्री

अनुभव के आधार पर होती है। जब कोई भी व्यक्ति किसी भी कार्य को लगातार लंबे समय तक करता रहता है तो उसमें स्वाभाविक रूप से उस कार्य के प्रति निपुणता आना प्रारंभ हो जाती है।

2.4 संचार कौशल की तकनीक

संचार का मानव जीवन में अत्यंत महत्व होता है। इसी तकनीक के माध्यम से प्रत्येक व्यक्ति अपनी बातों या आवश्यकताओं को दूसरे व्यक्ति तक पहुँचाने का प्रयास करता है। यह एक ऐसा माध्यम है जिसकी सहायता से कार्यकर्ता संपूर्ण प्रक्रिया को सफलतापूर्वक क्रियान्वित करता है। कार्यकर्ता का यह उत्तरदायित्व होता है कि वह अपनी बात, सुझाव, मदद, प्रस्ताव आदि को समूह के समक्ष रखे साथ ही उसे उचित अभिव्यक्ति भी दे। इस कौशल हेतु संचार तकनीक की आवश्यकता होती है। संचार कौशल में समूह के प्रति संवेदना, उत्साह व सहानुभूति प्रकट करने के साथ सकारात्मकता को व्यक्त करने की दक्षता महत्वपूर्ण होती है। संचार कौशल के रूप में तकनीक का प्रयोग भी प्रासंगिक होता है। प्राय: संचार के किसी माध्यम का प्रयोग समूह को बेहतर समझ विकसित करने में मदद करता है। यह एक प्रकार से बात रखने और परस्पर समझने की कला है, जिसकी निपुणता का लाभ समाजकार्य के क्षेत्र में संचार कौशल के माध्यम से किया जा सकता है।

समूह कार्य कौशल एवं तकनीकों को अर्जित करने के तरीके

सर्वप्रथम कार्यकर्ता द्वारा व्यक्तिगत रूप से संपर्क किया जाना चाहिए और अपने अवलोकन क्षमता के आधार पर उस व्यक्ति का खोजना चाहिए जो कि समूह के साथ कार्य करने हेतु सक्षम हो। आपको स्वयं का स्तर जानने के लिए स्वयं की जांच कीजिए और यह ज्ञात कीजिए कि आप किस स्थान पर है। ध्यान रखने वाली बात है यह है कि सभी व्यक्तियों को एक दृष्टिकोण के अनुसार नहीं देखना चाहिए। सभी व्यक्तियों को अलग-अलग नजर से देखना चाहिए, क्योंकि सभी व्यक्तियों की योग्यता भिन्न-भिन्न होती हैं। इस प्रकार के गुणों को आत्मसात करना चाहिए, कार्य करने में लोकतांत्रिक नेतृत्व की शैली में गहराई से आंकलन करना चाहिए और सभी तरह से आपसी समझ को विकसित करना चाहिए। अनुभव के आधार पर ज्ञात होता है कि योग्यता का निर्धारण नेतृत्व के गुणों के आधार पर किया जाना चाहिए। इसके अतिरिक्त निम्नलिखित तथ्यों के माध्यम से भी समूह कार्य में कौशल एवं तकनीकों को अर्जित किया जा सकता हैं।

- अनेक अध्ययनों जैसे- पुस्तकालयों, प्राधिकृत वेबसाइट्स, जर्नल्स, रिपोर्टों इत्यादि से प्रासंगिक सामग्री का अध्ययन कर कुशलता एवं तकनीकों को अर्जित करने में सहायता प्राप्त होती है।
- समूह के साथ किए गए कार्यों की प्रतिदिन की डायरी एवं लिखित दस्तावेज के माध्यम से अपने आप को परिपक्व बनाया जा सकता है।
- स्वयं का मूल्यॉंकन करके।
- आपसी अंत:क्रिया के माध्यम से।

अत: इस प्रकार के ज्ञान से समूह कार्यकर्ता विभिन्न कौशलों एवं तकनीकों को अर्जित कर सकता हैं। समूह कार्य कौशलों को ग्रहण करने में दूसरों की सहायता आवश्यक रूप से करनी चाहिए व समूह कार्य कौशल के संबंध में लगातार आत्मनिरीक्षण व पुनर्परीक्षण करते रहना चाहिए।

2.5 सामाजिक समूह कार्य और संचार

उपर्युक्त तथ्यों के माध्यम से यह कहा जा सकता है कि सामाजिक समूह कार्य में संचार एक महत्वपूर्ण कौशल एवं तकनीक के रूप में माना जाता है। संचार कौशल के माध्यम से कार्यकर्ता समूहगत क्रियाविधि को सकुशल संचालित करने का प्रयास करता है। सामाजिक वार्तालाप और परिवर्तन के लिए प्रत्येक समूह की क्षमतानुसार अनेक माध्यम या संचार तकनीक को विकसित किया जा सकता है। समूह कार्य में संचार को समझने के पूर्व समूह को समझना अति आवश्यक है। सामाजिक समूह ऐसे व्यक्तियों का एक संग्रह या संगठन है, जिनके बीच किसी-न-किसी प्रकार का संबंध पाया जाता है। समूह का अर्थ स्पष्ट करते हुए मेकाइवर एवं पेज ने लिखा है, "समूह से तात्पर्य व्यक्तियों के किसी भी ऐसे समूह से है, जो एक-दूसरे के साथ संबंध स्थापित करते है।" टी.बी.बाटोमोर ने कहा है कि, "सामाजिक समूह व्यक्तियों के उस संकलन को कहते हैं, जिसमें विभिन्न व्यक्तियों के बीच निश्चित संबंध होते है और प्रत्येक व्यक्ति समूह और उसके प्रतीकों के प्रति सचेत होता है।" अन्य शब्दों में, एक सामाजिक समूह का कम-से-कम प्रारंभिक ढाँचा और संगठन (नियमों, संस्कारों सहित) होता है और उसके सदस्यों की चेतना का मनोवैज्ञानिक आधार होता है। इस प्रकार एक परिवार, गांव, राष्ट्र, मजदूर संगठन अथवा राजनीतिक दल एक सामाजिक समूह है।

आर.बी.केटल ने अनुसार है कि समूह व्यक्तियों के उस एकत्रीकरण को कहते हैं, जिसमें प्रत्येक व्यक्ति की कुछ आवश्यकताओं की पूर्ति के लिए सभी का सहयोग लिया जाए। हेरी एम. जॉनसन भी समूह के निर्माण के लिए व्यक्तियों मे आपसी सहयोग को आवश्यक मानते हैं।

मर्टन के अनुसार, समूह के लिए निम्नलिखित बातों का होना आवश्यक है:

1) दो या दो से अधिक व्यक्तियों का होना।
2) इनमें सामाजिक संबंध का पाया जाना। यह संबंध व्यक्तियों में बार-बार अंत: क्रिया से ही बनता है।
3) व्यक्ति को किसी समूह का सदस्य माना जाने के लिए यह आवश्यक है कि वह स्वयं अपने को किसी समूह विशेष का सदस्य समझे, उसके प्रति 'हम की भावना' रखे। साथ ही यह भी आवश्यक है कि समूह के अन्य सदस्य तथा दूसरे समूह भी उसे उस समूह विशेष का सदस्य समझें।

कुछ विद्वानों द्वारा समूह को निम्न प्रकार से परिभाषित किया गया है-

विलियम के अनुसार- "एक सामाजिक समूह व्यक्तियों के उस निश्चित संग्रह को कहते हैं, जो परस्पर संबंधित क्रियाएं करते हैं और जो इस अंत:क्रिया की इकाई के रूप में ही स्वयं या दूसरे के द्वारा मान्य होते हैं।"

सेण्डरसन के अनुसार- "समूह दो या दो से अधिक उन व्यक्तियों का संग्रह है जिनके मध्य मनोवैज्ञानिक अंत:क्रिया का निश्चित प्रतिमान पाया जाता है। वे अपने एक विशिष्ट सामूहिक व्यवहार के कारण अपने सदस्यों तथा सामान्य रूप से दूसरे के द्वारा ही एक वास्तविक वस्तु माने जाते है।"

सैरिफ एवं सैरिफ के अनुसार- "समूह एक सामाजिक इकाई है, जिसका निर्माण ऐसे व्यक्तियों से होता है, जिनके बीच (न्यूनाधिक) निश्चित परिस्थिति एवं भूमिका विषयक संबंध हो तथा व्यक्ति-सदस्यों के आचरण को, कम-से-कम समूह के लिए महत्वपूर्ण मामलों में, नियमित करने के लिए जिसके अपने कुछ मूल्य या आदर्श-नियम हों।"

आर.एम.विलियम के अनुसार – 'एक सामाजिक समूह मनुष्य के उस निश्चित समुदाय को कहते हैं, जो अंत:संबंधित भूमिकाओं को अदा करते हैं और जो अपने या दूसरों के द्वारा अंतःक्रिया की इकाई के रूप में स्वीकृत होते हैं।'

कूले ने अपनी पुस्तक 'सोशल आर्गनाइजेशन' (Social Organization) में सन 1909 में प्राथमिक समूह की अवधारणा को प्रस्तुत किया। कूले ने प्राथमिक समूह को स्पष्ट करते हुए कहा कि जिन सदस्यों में आमने-सामने के संबंध पाए जाते हो अर्थात सदस्य एक-दूसरे के संपर्क में प्रत्यक्ष रूप से आते हों, उस समूह को प्राथमिक समूह के नाम से जाना जाता है। जैसे- मित्र, पड़ोसी, साथी, परिवार के सदस्य तथा सदैव मिलने वाले लोग आते हैं। चार्ल्स कूले ने सर्वप्रथम खेल-कूद के साथियों, परिवार तथा पड़ोस की प्रकृति को स्पष्ट करने हेतु ही 'प्राथमिक समूह' शब्द का प्रयोग किया है। कूले ने प्राथमिक समूहों के संदर्भ में कहा है कि ये समूह प्राथमिक समूह इसलिए है, क्योंकि ये महत्व एवं प्रभाव की दृष्टि से व्यक्ति के जीवन में प्राथमिक है।

प्राथमिक समूह को परिभाषित करते हुए चार्ल्स कूले ने लिखा है कि प्राथमिक समूहों से मेरा तात्पर्य ऐसे समूहों से है जिनकी विशेषता आमने-सामने के घनिष्ठ संबंध और सहयोग है। वे अनेक अर्थों में प्राथमिक है, परंतु मुख्यतः इस बात में कि वे व्यक्ति की सामाजिक प्रकृति और आदर्शों के निर्माण में मौलिक है। घनिष्ठ संबंधों का परिणाम यह होता है कि एक सामान्य संपूर्णता में वैयक्तिकताओं का इस प्रकार एकीकरण हो जाता है, जिससे प्रायः कई प्रयोजनों के लिए व्यक्ति का अहम समूह का सामान्य जीवन और उद्देश्य बन जाता है। इस संपूर्णता के वर्णन के लिए अति सरल विधि 'हम' कहना हैं, क्योंकि यह अपने में उस प्रकार की सहानुभूति और पारस्परिक एकात्मीकरण (Mutual Identification) को समाविष्ट करता है, जिसके लिए 'हम' ही स्वाभाविक अभिव्यक्ति है। प्राथमिक समूहों को परिभाषित करते हुए, जिसबर्ट ने कहा कि *प्राथमिक समूह व्यक्तिगत संबंधों पर आधारित होता है, जिसमें सदस्य तुरंत एक-दूसरे के साथ व्यवहार करते हैं।* अन्य समाजशास्त्री किम्बाल यंग ने प्राथमिक समूहों के संदर्भ में कहा है कि प्राथमिक समूह में परस्पर घनिष्ठ आमने-सामने के संपर्क होते हैं और सभी व्यक्ति समरूप कार्य करते हैं। ये ऐसे केंद्र-बिंदु हैं जहां व्यक्ति का व्यक्तित्व विकसित होता है। इन सभी परिभाषाओं के माध्यम से यह कहा जा सकता है कि कूले ने परिवार, क्रीड़ा समूह व पड़ोस को प्राथमिक समूह माना है, जबकि मैकाइवर व पेज ने परिवार, क्रीड़ा-समूह, मित्र-मंडली, गपशप समूह, साझेदारी, स्थानीय भाईचारा, अध्ययन समूह, गैंग, जनजाति परिषद् आदि को इस श्रेणी में रखा है।

समूह संचार कई सामाजिक परिवेशों में पाया जाता है। जैसे- कक्षा, रंगमंच, कमेटी हॉल, बैठक इत्यादि। अनेक विद्वानों द्वारा समूह संचार में सदस्यों की संख्या को 20 माना गया है। जबकि कुछ विद्वान संख्या के आधार पर नहीं वरन गुणात्मक आधार पर समूह संचार को मानते है। गुणों के आधार पर यदि वर्गीकरण कहा जाए तो यह कहा जा सकता है कि समूह संचार और अंतरवैयक्तिक संचार के कुछ गुण आपस में मिलते है। समूह संचार कितना बेहतर होगा, फीडबैक कितना अधिक मिलेगा, यह समूह के प्रधान और उसके सदस्यों के परस्पर सम्बन्धों पर निर्भर करता है।

विशेषताएं :

समूह संचार कि विशेषताओं को निम्न प्रकार से समझा जा सकता है :

- समूह संचार में जो प्रापक होता है उसकी संख्या निश्चित मानी जाती है। सभी अपनी इच्छा व सामर्थ्य के अनुसार सहयोग करते हैं,
- समूह संचार में सदस्यों के बीच समान रूप से विचारों, भावनाओं का आदान-प्रदान होता है,
- संचारक और प्रापक के बीच निकटता होती है,
- विचार-विमर्श के माध्यम से समस्याओं का समाधान किया जाता है,
- समूह संचारक का उद्देश्य सदस्यों के मध्य चेतना का विकास करना होता है। इस आधार पर यह कहा जा सकता है कि प्रापक को चेतना विकसित कर दायित्व बोध कराना होता है,
- समय-समय पर फीडबैक सदस्यों से प्राप्त होता रहता है, और
- समस्या के मूल उद्देश्यों के अनुरूप संदेश सम्प्रेषित किया जाता है।

समूह संचार में श्रोता एक व्यक्ति न होकर एकत्रित व्यक्ति समूह होता है। स्रोत द्वारा प्रेषित सूचना या संदेश इसी समूह श्रोता के लिए प्रेषित किया जाता है जिसका हित या उद्देश्य समान होता है और जो संदेश प्राप्ति के लिए ही एक स्थान पर एकत्रित होता है। सभा, गोष्ठी, सम्मेलन, नाटक, वाद-विवाद, संगीत-नृत्य, समूह संचार के ही रूप हैं। निम्न बिंदुओं के माध्यम से सामाजिक समूह कार्य और संचार के महत्व को और अधिक स्पष्ट रूप से समझा सकता है।

- किसी समूह की छवि निर्माण कीमत, योगदान की Trick अथवा Branding कर सकता है।
- समूह की पारस्परिकता के आधार के रूप में संचार और इसके माध्यम अपनी भूमिका निभा सकते है।
- संपर्क, पुर्नसंयोजन, नई पहल, सूचना का आदान-प्रदान, सहभागी उत्थान करने में संचार माध्यम उपयोगी हो सकता है।
- एक और अभिव्यक्ति का मंच जो कि किसी समुदाय की वकालत तथा अपील करने में अन्य सभी प्रयासों से तीव्र व उत्कृष्ट हो सकता है। ऐसा कार्य भी संचार माध्यम ही कर सकते हैं।
- समूह को एकत्रित किए बिना भी समूह को उसकी मूल भावना और उद्देश्यों से जोड़ने में क्रियान्वयन में विकसित परिदृश्य की स्थापना कर सकते है।
- संचार तथा इसके माध्यम सूक्ष्य विसंगतियों को सीमित कर एक पर्याप्त रचनात्मक/सर्जनात्मक पथ को निर्मित करता है।
- यह समूह में आभासी विश्वास है क्योंकि इसकी उपलब्धता समय, सुविधा तथा अन्य तरीकों से अधिकाधिक दी जा सकती है।
- संचार माध्यम मानव संसाधन को भी कम और व्यवस्थित रूप से विकसित करने में अपना योगदान देते है।

ज्ञान शांति मैत्री

- माध्यमों आदि के स्वीकार या खारिज करने के अलावा कई मानदण्डों से सामाजिक कार्य को रूप देने का कार्य हो सकता है। वहीं इस दृष्टि से शोध या अनुसंधान करने में भी मदद की जा सकती है।
- संचार माध्यम समूह के लिए एजेंडा सेटिंग (Agenda setting) का भी कार्य करने में सक्षम हैं।
- कठिन लक्ष्यों के प्रति सहज कार्य योजना और क्रियान्वयन का प्रारूप उपलब्ध करना।
- समान लक्ष्यों के अनुसार सामाजिक विपणन (Social marking) को स्थानीय, क्षेत्रीय, राष्ट्रीय व अंतरराष्ट्रीय स्तर पर उपयोगी बनाने के लिए संचार माध्यम अपनी भूमिका निर्वहन कर सकते है।
- बड़े फैसले और पहल को परिचित और उनके अन्य प्रश्नों के समाधान हेतु तथा परिचालन के लिए संचार माध्यम उपयोगी है।
- प्रगति कार्ययोजना को लागू करने के साथ अनके विसंगतियों को प्रबंधन के साथ आगे बढ़ने का मार्ग है सचांर माध्यमों का उपयोग।
- संचार संगठनात्मक व्यवस्था के लिए अनेक जनमाध्यम व उनके उपकरणों का प्रयोग, जनसंपर्क आदि से समझने व यकीन दिलाने में एक बेहतव स्पष्ट रूपरेखा तैयार करता है।

समूह संचार हेतु आवश्यक तत्व

संचार को समूह में प्रेषित करने हेतु कुछ आवश्यक तत्वों का उपयोग करना पडता है जिसमें समूह कार्यकर्ता यह बखूबी प्रकार से निभाता है। एक अच्छे कार्यकर्ता की क्षमता का आँकलन उसके बौद्धिक स्तर के साथ उसकी कार्यशैली के आधार पर भी करना चाहिए। समूह में प्रभावी संचार के लिए आवश्यक है कि कार्यकर्ता को समूह की योग्यता एवं क्षमता के अनुसार समूह से बात करना चाहिए। कार्यकर्ता को यह आँकलन कर लेना चाहिए कि किस प्रकार एवं किस माध्यम से समूह तक वह अपनी बातों को पँहुचा सकता है जो कि समूह के लिए प्रभावी साबित होगी। समूह तक अपनी बातों को पहुंचाने हेतु कार्यकर्ता जनसंचार के लोक माध्यम- लोकगीत, लोक नृत्य, नौटंकी, कठपुतली, सामूहिक गान इत्यादि एवं मौखिक माध्यम जैसे - व्यक्तिगत संपर्क, सार्वजनिक सभाएं इत्यादि माध्यमों का वह प्रयोग कर सकता है। इन संचारों के अतिरिक्त कार्यकर्ता को प्रत्येक स्तर पर परिवेश के साथ संपर्क स्थापित करना चाहिए। समूह की भावनाओं का समझते हुए उनसे बात करनी चाहिए।

2.6 सारांश :

सामाजिक समूह कार्य एक ऐसी प्रणाली है जो कि वैज्ञानिक पद्धति के माध्यम से समूह की समस्याओं का समाधान करती है और समूह की आवश्यकता की पूर्ति करती हैं। बेहतर संचार के माध्यम से कार्यकर्ताओं इस प्रणाली का उपयोग कुछ महत्वपूर्ण निपुणताओं एवं तकनीकों के माध्यम से करने का प्रयास किया जाता हैं। संचार समूह कार्य में एक प्रभावी प्रक्रिया है जिसके माध्यम से समूह कार्य के प्रत्येक चरण को आसानी से पूर्ण किया जा सकता है। समूह कार्य में संचारकर्ता द्वारा कौशल पूर्ण तकनीक का प्रयोग किया जाता है। समूह में आत्मविश्वास की भावना जाग्रत करने हेतु भी संचार अत्यंत महत्वपूर्ण होता है। अत: संचार के उचित माध्यम से कार्यकर्ता समूह के लक्ष्य को आसानी से प्राप्त कर सकता है।

2.7 बोध प्रश्न

1. समूह कार्य से आप क्या समझते है ? स्पष्ट कीजिए।
2. समूह कार्य प्रक्रिया में प्रयुक्त कि जाने वाली संचार कौशल तकनीक को समझाइए।
3. सामाजिक समूह कार्य में संचार के महत्व को स्पष्ट कीजिए।
4. समूह संचार हेतु आवश्यक तत्व को बताइएं।
5. संचार संबंधी निपुणता से आपका क्या तात्पर्य हैं ?

2.8 संदर्भ एवं उपयोगी पुस्तकें

1. ट्रेकर, एच बी (1955).*सोशल ग्रुप वर्क प्रिंसिपल्स एंड प्रैक्टिस*, न्यूयार्क: व्हाइटसाइड
2. https://hi.wikipedia.org/wiki/ **retrived on 03/08/2016**
3. मिश्रा, प्रयागदीन (2015). *सामाजिक समूह कार्य*.लखनऊ : हिंदी संस्थान।
4. कोयले, एल. जी. (1947). *ग्रुप इक्सपीरियन्स एंड डेमोक्रेटिक वैल्यूम*. न्यूयार्क : दि वूमेन्स प्रेस
5. प्रसाद मणिशंकर, सत्य प्रकाश, कुमार अरूण,कुमार संजय,सैफ मो.खान एवं सिंह अभव कुमार (2103). *यूजीसी नेट/जेआरएफ/स्लेट समाज कार्य*.दिल्ली: अरिहंत पब्लिकेशन (इंडिया) लिमिटेड।
6. तेज, संगीता. पाण्डेय तेजस्कर (2010). *समाज कार्य*. लखनऊ: जुबली एच फाउंडेशन।
7. इंदिरा गांधी राष्ट्रीय मुक्त विशवविद्यालय (2009).*सामाजिक समूह कार्य*.दिल्ली: समाज कार्य विद्यापीठ।

ज्ञान शांति मैत्री

इकाई -3 सामूदायिक संगठन और संचार

इकाई की रूपरेखा

3.0 उद्देश्य
3.1 प्रस्तावना
3.2 सामुदायिक संगठन: अर्थ तथा परिभाषाएं
3.3 सामुदाय और संचार
3.4 समुदाय और जनसंचार
3.5 जनसंचार के विविध माध्यम
3.6 सारांश
3.7 बोध प्रश्न
3.8 संदर्भ एवं उपयोगी ग्रंथ

3 .0 उद्देश्य

इस इकाई का अध्ययन करने के पश्चात आप:-

9. सामूदयिक संगठन की अवधारणा को स्पष्ट कर सकेंगे।
10. सामूदायिक संगठन में संचार के विभिन्न माध्यमों सेभलि-भांति परिचित हो सकेंगे।
11. सामूदायिक संगठन में जनसंचार से अवगत हो सकेंगे ।

a. **प्रस्तावना**

सामूदायिक संगठन को समाज कार्य की प्राथमिक प्रणाली के रूप में जाना जाता है । सामूदायिक संगठन की प्रक्रिया में कार्यकर्ता विभिन्न तकनीकों एवं कौशलों के माध्यम से सामूदाय में उत्पन्न होने वाली समस्या के निराकरण हेतू प्रयास करता है । हम जानते है कि मुनष्य एक सामाजिक प्राणी है उसकी इसी सामाजिकता के आधार पर वह किसी न किसी समूह का सदस्य आवश्यक रूप से होता है । समुदाय में आवश्यक तत्व 'हम की भावना' होती है जोकि किसी न किसी निश्चित भौगोलिक क्षेत्र में निवास करता है । समूदाय संगठन में संचार को एक आवश्यक कौशल के रूप में माना जाता है जिसके माध्यम से जनसमूदाय तक किसी भी तथ्य को आसानी से पहुंचाया जा सकता है । संचार वर्तमान समय में एक सशक्त माध्यम माना जाता है। संचार का एक सशक्त माध्यम जनसंचार है जिसने पूंजीवादी समाज को जन्म दिया है। वैशविक परिदृष्य में समान/वस्तुओं की खरीदी – विक्री हेतू जनसंचार को विशेष महत्व प्रगट होता है । जनसंचार का संबंध आधुनिक युग से है। पूंजीवाद के उदय के उपरांत विस्तृत बाजारों का उदय हुआ। अपना माल ज्यादा से ज्यादा लोगों तक पहुंचाने और उन्हें खरीदने के लिए यातायात और संचार के साधन पर्याप्त नहीं हो रहे थे। दुनिया के कई देशों में लोकतांत्रिक शासन व्यवस्था कायम होने से लोगों के विचारों को अपने पक्ष में मोड़ने की जरूरत के अनुसार ही जनसंचार के माध्यमों का विकास अति तीव्र गति से हुआ। मीडिया के माध्यमों से द्रुत गति में अपने संदेश को यथाशीघ्र भेजने की व्यवस्था कायम हुई। वर्तमान इकाई के माध्यम से विद्यार्थियों

को सामूदाय में प्रयुक्त किए जाने वाले जनसंचार के माध्यमों के बारें में अवगत कराया गया है जिससे कि जन समूदाय तक अपनी बातों को आसानी से पहुंचाया जा सके।

3.2 सामुदायिक संगठन: अर्थ तथा परिभाषाएं

शाब्दिक दृष्टि से समुदाय के अर्थ पर विचार किया जाए तो हम देखते है कि अंग्रेजी का 'Community' (समुदाय) शब्द लैटिन के दो शब्दों - 'Com' तथा 'munis' से मिलकर बना है। Com का अर्थ 'together' अर्थात 'एक साथ' से और 'munis' का अर्थ 'Serving' अर्थात 'सेवा करने' से है। इन शब्दों के आधार पर समुदाय का तात्पर्य साथ-साथ मिलकर सेवा करने से है। दूसरे शब्दों में कहे तो समुदाय का अर्थ व्यक्तियों के ऐसे समूह से है जो निश्चित भू-भाग पर साथ-साथ रहते है और किसी एक उद्देश्य के लिए नहीं बल्कि सामान्य उद्देश्यों के लिए इनमें रहते हैं। उनका सम्पूर्ण जीवन सामान्यत: यहीं व्यतीत होता है। सामुदायिक संगठन प्रक्रिया का उपयोग समुदाय की आवश्कताओं को ज्ञात करने एवं समस्या के निराकरण हेतू कार्यकर्ता के द्वारा किया जाता है। व्यावसायिक कार्यकर्ता विभिन्न तकनीकों एवं कौशलों के माध्यम से समुदाय की सहायता करता है। सामुदायिक संगठन एक परिवर्तनशील अवधारणा है, इसी कारण इसकी सर्वमान्य परिभाषा देना संभव नही है। किंतु विभिन्न विद्वानों के द्वारा सामुदायिक संगठन को निम्न प्रकार से परिभाषित करने का प्रयास किया है–

- **फ्रीडलैण्डर-** ''सामुदायिक संगठन किसी भौगिलिक क्षेत्र में समाज कल्याण आवश्यकताओं तथा सामुदायिक संसाधनों के बीच उन्तरोन्तर अधिक प्रभावशाली समायोजन स्थापित करने वाली समाज कार्य प्रक्रिया है।''
- **डनहम-** ''समाज कल्याण के लिए सामुदायिक संगठन का अर्थ एक भौगोलिक क्षेत्र या कार्यक्षेत्र के समाज कल्याण संसाधनों में समायोजन लाने तथा बनाये रखने की प्रक्रिया से है।''
- **पैटिट-** "सामुदायिक संगठन एक समूह के लोगों की उनकी सामान्य आवश्यकताओं को पहचानने तथा इन आवश्यकताओं की पूर्ति में सहायता करने के रूप में उत्तम प्रकार से परिभाषित किया जा सकता है।"
- **लेन-** "सामुदायिक संगठन का सामान्य उद्देश्य समाज कल्याण आवश्यकताओं और समाज कल्याण साधनों के मध्य प्रगतिशील एवं अधिक प्रभावशाली समायोजन लाना और उसे बनाए रखना है। इसका तात्पर्य है कि सामुदायिक संगठन का संबंध 1. आवश्यकताओं की खोज और परिभाषा, 2. सामाजिक आवश्यकताओं और अयोग्यताओं की जहां तक संभव हो रोकथाम व समाप्ति, 3. परिवर्तित होती आवश्यकताओं को अच्छे ढंग से पूरा करने के लिए साधनों से समुचित उपयोग से है।"
- **रॉस-** ''सामुदायिक संगठन ऐसी प्रक्रिया है जिसके द्वारा कई लोग अपनी साक्षी आवश्यकताओं और उद्देश्यों की पहचान करते है, इन आवश्यककर्ताओं तथा उद्देश्यों को क्रम में रखते है। इन आवश्यकताओं तथा उद्देश्यों के लिए विश्वास एवं कार्य की इच्छा का विकास करते है, इनसे

निपटने के लिए संसाधनो का पता लगाते है, उनके एवं सहयोगात्मक प्रवृत्तियों प्रवृत्तियों एवं क्रिया व्यवहारों का विकास एवं विस्तार करते है।''

- **सैण्डरसन एण्ड पोल्सन-** "सामुदायिक संगठन का उद्देश्य समूहों तथा व्यक्तियों के मध्य ऐसे सम्बन्ध विकसित करना है जिससे उन्हें ऐसी सुविधाओं तथा समस्याओं का निर्माण करने तथा उन्हें बनाये रखने के लिए एक साथ कार्य करने में सहायता मिलेगी तथा जिसके माध्यम से समुदाय के सभी सदस्यों के समान कलयाण में अपने उच्चतम मूल्यों का अनुभव कर सके।"

- **लिन्डमैन-** वर्ष 1921 में प्रकाशित लिन्डेमैन की पुस्तक, उत्तरी अमेरिका की पहली ऐसी पुस्तक है जिसमें सर्वप्रथम सामुदायिक संगठन विषय को प्रस्तुत किया गया। लिन्डेमैन ने सामुदायिक संगठन को सामुदायिक संगठन के उन चरणों के रूप में परिभाषित किया जिनसे समुदाय की ओर से अपने व्यवहारों व मामलों को लोकतांत्रिक विधि से नियंत्रित करने तथा पारस्परिक मान्यता प्राप्त अंतर्संबंधों के उपायों द्वारा इनके विशेषज्ञों, संगठनों, एजेंसियों तथा संख्याओं की ओर से उच्चतम सेवाएं संकलित करने का चेतनापूर्ण प्रयास किया जाता है।

- **मरे जी. रोस-** सामुदायिक संगठन पर मरे जी रोस का लेखन संभवत: विशिष्ट कोटि का था। उनके लेखन का अमेरिका में सामुदायिक संगठन के अभ्यास को लोकप्रिय बनाने में अभूतपूर्व योगदान रहा। उनका मानना था कि सामुदायिक संगठन एक ऐसी प्रक्रिया है, जिसके द्वारा समुदाय अपनी आवश्यकताओं अथवा उद्देश्यों के लिए काम करने का विश्वास अर्जित करता है और इन आवश्यकताओं और उद्देश्यों को पूरा करने के लिए संसाधन (बाहरी और आंतरिक) व साधन तलाशता है, उनके बारे में कार्यवाही करता है, और साथ ही समुदाय में सहयोगात्मक व सहभागी अभिवृतियों तथा व्यवहारों का विस्तार व विकास करता है। उन्होंने सामुदायिक संगठन के तीन प्रमुख दृष्टिकोणों की पहचान की है-

  A. **विनिर्दिष्ट विषयवस्तु दृष्टिकोण:** इसके द्वारा कोई कार्यकर्त्ता अथवा संगठन किसी समस्या अथवा समस्याओं के समुच्च को पहचानकर उनका समाधान प्रस्तुत करने के लिए किसी कार्यक्रम का नियोजन करता है।

  B. **सामान्य दृष्टिकोण:** इसके द्वारा कोई समूह, संगठन अथवा परिषद विशिष्ट क्षेत्र में सेवाओं के समन्वित तथा सुनियोजित विकास का प्रयत्न करता है।

  C. **प्रक्रिया दृष्टिकोण**: इसका उद्देश्य विषयवस्तु (सुविधाएं या सेवाए) नहीं, बल्कि एक प्रक्रिया का निर्वाह करना होता है जिसमें समुदाय से संबन्धित लोगों द्वारा अपनी आवश्यकताओं तथा समस्याओं को पहचानने तथा उसके बारे में कार्यवाही करना सम्मिलित होता है।

- **हार्पर-** हार्पर (1959) के अनुसार सामुदायिक संगठन समाज कल्याण के निरन्तर अधिकाधिक संसाधनों और सामुदायिक आवश्यकताओं के बीच प्रभावी समायोजन बनाने का एक प्रयास होता है। यह परिभाषा इन मूल बिन्दुओं से संबन्धित है:

  A. आवश्यकता की खोज और निर्धारण

  B. सामुदायिक आवश्यकताओं तथा अक्षमताओं का उन्मूलन व रोकथाम

C. संसाधनों तथा आवश्यकताओं का सम्बन्ध और
D. बदलती हुई आवश्यकताओं का बेहतर सामना करने के उद्देश्य से लगातार पुन: समायोजन।

उपरोक्त विद्वानों द्वारा प्रस्तुत की गयी सामुदायिक संगठन की परिभाषाओं से स्पष्ट होता है कि यह सामुदायिक सदस्यों में अपनी समस्याओं एवं आवश्यकताओं को उपलब्ध साधनों के आधार पर समस्या समाधान हेतु प्रयुक्त कि जाने वाली एक प्रणाली है।

सामुदाय के संदर्भ में निम्न सर्वमान्य तत्वों को देखा जा सकता है :

- यह एक निश्चित भू-भाग में रहने वाले सदस्यों का समूह है।
- यह प्रक्रिया कार्यकर्ता के ज्ञान तथा कौशल पर आधारित है।
- यह एक प्रक्रिया है जिसके द्वारा समाज पहले से अधिक समरात्मक व रचनात्मक रूप से कार्य करने की क्षमता विकसित करता है। कर्ता इस प्रक्रिया को जान-बूझकर उपयोग में लाता है।
- इस प्रक्रिया के द्वारा समुदाय अपनी मूलभूत आवश्यकताओं को जानने तथा उनकी पूर्ति की महत्ता को पहचानने में सफल होता है।
- समुदाय स्वयं की आवश्यकताओं की पूर्ति तथा समस्या समाधान का प्रयास करता है। इस स्थिति में कर्ता का पहला कार्य समुदाय की आवश्यकताओं पर ध्यान आकृष्ट करने में सहायता करना होता है जिनसे उनका सम्पूर्ण जीवन प्रभावित होता है।
- कार्यकर्ता का प्रयास होता है कि वह समुदाय में उत्पन्न समस्याओं के निराकरण हेतु प्रयास करता है।
- कर्ता समुदाय को उन संसाधनों की खोज करने में तथा उन संस्थाओं का पता लगाने में सहायता करता है जिनसे आवश्यकर्ताओं की पूर्ति तथा समस्याओं का समाधान संभव है।

3.3 समुदाय और संचार

सामुदायिक संगठन की प्रक्रिया में संचार का उपयोग समुदाय के सदस्यों को सक्षम(Capable) बनाने के, सदस्यों को जागरुक बनाने एवं सहभागिता के लिए मुख्य रूप से किया जाता है। समुदाय को जानने और उसे बताने के लिए अन्य समुहों से विशिष्ट संचार करने के लिए समुदाय के अनेक संरचनात्मक और संगठनात्मक प्रारूपों का विकास किया जाता है। साथ-साथ में प्रबंधन हेतु संचार जिसमें भाषा ज्ञान व रुचि के स्तर पर उपयोगिता व समझ के स्तर पर स्थानीयता से लेकर वैश्विक स्तर का प्रभाव ज्ञात किया जाता है। निम्न बिंदुओं के माध्यम से समुदाय में संचार को निम्न प्रकास से समझा जा सकता है –

- समुदाय में नेतृत्व एवं कार्यकुशलता हेतु संचार का अधिक महत्व होता है।

ज्ञान शांति मैत्री

- जनमत निर्माण और उसे प्राप्त करने हेतु सामुदायिक स्तर पर संचार द्वारा अधिकाधिक प्रयोग किए जा सकते है।
- समुदाय की आवश्यकताओं के आधार पर जीवन व संभावी उद्धेश्यों के निहितार्थ सशक्त संचार ही कर सकता है।
- सामुदायिक स्तर पर समान व पारदर्शी व्यवहारों के लिए तथा छोटे-छोटे समुहों पर निर्धारित संचार प्रणाली और प्रबंधन का सूत्रधार।
- प्रसार और आग्रह के लिए संचार।
- योजना के अनुशीलन व अनुकरण के लिए संचार।
- मूल्यांकन व निगरानी के लिए संचार व्यवस्था तथा प्रणाली का प्रयोग।
- नियमित आदान-प्रदान की सूचनाओं की साझा संस्कृति तैयार करने के लिए संचार प्रक्रिया और उपकरणों का प्रयोग।
- संदर्भ आधारित व केंद्रित विषयों तथा उपक्रमों के लिए जनमाध्यामों का प्रयोग।
- साक्षात्कार, फोकस ग्रुप के लिए विश्लेषण व सर्वेक्षण इत्यादि हेतु।
- शासकीय और गैर-शासकीय संगठनों के बीच मध्यस्थता व कुशल प्रबंधन हेतु संचार का प्रयोग संभव।
- विशिष्ट उपबंधों व सहभागिता के परिणामों के प्राप्त करने के लिए संचार का उपयोग।
- सहभागिता के लिए विभिन्न जनमाध्यम जैसे – पत्र-पत्रिका, बुकलेट, पम्पलैट और इलेक्ट्रानिक माध्यमों से संदेश , आडियों –वीडियों व नव जनमाध्यमों के प्रयोग करना।
- घटना विशेष व समुदाय के आपसी सहसबंध पर कुशल, क्रियात्मक संभव।
- मीडिया को स्त्रोत के रूप में प्रयोग करना।
- वैधानिक और प्रमाणिकता के लिए संचार माध्यमों का प्रयोग।

इन उपर्युक्त आधारों पर संचार को समझा जा सकता है कि यह किस प्रकार से जन माध्यम के बीच कार्य करता है। संचार के माध्यम में जनसंचार एक अति आवश्यक माध्यम है जिसने संपूर्ण जन समुदाय को वैश्विक स्तर पर प्रभावित किया है।

3.4 जनसंचार (Mass Communication):

जन संचार वर्तमान समय में अत्यंत ही प्रभावी संचार माध्यम है। जनसंचार शब्द दो शब्दों से मिलकर बना है जन और संचार। जन का अर्थ जनता अर्थात् भीड़। ऑक्सफोर्ड डिक्शनरी के अनुसार, जन का अर्थ पूर्ण रूप से व्यक्तिवादिता का अंत है। गिन्सवर्ग के अनुसार, जनता असंगठित और अनाकार व्यक्तियों का समूह है जिसके सदस्य सामान्य इच्छाओं एवं मतों के आधार पर एक दूसरे से बंधे रहते हैं, परंतु इसकी संख्या इतनी

ज्ञान शांति मैत्री

बड़ी होती है कि वे एक-दूसरे के साथ प्रत्यक्ष रूप से व्यक्तिगत सम्बन्ध बनाये नहीं रख सकते हैं। समूह संचार को वृहद रूप में जनसंचार कहा जाता है। जनसंचार शब्द का सर्वप्रथम प्रयोग 19 वीं सदी के तीसरे दशक के अंतिम दौर में संदेश सम्प्रेषण के लिए किया गया। संचार क्रांति के युग में जैसे-जैसे समाचार पत्र, रेडियो, टेलीविजन, केबल, इंटरनेट, वेब पोर्टल्स इत्यादि का प्रयोग बढ़ता गया, वैसे-वैसे जनसंचार के क्षेत्र का विस्तार होता गया। जनसंचार को अंग्रेजी भाषा में Mass Communication कहते हैं, जिसका अभिप्राय बिखरी हुई जनता तक संचार माध्यमों की मदद से सूचना को पहुंचाना है। उदाहरण रूप में जनसंचार के निम्न प्रकार है –

- समाचार पत्र
- टेलीविजन
- रेडियो
- सिनेमा
- केबल
- इंटरनेट
- वेब पोर्टल्स इत्यादि

संचार विशेषज्ञों ने जनसंचार की निम्नलिखित रूप से परिभाषित करने का प्रयास किया है :

- **जोसेफ डिविटो** के अनुसार- जनसंचार बहुत से व्यक्तियों में एक मशीन के माध्यम से सूचनाओं, विचारों और दृष्टिकोणों को रूपांतरित करने की प्रक्रिया है।
- **कार्नर** के अनुसार- जनसंचार संदेश के बड़े पैमाने पर उत्पादन तथा वृहद स्तर पर विषमवर्गीय जनसमूहों में द्रुतगामी वितरण करने की प्रक्रिया है। इस प्रक्रिया में जिन उपकरणों अथवा तकनीक का उपयोग किया जाता है उन्हें जनसंचार माध्यम कहते हैं।
- **बार्कर** के अनुसार- जनसंचार श्रोताओं के लिए अपेक्षाकृत कम खर्च में पुनर्उत्पादन तथा वितरण के विभिन्न साधनों का इस्तेमाल करके किसी संदेश को व्यापक लोगों तक, दूर-दूर तक फैले हुए श्रोताओं तक रेडियो, टेलीविजन, समाचार पत्र जैसे किसी चैनल द्वारा पहुंचाया जाता है।
- **लेक्सीकॉन यूनिवर्सल इनसाइक्लोपीडिया** के अनुसार- कोई भी संचार, जो लोगों के महत्वपूर्ण रूप से व्यापक समूह तक पहुंचता हो, जनसंचार है।
- **कुप्पूस्वामी** के अनुसार- जनसंचार तकनीकी आधार पर विशाल अथवा व्यापक रूप से लोगों तक सूचना के संग्रह एवं प्रेषण पर आधारित प्रक्रिया है। आधुनिक समाज में जनसंचार का कार्य सूचना प्रेषण, विश्लेषण, ज्ञान एवं मूल्यों का प्रसार तथा मनोरंजन करना है।
- **जॉर्ज ए.मिलर** के अनुसार- जनसंचार का अर्थ सूचना को एक स्थान से दूसरे स्थान पहुंचाना है।
- **डी.एस. मेहता** के अनुसार- जनसंचार का अर्थ जनसंचार माध्यमों जैसे- रेडियो, टेलीविजन, प्रेस और चलचित्र द्वारा सूचना, विचार और मनोरंजन का प्रचार-प्रसार करना है।
- **रिवर्स पिटरसन और जॉनसन** के अनुसार-

- जनसंचार प्रक्रिया एक तरफ से होने वाली प्रक्रिया है।
- इस प्रक्रिया के अंतर्गत संदेश का प्रसार अधिक होता है।
- सामाजिक परिवेश जनसंचार को प्रभावित करता है तथा जनसंचार का असर सामाजिक परिवेश पर पड़ता है।
- जनसंचार माध्यम से जो सूचना आमजन तक पहुंचाई जाती है उसके लिए यह उपयुक्त समय का चयन करता है।
- जनसंचार आमजन तक सुचना पहुचाने का एक सशक्त माध्यम है।

- **डेनिस मैकवेल** के अनुसार-

  - जनसंचार के लिए औपचारिक तथा व्यस्थित संगठन जरूरी है, क्योंकि संदेश को किसी माध्यम द्वारा विशाल जनसमूह तक पहुंचाना होता है।
  - जनसंचार विशाल, अपरिचित जनसमुह के लिए किया जाता है।
  - जनसंचार माध्यम सार्वजनिक होते हैं। इसमें भाषा व वर्ग के लिए कोई भेद नहीं होता है।
  - श्रोताओं की रचना विजातीय होती है तथा वे विभिन्न संस्कृति, वर्ग, भाषा से सम्बन्धित होते हैं।
  - जनसंचार द्वारा दूर-दराज के क्षेत्रों में एक ही समय पर सम्पर्क संभव है।
  - इसमें संदेश का यांत्रिक रूप में बहुल संख्या में प्रस्तुतिकरण या सम्प्रेषण होता है।

उपर्युक्त परिभाषाओं के आधार पर यह कहा जा सकता है कि जनसंचार यंत्र संचालित संचार है जिसके माध्यम से किसी भी संदेश को शीघ्रता के साथ पहुंचाया जा सकता है।

समुदाय में जनसंचार की विशेषताएं :

ज्ञान शांति मैत्री

जनसंचार में संदेश को प्रषित करने के लिए माध्यमों का प्रमुख महत्व होता है। कौन सा माध्यम जनसंचार हेतू उपयुक्त क्षेत्र के लिए प्रभावी होगा यह चयन एक महत्वपूर्ण प्रक्रिया है। जनसंचार माध्यमों से सूचनाओं को प्रेषित करने की निम्न विशेषताओं को देखा जा सकता है।

- जनसंचार के माध्यमों के द्वारा अलग-अलग स्थान में रहने वाले व्यक्तियों को एक साथ सूचना पहुंचाई जा सकती है।
- विस्तृत क्षेत्र में रहने वाले व्यक्तियों से संपर्क स्थापित किया जा सकता है।
- सभी व्यक्तियों के लिए संदेश समान रूप से खुला होता है।
- संचार माध्यम की मदद से संदेश का सम्प्रेषण किया जाता है।
- किसी भी सम्प्रेषण हेतू एक औपचारिक संगठन होता है।
- सार्वजनिक संचार माध्यम का उपयोग अधिक किया जाता है।

3.5 जनसंचार के विविध माध्यम

जनसंचार हेतू विविध प्रकार के माध्यमों को देखा जा सकता है जिनकी अपनी-अपनी विशिष्टताएं होती है। इन सभी जन माध्यमों का उपयोग समुदाय को देश-विदेश की जानकारी प्रदान कराना है जिससे की समस्त जन को आवश्यक जानकारी प्राप्त हो सके। साथ- साथ में कुछ माध्यमों का उपयोग जनता के मनोरंजन के लिए भी किया जाता है। इन जन माध्यमों को निम्न प्रकार से देखा जा सकता है। कुछ जन माध्यम आधुनिक है एवं कुछ लोकमाध्यम है।

- मुद्रित माध्यम- समाचारपत्र, पत्रिकाएं, पुस्तक व विज्ञापन आदि।
- घोषित शब्द- आकाशवाणी।
- दृश्य श्रव्य माध्यम- दूरदर्शन, वीडियो और फिल्म।
- लोक माध्यम- लोकगीत, लोक नृत्य, नौटंकी, कठपुतली, सामूहिक गान आदि।
- मौखिक- व्यक्तिगत संपर्क, सार्वजनिक सभाएं आदि।
- क्षेत्रीय प्रसार- फिल्म, सिनेमा, स्लाइडें, न्योन साइन, मुद्रित माध्यम आदि।
  कुछ सामुदाय आधारित जनसंचार के माध्यम को विस्तृत प्रकार से समझा जा सकता है।

❖ **दूरदर्शन (Doordarshan)**

दूरदर्शन का सर्वप्रथम पहला प्रसारण 15 सितम्बर, 1959 को आकाशवाणी भवन, नई दिल्ली में किया गया। वर्ष 1965 में समाचार बुलेटिन का नियमित प्रसारण शुरु हुआ। सात वर्ष बाद मुम्बई में दूसरे टेलीविजन केन्द्र में प्रसारण सेवा शुरु हुई। रंगीन प्रसारण की शुरुआत वर्ष 1982 में नई दिल्ली में आयोजित एशियाई खेलों के दौरान हुई। इस समय दूरदर्शन के 25 चैनलों से कार्यक्रमदिखाए जा रहे हैं। डी.डी., नेशनल डी.डी. न्यूज, डी.डी. स्पोर्ट्स, डी.डी. भारती, डी.डी. ज्ञानदर्शन आदि।डी.डी. नेशलन के माध्यम से जो कार्यक्रम दिखाएं जाते है वे मुख्य रूप से राष्ट्रीय एकता को बढ़ावा देने वालक तथा एकजुटता एवं भाईचारे की भावना पैदा करने वाले होते है। गुणवत्तायुक्त शिक्षा तक सबकी पहूँच कायम करने के उद्देश्य से दूरदर्शन ने 26 जनवरी, 2000 से शैक्षणिक चैनल ज्ञान दर्शन आरम्भ किया है। यह उपग्रह चैनल इग्नू और मानव संसाधन विकास मंत्रालय के सहयोग से संचालित किया जा रहा है

प्रेस एवं प्रिन्ट / समाचार पत्र पंजीयक (Press and Print Media)

सन 1953 में प्रथम अयोग की सिफारिश के आधार पर 1 जुलाई, 1956 को भारत के समाचार पत्र पंजीयन या प्रेस पंजीयक का कार्यालय अस्तित्व में आया। वर्ष 2003-2004 की रिपोर्ट के अनुसार 31 मार्च, 2004 तक पंजीकृत समाचार पत्र/पत्रिकाओं की कुल संख्या 58,469 थी। इसमें 6,287 दैनिक, 361 त्रि/द्वि साप्ताहिक, 20,329 साप्ताहिक, 7,694 पाक्षिक, 17,124 मासिक, 4,101 त्रैमासिक, 541 वार्षिक एवं 2,032 अन्य काल अवधि के थे। दिल्ली में 11 भाषाओं में पत्र-पत्रिकाओं का प्रकाशन हुआ। इसके बाद महाराष्ट्र में 10 भाषाओं में,केरल तथा कर्नाटक में 9-9 भाषाओं में तथा पश्चिमी बंगाल में 7 भाषाओं में प्रकाशन हुआ। उत्तर प्रदेश में सबसे अधिक (9,492) समाचार पत्रों का पंजीकरण हुआ। महाराष्ट्र से प्रकाशित हो रहा 'बाम्बे समाचार' देश का सबसे पुराना अखबार है।

समाचार एजेन्सियाँ (news Agencies)

प्रेस ट्रस्ट ऑफ इण्डिया (पी.टी.आई) : यह भारत की सबसे बड़ी समाचार एजेन्सी हैं, जो बिना किसी मुनाफे के चलाई जाने वाली सहकारी संस्था है। इसकी स्थापना 27 अगस्त, 1947 को हुई और 1 फरवरी, 1949 से इसने अपनी सेवाएँ प्रारम्भ कर दी। पी.टी.आई. अंग्रेजी और हिन्दी में अपनी समाचार सेवाएँ दे रही है। भषा एजेन्सी की हिन्दी समाचार सेवा है।

यूनाइटेड न्यूज ऑफ इण्डिया (यू.एन.आई.) : यूनाइटेड न्यूज ऑफ इण्डिया की स्थापना वर्ष 1956 के कम्पनी कानून के तहत 19 दिसंबर, 1956 को हुई। यह संस्था मुख्य रूप से 21 मार्च, 1961 से कार्य करना शुरु किया। वर्ष 1982 में असने पूर्ण रुप से हिन्दी तार सेवा 'यूनिवार्ता' का शुभारम्भ किया और भारत की पहली हिन्दी समाचार एजेन्सी बन गई।

गुटनिरपेक्ष समाचार एजेन्सी पूल : यह संस्था वर्ष 1976 से प्रारंभ हुई इसका उद्धेश्य मुख्य रूप से गुटनिरपेक्ष देशों की समाचार एजेन्सियों के बीच समाचार आदान-प्रदान की व्यवस्था करना है। था। यह एजेन्सी मुख्य रूप से अंग्रेजी, स्पेनिश, फ्रेंच और अरबी में समाचार प्रषित करती है।

भारतीय प्रेस परिषद : 11 मार्च, 2005 को न्यायमूर्ति श्री जी.एन. रे को भारतीय प्रेस परिषद का अध्यक्ष बनाया गया। इसकी स्थापना समाचार पत्रों की स्वतन्त्रता की रक्षा करने और भारत में समाचार पत्रों और समाचार एजेन्सियों के स्तर को बनाए रखने और उसमें सुधार लाने के उद्देश्य से किया गया।

दृश्य-श्रवय मीडिया (Audio-Visual Media)

वर्ष 1895 में ल्तुमियर बन्धुओं द्वारा मोशन पिक्चर फोटोग्राफी के बाद दृश्य मीडिया अस्तित्व में आया। मूक फिल्म के युग में वर्ष 1912-13 में आर.जी.टोनी ने एन.जी. चित्रे के साथ एक फिल्म 'पुण्डलिक' बनाई थी। दूसरी फिल्म 'राजा हरिश्चन्द्र' दादा साहेब फाल्के ने बनाई थी। पहली भारतीय बोलती फिल्म 'आलमआरा' आर्देशीर ईरानी ने बनाई।

इस प्रकार से यह समस्त समाचार एजेन्सी भारत में संचार के क्षेत्र में कार्य करती है जिनका मुख्य उद्धेश्य समुदाय तक जानकारी उपलब्ध कराना है। जिससे कि समस्त जन अपने अधिकारों कर्तव्यों एवं अन्य आवश्यक महत्वपूर्ण जानकारी को प्राप्त कर सकें।

3.6 सारांश

सामूदायिक संगठन प्रणाली के माध्यम से जन समुदाय की आवश्यकताओं को जानकर उनकी समस्या समाधान का प्रयास किया जाता है। सामूदायिक संगठन प्रणाली में अनेक कौशल तकनीकों का प्रयोग किया जाता है जिससे कि यह प्रक्रिया आसानी के साथ की जा सके। संचार सामूदायिक संगठन में एक प्रमुख कौशल एवं तकनीक के रूप में उपयोग किया जाता है। संचार की महती भूमिका मुख्य रूप से सामूदाय के मध्य संबंध स्थापन से लेकर सूचनाओं के आदान- प्रदान तक की जाती है। वर्तमान समय में समूदाय हेतू जनसंचार माध्यमों का प्रयोग मुख्य रूप से किया जा रहा है। जिससे कि सामूदाय में उत्पन्न समस्याओं का निराकरण किया जा सके।

3 .7 बोध प्रश्न

1. सामूदायक संगठन से आप क्या समझते हैं ?
2. सामूदायिक संगठन की प्रक्रिया में संचार के महत्व को स्पष्ट कीजिए।
3. जनसंचार क्या है ? वर्तमान समय में इसकी उपयोगिता पर प्रकाश डालिए।
4. जनसंचार की विभिन्न माध्यमों को उदाहरण सहित समझाए।
5. समूदाय और संचार के मध्य अंर्तसंबध स्पष्ट कीजिए।

3 .8 संदर्भ एवं उपयोगी ग्रंथ

1. भूषण, बिद्या एवं सचदेवा, डी.आर. (2012) *समाजशास्त्र*. नई दिल्ली:डार्लिंग किंग्सले (इंडिया) प्रा.लि.
2. गुप्ता, एम एल एवं शर्मा, डीडी.(1998) *समाजशास्त्र*. आगरा: साहित्य भवन पब्लिकेशन.
3. सिंह, ए.एन. (2002) *सामुदायिक संगठन*. *पंचकूला* : हरियाणा साहित्य अकादमी.
4. गुप्ता, एम.एल. एवं शर्मा, डीडी.(2004) *भारतीय ग्रामीण समाजशास्त्र*. आगरा: साहित्य भवन पब्लिकेशन.
5. Ogburn & Nimkoff (1957) *A Hand Book of Sociology.* Landon : Rutledge and Kegan pall Limited.
6. Gillin,john Lewis & Gillin ,john Philip(1948) *Cultural Sociology* NewYork: Macmillan Company.
7. Paul, Handershon & David, Jones &David, Thomas N.(1980)*The Boundaries of Change In Community Work* . London: Allen And Anwin Publication.
8. Rozer, Hadley &Mike cooper & Graham Stacy(1987).*A community Social workers handbook*. London: Tevistock Publication
9. सरदाना, चंद्रकांता एवं मेहता, कृ.शि., 'जनसंचार कल, आज और कल', दिल्ली: ज्ञान गंगा।
10. कुलश्रेष्ठ, वि. एवं जैन, हं., (2005). 'जनसंचार शोध प्रविधियां', जयपुर: माया प्रकाशन।
11. सिंह, श्रीकान्त, (2001). 'संप्रेषण: प्रतिरूप एवं सिद्धांत', फैजाबाद : भारती पब्लिशर्स एण्ड डिस्ट्रीब्यूटर्सा
12. जैन, रमेश, (2003). 'जनसंचार एवं पत्रकारिता', जयपुर: मंगलदीप पब्लिकेशन्स।
13. Desai, Amit, 'Journalism and Mass Communication', New Delhi: Reference Press Kumar, keval j., (2004). 'Mass Communication in India', Mumbai: Jaico Publishing House.
14. Rayudu, C.S., (2008). 'Communication', Mumbai: Himalaya Publishing House.
15. बघेल, संजय सिंह, 'संचार, समाज और साहित्य', गाजियाबाद : के.एल. पचौरी प्रकाशन।

इकाई – 4 सामाजिक क्रिया एवं संचार

इकाई की रूपरेखा

4.1 उद्देश्य
4.2 प्रस्तावना
4.3 सामाजिक क्रिया का अर्थ एवं परिभाषा
4.4 सामाजिक क्रिया के उद्देश्य एवं क्षेत्र
4.5 सामाजिक क्रिया की प्रासंगिकता एवं संचार
4.6 सामाजिक क्रिया में संचार कौशल
4.7 सामाजिक क्रिया पुर्वावलोकन
4.8 सारांश
4.9 बोध प्रश्न
4.10सन्दर्भ एवं उपयोगी ग्रन्थ

4.1 उद्देश्य

इस इकाई के अध्ययन पश्चात आप

1. सामाजिक क्रिया के अर्थ एवं परिभाषा की व्याख्या कर सकेंगे।
2. सामाजिक क्रिया के उद्देश्य क्षेत्र को रेखांकित कर सकेंगे।
3. सामाजिक क्रिया के इतिहास एवं प्रासंगिगकता में संचार की प्रभाविता को समझ सकेंगें।
4. सामाजिक क्रिया एवं संचार के पुर्वावलोकन की व्याख्या कर सकेंगे।

ज्ञान शांति मैत्री

4.2 प्रस्तावना

सामाजिक क्रिया समाज कार्य की एक सहायक प्रणाली है। सामाजिक क्रिया को प्रारंभिक समाज कार्य साहित्य में समाज सुधार का नाम दिया गया। यह समाजकार्य अभ्यास में महत्वपूर्ण स्थान रखती है। सामाजिक क्रिया मानव समाज के विकास की प्रक्रिया का हिस्सा रही है। समाज विकास में शायद कोई ऐसा दौर नहीं रहा होगा,जहाँ लोगों ने स्वयं को संगठित न किया हो, अन्याय का विरोध नहीं किया हो। राजनीतिक, आर्थिक और सामाजिक असमानता को समाप्त करने या दूर करने की कोशिश न की हो । लोगों की शिकायतों को दूर करने की कोशिश, समाज के वंचित एवं उपेक्षित लोगों की लड़ाई को बेहतर समाज बनाने के लिए तथा उनकी लड़ाई को लक्ष्य तक पहुँचाने की कोशिश सदैव की गई। सामाजिक क्रिया को सिर्फ समाज कार्य की पद्धति के रूप में ही न देखकर इसे भारत में समाज कार्य शिक्षा के पीछे निहित दर्शन के रूप में भी देखना चाहिए। सामाजिक क्रिया में संचार की अहम भूमिका होती है । संचार ही एक ऐसा माध्यम है जिसके अनुसार आमजन तक एक सशक्त माध्यम से कार्यकर्ता अपनी बातों को पहुंचाता है । उक्त इकाई में

भारतीय परिदृश्य में सामाजिक क्रिया में संचार की भूमिका एवं प्रासंगिकता के आधार पर विस्तार से चर्चा की जाएगी।

4.3 सामाजिक क्रिया का अर्थ एवं परिभाषा

पारसंस ने ***'द स्ट्रक्चर ऑफ सोशल एक्शन' (1937)*** तथा शिल्स के साथ लिखी अपनी पुस्तक ***'टू वर्ड्स ए थ्योरी ऑफ सोशल एक्शन'*****(1951)** में यह स्थापित किया है कि सामाजिक क्रिया सिद्धांत वस्तुतः एक स्वैच्छिक क्रिया का सिद्धांत है। स्वैच्छिक इसलिए कि कर्ता अपने लक्ष्य को प्राप्त करने के लिए उपलब्ध विकल्पों में से जो कुछ उसे सही दिखाई पड़ता है, ग्रहण कर लेता है। इस तरह सामाजिक क्रिया का स्वैच्छिक सिद्धान्त उपयोगितावाद, प्रत्यक्षवाद व आदर्शवाद को अपने अंदर समेट लेता है।

पोर्टर ली आर *के अनुसार (1937) "सामाजिक क्रिया का उद्देश्य समाज में प्रचलित परम्पराओं को बदलने, कानून में परिवर्तन करने तथा नई व्यवस्था के लिए आंदोलन चलाना होता है। इसमें कुछ संगठन वर्ग-संघर्ष को आर्थिक रूप में बदल कर समाज में अधिक संतुलन बनाते हैं। इसमें जो विचार निहित है यही सामाजिक क्रिया है। सुरक्षा अभियान एवं सामुदायिक हित के आंदोलन, सामाजिक क्रिया के उदाहरण हैं। कोई भी ऐसा प्रयास प्रत्यक्ष या परोक्ष जिससे सामाजिक कल्याण होता है, वह सामाजिक क्रिया है"*। ली के अनुसार चूंकि इसका संबंध ऐच्छिक समूहों से है और विभिन्न समूहों की आपसी गतिविधियों से है, अतः यह सामाजिक संगठनों का अभिन्न अंग है।

कैनेथ एल. एम. प्रे (1945) के अनुसार, सामाजिक क्रिया *एक समझपूर्ण प्रयास है जिसका प्रभाव प्रत्यक्ष रूप से सामाजिक परिस्थितियों एवं नीतियों पर पड़ता है तथा उससे सामाजिक बनावट* पर *अच्छा व खराब असर भी पड़ता है, जो सामाजिक कार्यकर्ताओं को देखना होता है। सामाजिक कार्यकर्ता को सामाजिक सेवा के दौरान कुछ मुश्किलों व बाधाओं का सामना करना होता है जो उनको अच्छी सेवाएँ देने से रोकती है। सामाजिक क्रिया में इनको हल करते हुए आगे बढ़ाना होता है।*

आर्थर डनहेम (1958) के अनुसार, *सामाजिक क्रिया, सामाजिक कार्यकर्ताओं द्वारा समाज के लिए अच्छे समझे जाने वाले उद्देश्यों हेतु वर्तमान प्रचलित व्यवस्था में शिक्षा, जागरूकता, दबाव आदि माध्यमों के द्वारा बदलाव लाने का एक प्रयास है।* उन्होंने कहा कि टकराव की स्थिति में लक्ष्य को पाने के लिए कार्यवाई की विधियों में परिवर्तन करना उचित है। सामाजिक क्रिया, स्थितियों के बीच टकराव है तथा उद्देश्यों को आगे बढ़ाती है। उन्होंने टकराव की स्थिति में प्रक्रियात्मक एवं सीधे कार्यवाई को उचित ठहराया।

भारतीय समाजकार्य के एनसाइक्लोपीडिया द्वारा 1965 में दी गयी परिभाषा के अनुसार, *सामाजिक क्रिया वह सामाजिक गतिविधि है जिसमें संगठित रूप से सामाजिक संस्थाओं को रूपांतरित करना, परिवर्तन करना, नीतियाँ बनाना है जिससे पूरा सामाजिक परिवेश निर्मित होता है। सामाजिक क्रिया का संबंध एक बेहतर सामाजिक वातावरण बनाने से होता है। जिसमें सभी व्यक्तियों को सुविधाएं प्राप्त हो तथा उनके बीच अच्छा सहसंबंध हो जिससे उनकी दैनिक गतिविधि सुचारु रूप से चल सके। सामाजिक क्रिया के द्वारा एक नयी व्यवस्था उत्पन्न होती है, नये कल्याणकारी कार्यक्रम सामने आते हैं तथा उन बाधाओं को दूर करना होता है जो सुधार व कल्याणकारी परिवर्तन के रास्ते में आते हों।*

4.4 सामाजिक क्रिया के उद्देश्य एवं क्षेत्र

उद्देश्य -

1. सामाजिक समस्याओं के प्रति जनता में जागरूकता और बोध उत्पन्न करना, कल्याणकारी योजनाओं की स्वीकृति प्राप्त करना और सामुदायिक नेताओं का समर्थन प्राप्त करना।
2. अविकसित समूहों के विकास के लिए आवश्यक सेवाओं की मांग करना।
3. स्वास्थ्य एवं कल्याण के क्षेत्र में स्थानीय, प्रांतीय तथा राष्ट्रीय स्तर पर किये जाने वाले कार्यों को करना।
4. समाज कार्य के क्षेत्रीय अनुभव, प्राविधिक कुशलता और ज्ञान पर आधारित सामाजिक समस्याओं के लिए आवश्यक सुझाव देना।
5. समाज कार्यकर्ताओं एवं सामाजिक संस्थाओं द्वारा एकत्रित सामाजिक आँकड़ों का विश्लेषण करना।

क्षेत्र -

किसी भी क्रिया का विस्तार या उपयोगिता उस व्यवसाय के तरीके, उद्देश्य, लक्ष्य व आशय को किस प्रकार परिभाषित किया गया है उस पर निर्भर करता है। दूसरे, उसका प्रयोग किस संदर्भ में किया गया है खास तौर पर सामाजिक व आर्थिक व सांस्कृतिक संदर्भ में जो कि संवैधानिक दायित्व भी है।

कैनेथ एल. एम. प्रे. सामाजिक क्रिया और समाजकार्य के बीच संबंध पर एक मुख्य प्रश्न उठाते हैं- कि क्या समाजकार्य एक व्यवसाय के रूप में कोई विशेष उत्तरदायित्व लेता है? लोगों की आवश्यकता अनुरूप लक्ष्य की प्राप्ति हेतु कौशल्य का प्रयोग करता है या फिर इस व्यवसाय का उत्तरदायित्व मात्र परिस्थितियों के दायरे में लोगों की सहायता करना रह गया है, चाहे वो परिस्थितियाँ कुछ भी हों? इस प्रश्न के उत्तर पर ही इस व्यवसाय का लक्ष्य निर्धारित होना चाहिये।

सामाजिक क्रिया का विस्तार इसके उद्देश्यों पर निर्भर करता है। इसका उद्देश्य समाज कार्य के व्यवसाय पर निर्भर है। यदि समाज कार्य व्यवसाय का उद्देश्य लोगों को साधन संपन्न बनाना है तो सामाजिक कार्यकर्ताओं का उद्देश्य मात्र बाधाओं को रोकना है न कि मूल समस्याओं का निवारण। यह इस पर निर्भर करता है कि मानवीय समस्याओं के कारणों को किस दृष्टिकोण से समझा गया है? यदि सामाजिक क्रिया का उद्देश्य किसी कानून में परिवर्तन करना या कोई आन्दोलन खड़ा करना है तो ये सब सामाजिक क्रिया के केन्द्र बिन्दु होंगे। कुछ उदार कार्यवाईयों में आर्थिक स्रोतों को बढ़ावा व सामाजिक सेवाओं को और विकसित करना आदि पर ज्यादा ध्यान केन्द्रित किया जाता है। तब सामाजिक सेवाओं में अक्षमता तथा सामाजिक कानून और दूसरे मुख्य मुद्दे होते हैं। लेकिन प्रश्न उठता है कि क्या समानता आधारित विकास हो रहा है? या कोई प्रस्तावित विकास या नमूने का विकल्प है तो सामाजिक क्रिया का संबंध इन सभी प्रश्नों के समाधान से होता। ऐसे में सामाजिक क्रिया प्रचलित वैधानिक नियमों के दायरे के बाहर चली जाती है चूँकि वैधानिकता एक सापेक्ष अवधारणा है। तब सामाजिक लक्ष्य पश्चिम के अथवा विशिष्ट व्यक्तियों के दृष्टिकोण से निर्धारित होंगे तथा अन्य प्रश्नों को कौन निर्धारित करे कि लक्ष्य वांछनीय है, वैधानिक है या नहीं तथा ये किस आधार पर सामाजिक क्रिया की प्राथमिकता है? ये सभी मुद्दे विचारणीय हैं।

4.5 सामाजिक क्रिया की प्रासंगिकता एवं संचार

संचार मानव की उत्पति के प्रारंभ से लेकर आज तक चली आ रही एक अन वरत प्रक्रिया है। जबकि सामाजिक क्रिया भी सदैव से मानव समाज के विकास प्रक्रिया का हिस्सा रही है। संचार के अभाव में सामजिक क्रिया हेतु लोगों को संगठित नहीं किया जा सकता। अन्याय के खिलाफ एकजुट होने, शिकायतों को दूर करने, असमान सामाजिक, आर्थिक और राजनीतिक ढॉचे को बदलने के लिए, कोशिश, आदि ये सभी संचार के अभाव में चरितार्थ नहीं हो सकते। मौखिक संचार तथा अन्य अनेकों संकेतो के जटिये, मनुष्य अपनी संचार संबंधी आवश्यकताएं, पुरी करता रहा है। 20वीं शताब्दी के प्रारंभ तक संचार व इसके माध्यमोंको, किसी स्वतंत्र चिंतन, का विषय भले ही न माना गया हो लेकिन आधी सदी गुजरने तक इसकी विशिष्टता का अहसास सबको हो चुका था। स्वैच्छिक प्रयास और जन भागीदारी को किसी भी विकास कार्य की कामयाबी के लिए जरुरी माना जाता हैं। सूचना क्रांति के विभिन्न रुपों, तथा तकनीक में निरंतर विकास से संचार के क्षेत्र में नये-नये आयाम जोड़े हैं। संचार के एक स्वतंत्रता एवं सम्पूर्ण विषय के बतौर, अध्ययन की परंपरा, पहले नही रही है। एक विषय के रुप में संचार का इतिहास महज 70 से 80 साल तक पुराना है। प्रारंभ में संचार का अध्ययन अलग-अलग क्षेत्रों जैसे राजनीतिक विज्ञान, समाजशास्त्र, मनोविज्ञान, आदि क्षेत्र के लोगो द्वारा किया जाता था। समाजकार्य के क्षेत्र में संचार का प्रयोग सदैव से ही चला आ रहा हैं।

ऐतिहासिक विकास की दृष्टि से समाज कार्य के वर्तमान वैज्ञानिक स्वरूप का अवलोकन करने पर यह पता चलता है कि 1922 में ही मेरी रिचमंड ने सामाजिक क्रिया का उल्लेख समाज कार्य की चार प्रमुख प्रणालियों मे से एक प्रणाली के रूप में किया था। सामाजिक क्रिया के शुरुआत में परिभाषित करते हुए मेरी रिचमंड ने संचारके महत्व को परिभाषित किया था। उन्होंने सामाजिक क्रिया को सामाजिक विज्ञान और प्रोपोगंडा या प्रचार के जरिये लोगों की बेहतरी के दौरे पर देखा था अर्थात प्रचार जो कि संचार का एक महत्वपूर्ण साधन है।1940 में जॉन फिंच ने एक कॉन्फ्रेंस में सामाजिक क्रिया प्रकृति के ऊपर एक महत्वपूर्ण निबंध प्रस्तुत किया । इसके एक वर्ष बाद फिंच ने *सोशल वर्क ईयर बुक में* सामाजिक आंदोलन पर निबंध लिखा। 1945 में केनेथ एलियम प्रे ने *''सोशल वर्क एंड सोशल एक्शन''* नामक एक लेख लिखा जिसके अनुसार यह माना जाने लगा कि सामाजिक क्रिया सामुदायिक संगठन का एक अंग नहीं है । यह समाज कार्य की एक अलग विधि है । बाद में चल कर बात स्पष्ट हो गयी कि सामुदायिक संगठन के अंतर्गत कार्य एक सीमित क्षेत्र में किया जाता है किन्तु सामाजिक क्रिया में कार्य बड़े पैमाने पर होता है । सामाजिक क्रिया उतनी ही पुरानी है जितना कि समाज ।1963 में फ्रीड़लैण्डर ने संचार को सामाजिक क्रिया के रुप में देखा तथा बताया कि सामाजिक क्रिया समाजकार्य दर्शन और व्यवहार के तहत, चलाया जाता है। सामाजिक क्रिया का उद्देश्य, सामाजिक प्रगति, सामाजिक नीतियों में बदलाव, सामाजिक विद्यान, स्वास्थ्य और कल्याण सेवाओं में बेहतरी है। रोजन वाल्डिवन की सामाजिक क्रिया कि परिभाषा में संचार की भूमिका और भी स्पष्ट होती है। उन्होंने सामाजिक क्रिया को परिभाषित करते हुए बताया कि सामाजिक क्रिया, सामाजिक और आर्थिक संस्थान को बदलने की संगठित कोशिश है। यह समाजकार्य व समाज सेवा से अलग वह क्षेत्र है जिसमें जरुरी नहीं कि स्थापित संस्थानों में बदलाव की कोशिश है। राजनीतिक सुधार, औद्योगिक, लोकतंत्र, सामाजिक विचार, सामाजिक और नस्लीय न्याय, धार्मिक आजादी, और नागरिक अधिकार सभी सामाजिक क्रिया तहत आते है। प्रचार-प्रसार, शोध और गुट बनाना उसकी तकनीक है। यहॉं तक कि प्रचार प्रसार शोध और गुट बनाने हेतु संचार

की अत्यंत आवश्यकता है। अगर स्पष्टत: तौर पर हम कहें तो यह कह सकते है कि संचार के अभाव में किसी भी प्रकार की सामाजिक क्रिया नही हो सकती है। वही सामाजिक क्रिया के संदर्भ में गैब्रियल बिटो संघर्ष पर जोर देते हैं। सामाजिक क्रिया संघर्ष से भरपूर उतार-चढाव वाली प्रक्रिया है। उसकी पहल या संचालन आम लोग या खास लोगों का समूह करते हैं। पॉल भी सामाजिक क्रिया हेतु संचार को महत्वपूर्ण मानते है। वे कहते है कि सामाजिक क्रिया संगठित और नियोजित गतिविधियों हैं, जो हैसियत, सत्ता और संसाधन की आवश्यकता होती है। संचार निश्चिल नही बल्कि एक गतिशील प्रक्रिया है। यह संबंधी पर आधारित है यह संबंध जोड़ने का एक बड़ा हथियार है। यह एक व्यक्ति को दूसरे व्यक्ति से एक समूह को दूसरे समूह से तथा एक समुदाय को दूसरे समुदाय से जोड़ना संचार का काम है। अत: संचार सामाजिक पारस्पारिक क्रियाकी प्रक्रिया है। इसके सूत्र ऐतिहासिक दस्तावेजों में उपलब्ध है– पाँचवी शताब्दी पूर्व रोम के विरूद्ध प्लैबियन विरोध के रूप में, प्राचीन रोम से अमेरिका के नागरिक अधिकारों के आंदोलन, तक सामाजिक क्रिया का एक लंबा इतिहास है। पश्चिम में भी इसका उदाहरण मध्य 16 वीं शताब्दी में नीदरलैंड से स्पेन के विरोध के रूप में उपलब्ध है। वर्ष 1880 में आयरलैंड के किसानों द्वारा बहिष्कार, वर्ष 1905 में खूनी रविवार के रूप में रूसी क्रांति,1917 की रूसी क्रांति, वर्ष 1953 में पूर्वी जर्मनी का उदय ,1956 का हंगरी आंदोलन और अफ्रो –अमेरिकन द्वारा बस बहिष्कार, आदि सामाजिक क्रिया के उदाहरण है।

भारत में बौद्ध धर्म एवं जैन धर्म का उदय भी एक धार्मिक आंदोलन द्वारा सामाजिक विरोध की कार्रवाई द्वारा हुआ। भारत में 1857 का स्वतन्त्रता संग्राम जो अत्याचारी शासकों, दमनकारी आर्थिक नीतियों और राजनैतिक नीतियाँ जो भुखमरी का कारण बनी, अन्यायपूर्ण कर-नीति, बारदौली किसान आंदोलन, अस्पृश्यता संबंधी आंदोलन तथा भारत में कृषक आंदोलन, वर्तमान में अल्पसंख्यकों, बालकों एवं महिलाओं के आंदोलन,भ्रष्टाचार आंदोलन आदि प्रमुख हैं जो आज भी निरंतर जारी है।

भारत में औपनिवेशिक दौर में भी विभिन्न भागों में जनता के बदहाल जीवन स्तर सुधारने, शैक्षणिक अवसरों की असमानता, जातिवाद, अन्यायपूर्ण कराधान आदि के विरोध में कई आंदोलन हुए हैं और इस प्रकार सामाजिक क्रिया से सामाजिक सुधार हुए। ज्योतिबा फुले ,पंडिता रामाबाई ने स्पष्ट रूप से अपने आंदोलन को लोगों के जीवन स्तर को सुधारने एवं उनके आत्मविश्वास को बढ़ाने में केन्द्रित किया जो कि सामाजिक, आर्थिक एवं शैक्षणिक रूप से पिछड़े हुए थे। स्वतंत्रता संघर्ष के दौरान ही भारतीय राष्ट्रीय काँग्रेस का जन्म हुआ जिसने प्रारम्भिक दौर में टकराव का रास्ता न चुन कर मिलजुल कर, सुधार का कार्य –साथ किया गया जो बाद में अलग-थलग हो गया।

आजादी के आंदोलन की शुरूआत योजनाबद्ध व स्पष्ट रूप से अंग्रेजी राज के विरूद्ध भारतीय नेताओं ने की थी जिसमें गांधी के सामाजिक सुधारों का कार्यक्रम, समग्र राजनैतिक, सामाजिक आंदोलनों के माध्यम से स्वतन्त्रता से जुड़ा था। गांधी ने सृजनात्मकता के साथ सांस्कृतिक ऐतिहासिक परम्पराओं की व्यवस्था का सुंदर समागम किया और सभी बुराइयों का अहिंसक तरीके से विरोध का रास्ता अपनाया।

गांधी जी ने सभी संस्थागत बुराइयों के विरूद्ध जुझारू रूप से अहिंसक तरीकों का प्रयोग किया उदाहरण के तौर पर कई आंदोलन जैसे असहयोग आंदोलन, बारदौली सत्याग्रह, नमक सत्याग्रह इन आंदोलनों में गांधी का व्यक्तित्व एक क्रांतिकारी के रूप उभर कर आता है। सामाजिक क्रिया पर दृष्टि डालने पर पता चलता है कि गांधी की यह क्रांतिकारी सोच अच्छी थी। अन्याय के विरूद्ध गांधीजी के अहिंसक

तरीकों का प्रयोग मार्टिन लूथर ने अश्वेत लोगों के अधिकारों की लड़ाई में किया और जयप्रकाश नारायण ने अपने सम्पूर्ण क्रान्ति आंदोलन में किया।

गांधी के प्रयोगों में अनुशासन, आज्ञा व नियंत्रण, आत्मकष्ट सहन जैसे प्रयोग में लाये जाने वाले हथियार का यथोचित समय पर विशेष ध्यान दिया गया तथा भड़काऊ, उद्देश्यहीन व हिंसक तरीकों को नजर अंदाज किया गया।

जयप्रकाश नारायण ने इन तरीकों को अपनाते हुए स्पष्ट किया कि किसी क्रांतिकारी आंदोलन के दौरान उद्देश्य ठीक वही नहीं रहते जो उसके प्रारम्भ के दौर में रहते हैं। उस आंदोलित माहौल का लाभ लेते हुए सामाजिक सुधार या लाभ के मुद्दों को उसमें सम्मिलित कर लेना चाहिए। जयप्रकाश नारायण का मानना था कि सामाजिक परिवर्तन के लिए सामाजिक क्रिया के मुक़ाबले राजनीतिक क्रिया गौण है। कुछ क्रियाएँ जो व्यावसायिक संस्थाओं के दायरे से बाहर है किन्तु सामाजिक क्रिया से ज्यादा सुसंगत है सामाजिक परिवर्तन में महत्वपूर्ण औज़ार के रूप में प्रयोग में लाई जाती है।

स्वतंत्रता प्राप्ति के बाद भी भारत में बहुत से संघर्ष हुए जैसे बारगर दल आंदोलन, मछली–पालने वालों का आंदोलन, महिला आंदोलन, भूमि अधिकार के लिए भूमिहीन आदिवासी आंदोलन, मानवाधिकार आंदोलन एवं नागरिक अधिकार आंदोलन इत्यादि। इसके अतिरिक्त पर्यावरणीय आंदोलन, भ्रष्टाचार आंदोलन इत्यादि। भ्रष्टाचार आंदोलन जो कि अन्ना हज़ारे के नेतृत्व मे लड़ा गया सामाजिक क्रिया का अच्छा उदाहरण रहा और यहाँ तक कि इसे सत्ता परिवर्तन के रूप में देखा गया क्योंकि आंदोलन के कुछ महीने बाद सरकार बदल गयी।

सामाजिक क्रिया समाज कार्य की एक स्वतंत्र–सहायक पद्धति के रूप में स्वीकृति पा चुकी है किन्तु इसका उपयोग व्यापक स्तर पर नहीं होता। इसका एक कारण तो यह है कि यह व्यापक परिवर्तन से संबन्धित है इसमें बड़ी शक्ति और सामर्थ्य की आवश्यकता होती है; दूसरे, इसके परिणामों के प्रति भी लोगों को काफी संदेह बना रहता है। आमतौर पर राजनीतिक या आर्थिक समूहों से संबन्धित क्रियाओं का प्रभाव इतना अधिक होता है कि बहुत कुछ सामाजिक मूल्यों की स्थिति नियंत्रित ही रहती है। कोई भी समाज हो उसमें परिवर्तन तो होते ही रहते है और प्रायः अनेक आवश्यकताएँ पूरे सामाजिक पैमाने पर महसूस की ही जाती रहती हैं। इन आवश्यकताओं की पूर्ति के लिए आवश्यक स्थिति लाना अन्य तरीकों के अतिरिक्त बहुत कुछ सामाजिक क्रिया से भी संभव होता है। समाज कार्य की यह पद्धति समाज- कार्य के दर्शन और सिद्धांतों द्वारा मान्यता प्राप्त जनतांत्रिक मूल्यों की स्थापना एवं विकास हेतु प्रयोग में लायी जाती है। आज के समाज के ऊँच-नीच, पिछड़े और विकसित तथा स्त्री और पुरुष के आधार पर जो भेद हैं ,उनको मिटाना जनतांत्रिक कार्य है। अनुसूचित जातियाँ ,आदम जातियाँ, श्रमिक, महिला, अशिक्षित, कृषक, विधवा, वेश्या, इत्यादि ऐसे वर्ग हैं जिनका सामान्य समाज में सामान्य रूप से सामंजस्य होना चाहिए।

सवर्णों या धनिक-वर्गों में आंशिक रूप में आज भी अछूतों या गरीबों के प्रति हेय भावना है जो दूर होनी चाहिए, शासन तंत्र और पद्धति के ऐसे अनेक दोष हैं जिनसे कि कुछ अत्यंत साधारण स्थिति के व्यक्ति अपनी आवाज या प्रार्थना सक्षम अधिकारी तक नहीं पहुंचा पाते। देश के एक बहुत बड़े तबके में आज भी अशिक्षा विद्यमान है और जीवन–यापन के लिए आवश्यक न्यूनतम साधनों की भी कमी है। इन सब सामाजिक समस्याओं को दूर करने के लिए बहुत से प्रयत्न किए जाते रहें हैं और किए जा रहे हैं। ये प्रयत्न

सरकारी और गैर-सरकारी दोनों ही स्तरों पर हैं। इन प्रयत्नों के बावजूद ये सामाजिक समस्याएँ, आज भी अत्यधिक व्यापक है और कुछ नई ऐसी व्यक्तिगत या पारिवारिक मूल्यगत समस्याएँ भी उपस्थित होती जा रही हैं जो कि औद्योगिक युग की देन हैं। इन सभी समस्याओं को कानूनों द्वारा या जन चेतना द्वारा काफी हद तक दूर करने की कोशिश की जा सकती है। चाहे शासन द्वारा कानून के निर्माण और उसके परिपालन की बात हो या संबन्धित वर्गों और समुदायों के मध्य जनभावना, जन शक्ति या लोकशक्ति को विकसित करने, उनके अधिकाधिक उपयोग की बात हो दोनों ही; स्थितियों में सामाजिक क्रिया की पद्धति को प्रयोग में लाया जा सकता है और इसकी मदद से अनेक ऐसी सामाजिक समस्याओं जो कि नव जनतांत्रिक -मूल्यों के ढ़ाचे से दूर हो, हल किया जा सकता है।

नए जनतांत्रिक मूल्यों के अंतर्गत सबको भोजन ,आवास ,वस्त्र ,औषधि और शिक्षा की मूल आवश्यकताओं के साथ –साथ अभिव्यक्ति और सहज उपलब्ध साधनों का समान रूप से उपभोग करने की स्वतंत्रता और संभावना होनी चाहिये। ऐसी स्थिति हेतु वैयक्तिक स्तर पर वैयक्तिक कार्य, छोटे-छोटे समूहों के स्तर पर सामूहिक कार्य व समुदायों के स्तर पर सामुदायिक संगठन से संबन्धित कार्य इत्यादि द्वारा प्रयत्न किए जाते है। किन्तु आज इन प्रयत्नों से न तो इतना अधिक लाभ हीं हो पा रहा है कि पूरे समाज का स्वरूप बदलता हुआ नजर आये और न इन प्रयत्नों द्वारा व्यापक स्तर पर कथित जनतांत्रिक मूल्यों की स्थापना और संभावना ही हो सकती है।

वर्तमान युग जनतांत्रिक युग कहा जाता है और राज्य तथा समाज का दायित्व सामाजिक न्याय, समानता और स्वतंत्रता का है। समय की इस चुनौती का सामना तभी हो सकता है जबकि सामाजिक पैमाने पर इन मूल्यों की स्थापना की चेष्टा की जाए। कोई भी सामाजिक कार्यकर्ता इस कार्य को सामाजिक क्रिया के माध्यम से ही कर सकता है। सामाजिक क्रिया की पद्धति का उपयोग कर समाजगत परिवर्तन की अपेक्षा को पूरा करना चाहिये। जब राजकीय कानूनों के स्वरूप को मानवीय दृष्टिकोण से ओत प्रोत और परिवर्तित करने की आवश्यकता महसूस की जाती है तो इस हेतु सामाजिक क्रिया का सहारा लिया जाता है। सामाजिक कार्यकर्ता ,सामाजिक संगठन, सामाजिक अभिकरण या इनके बड़े बड़े संगठन, इसके लिए आवाज उठाते हैं। जब ऐसी आवाजें उठानी होती है तो इसके लिए वे तमाम संबन्धित स्थितियों का अच्छी प्रकार अध्ययन और चिंतन करते हैं। अपना दृष्टिकोण और कार्यक्रम निश्चित कर लेने के उपरांत वे शासन के पदाधिकारियों, विधानसभा या लोकसभा के सदस्यों और संबन्धित क्षेत्रों के विशेषज्ञों से संपर्क करते हैं। यह संपर्क पत्राचार द्वारा, प्रत्यक्ष वार्ता द्वारा तथा समाचार पत्रों में वक्तव्यों के माध्यम से हो सकता है। ये कार्य अलग-अलग भी किये जा सकते हैं और संयुक्त रूप से भी। कभी-कभी संबन्धित अधिकारियों के पास अपने प्रतिनिधि मण्डल को भेज कर भी ऐसा किया जा सकता है।

भिकरण या सामाजिक कार्यकर्ता सामाजिक जरूरतों से अभिप्रेरित इन कार्यों में समाज के उस वर्ग और व्यक्तियों को भी सम्मिलित करते हैं जिन पर इसका प्रभाव होता है। चारों ओर से विशेष सामाजिक परिवर्तन की आवश्यकता और उसकी आवाज उठाने पर ही यह ज्यादा संभव होता है कि समाज के अन्य समूह संबन्धित अधिकारी और संबन्धित शासन या सरकार भी इसका एहसास करे। इस एहसास के फलस्वरूप सरकारें ऐसी समितियाँ बना सकती हैं जो कि संबन्धित स्थिति की जांच-पड़ताल करके उसके पास अपना प्रतिवेदन प्रस्तुत करें। कई बार बिना इन समितियों के प्रतिवेदनों के भी सरकारें ध्यान देती है और

विचार विनिमय करके अपना कदम निश्चित करती हैं। जब तक अपेक्षित सामाजिक परिवर्तन हेतु नियम-कानून संशोधन या निर्माण नहीं हो जाता अथवा उसके लिए आवश्यक अन्य व्यवस्थाएँ नहीं कर दी जाती तब तक सामाजिक क्रिया के ये प्रयत्न जारी रखे जाते हैं । जब समाज में व्यक्तियों के व्यवहारों को जनतांत्रिक मोड़ देने होते हैं तो सामाजिक क्रिया की मदद ली जाती है।

आज हमारे देश मे जनतांत्रिक मूल्यों की स्थापना होती हुई दिख रही है और इसको अधिक से अधिक व्यापक स्तर पर स्थापित करना बाकी है। इसके लिए व्यापक स्तर पर इन मूल्यों की आवश्यकता को समझना है और ऐसी जन-जागृति तथा जन-चेतना को बढ़ाना है, जिससे कि व्यापक जन समुदाय इन्हें आत्मसात कर सके। जब ऐसे मूल्यों को व्यापक पैमाने पर व्यक्तियों और समुदायों को ग्रहण या आत्मसात करना या कराया जाना होता है तो इसके लिए सामाजिक क्रिया की मदद बहुत ही उपयोगी होती है। जनजागृति या जनचेतना द्वारा मूल्यगत, सामाजिक परिवर्तनों की अभिलाषा तृप्ति हेतु व्यवहारगत, सामाजिक चेष्टा या क्रिया के पूर्व, सभी संभावनाओं और शक्तियों का समुचित मूल्यांकन, अनुमान और ज्ञान होना अत्यंत आवश्यक होता है। समाज में अनेक व्यक्तियों और वर्गों द्वारा अनेक सामाजिक प्रक्रियाओं का एक साथ ही प्रयोग होता रहता है। हम जानते हैं कि सामाजिक प्रक्रियाएं जहाँ एक ओर विधायी होती है वहीं दूसरी ओर अन्य बहुत सी प्रक्रियाएं विघटनकारी भी होतीं हैं । विधायी प्रक्रियाओं का उपयोग करके सामाजिक क्रिया की गति को तीव्र करना चाहिए और विघटनकारी प्रक्रियाओं पर सतर्क दृष्टि रख कर उनसे बचाव के उपाय भी करते रहना आवश्यक होता है।

जन भावनाओं में परिवर्तन द्वारा सामाजिक मान्यताओं या मूल्यों के स्वरूप में परिवर्तन के लिए यह आवश्यक है कि उसके अनुसार जन शिक्षा के कार्यक्रम चलाए जाएँ। यहाँ जन शिक्षा का अर्थ यह है कि जो भी रूढ़िगत मूल्य या परम्पराएँ हों उनकी आवश्यकता और हानिकारक स्थिति का वैचारिक स्तर पर आम लोगों को एहसास कराया जाय और जो अपेक्षित परिवर्तन या मूल्य अथवा मान्यता हो उसकी आवश्यकता और संभावना समझायी और दर्शायी जाय। ऐसा करने के लिए समुदाय या समूह के व्यक्तियों में आवश्यक प्रचार किया जाता है और समाज के भौतिक और मानवीय साधनों का उपयोग किया जाता है, ऐसा करने से सारा कार्यक्रम जनता को अपना कार्यक्रम मालूम होता है। जनतंत्र के लिए यह आवश्यक शर्त भी पूरी होती है कि जो भी कार्य हो वे न मात्र जनता के लिए हो वरन जनता द्वारा भी हो। जनतंत्र का यह सिद्धांत समाज कार्य का भी एक सिद्धांत है और समाजकार्य में भागीदारी को अत्यधिक महत्व दिया जाता है और इसकी बड़ी उपयोगिता समझी जाती है। सामाजिक क्रिया उतनी ही सबल और सार्थक हो सकती है जितना की अधिक जन सहयोग और जन भागीदारी कि उपस्थिति होगी। जनता के विचारों में परिवर्तन के लिए जन-जन में प्रेम, सौहार्द और आस्था भी होना जरूरी है। यह प्रेम और आस्था जितनी ही अधिक होती है उतनी ही अधिक सफलता की स्थिति होती है।

सामाजिक कार्यकर्ता, अभिकरण या संस्थाओं को इनकी उपस्थिति और वृद्धि की चेष्टा में संलग्न होना चाहिए। जब समस्या स्वयं की अनुभूति होती है और उसके निराकरण के उपाय स्वयं ही तैयार किए जाते है तो कार्य में दिलचस्पी ज्यादा स्वाभाविक तौर पर होती है। सामाजिक क्रिया के दौरान इस बात का ख्याल रखना चाहिए कि सेवार्थी तथा जन समुदाय के प्रयत्नों के दौरान ऐसी चेष्टा होनी चाहिए जिससे कि ज्यादा से ज्यादा ऐसा मालूम हो कि सारे क्रिया-कलाप जन समुदाय के स्वयं के ही हैं ।

4.6 सामाजिक क्रिया में संचार कौशल

सामाजिक कार्यकर्ता को जो सामाजिक क्रिया की प्रक्रिया में भाग लेते हैं, इन क्रियाओं को संपन्न करने के लिए कुछ निपुणताओं या कौशलों की आवश्यकता होती है जो सामाजिक क्रिया के नियोजन के दौरान सामाजिक कार्यकर्ता की मदद करती है। सामाजिक क्रिया के कौशल निम्नानुसार हैं:-

1. **संबंध स्थापित करने का कौशल :-** सामाजिक कार्यकर्ता के पास व्यक्तियों तथा समूहों के साथ संबंध स्थापित करने की कुशलता होनी चाहिए। उन्हें सेवार्थियों के साथ व्यावसायिक संबंध बनाने और अनुरक्षित करने में सक्षम होना चाहिए। सेवार्थी समूह के बीच किसके पास नेतृत्व का गुण हैं, उसको पहचानने की क्षमता, सामाजिक कार्यकर्ता के पास होनी चाहिए। तथा इन गुणों का उपयोग सामाजिक क्रिया में किस प्रकार हो सकता है? इसका ज्ञान होना आवश्यक है। समूह के बाहर एवं भीतर के विवादों से प्रभावपूर्ण तरीके से निपटने में सक्षम होना चाहिए। समाज में, तनाव उत्पन्न करने वाली परिस्थितियों को पहचानने एवं उसका निदान स्थिति के गंभीर होने से पहले तथा दमन करने की निपुणता होनी चाहिए। लोगों की सहायता करने के लिए समाज मे कार्यरत विभिन्न सरकारी एवं गैर सरकारी संगठनों के साथ सौहार्दपूर्ण संबंध बनाने में कुशल होना चाहिए।
2. **संप्रेषण कौशल :-** संप्रेषण कौशल सामाजिक क्रिया के लिए अत्यंत महत्वपूर्ण होता है। स्थानीय संगठनों तथा नेताओं के साथ प्रभावपूर्ण जनसंपर्क स्थापित करने की निपुणता सामाजिक कार्यकर्ता में होनी चाहिए। उन्हें प्रभावशाली भाषण देने एवं इसके लिए लोगों को पहचानने की क्षमता होनी चाहिए। मीडिया को लक्षित समूहों के साथ संवाद स्थापित करने के लिए तैयार करने में निपुण होना चाहिए। विभिन्न समूहों के अनुकूल कार्यक्रम बनाने एवं उसको लागू करने में निपुण होना चाहिए। सामाजिक कार्यकर्ता को जन मीडिया तथा विविध समूहों के अनुकूल लोक मूल्यांकन करने और इसका इस्तेमाल करने में निपुण होना चाहिए। संप्रेषण कौशल का उपयोग नारे बनाने, प्रेरक गीत तैयार करने, जनसमूहों के कुशल संचालन के लिए भाषण तथा सूचना शिक्षा संचार सामग्री आदि तैयार करने के लिए किया जाता है। सामाजिक कार्यकर्ता में स्पष्ट रूप से इस आवश्यक कौशल का ज्ञान होना चाहिए जिससे वह सरल वार्ता आदि कर सकें।
3. **विश्लेषण एवं शोध से संबंधित कौशल:-** सामाजिक क्रिया में भाग ले रहे सामाजिक कार्यकर्ताओं को सामाजिक, सांस्कृतिक तथा आर्थिक समस्याओं इत्यादि के वस्तुनिष्ठ अध्ययन करने की क्षमता होनी चाहिए। उन्हें सेवार्थी समूह की आवश्यकताओं तथा समस्याओं की पहचान करने में सक्षम होना चाहिए। इन्हें सामाजिक समस्याओं का विश्लेषण करने, सामाजिक, आर्थिक, राजनीतिक, विचारधारात्मक, सांस्कृतिक, पर्यावरणीय पहलुओं पर समस्या में बढ़ोतरी करने वाले कारकों के प्रभावों का विश्लेषण करने में सक्षम होना चाहिए। उन्हें शोध करने तथा शोध अध्ययन के संभावित प्रभावों को समझने में सक्षम होना चाहिए। सामाजिक कार्यकर्ता के पास यह कौशल रहे कि वे समुदाय के लोगों को अपनी आवश्यकताओं के बारे में बिना हिचकिचाएं बोल सके और उनकी प्राथमिकता तय कर सके। सामाजिक कार्यकर्ता को समुदाय के लोगों पर सामाजिक स्थिति या समस्याओं के बारे में अपनी खुद की विचार या समझ नहीं थोपनी चाहिए।

ज्ञान शांति मैत्री

4. **मध्यस्थता कौशल :-** सामाजिक कार्यकर्ता में यह क्षमता होनी चाहिए कि वह सेवार्थी समूह की समस्या से निपटने के लिए व्यावहारिक मध्यस्थता रणनीति तैयार कर सके। सामाजिक क्रिया के दौरान प्राधिकारियों के साथ टकराव अपेक्षित होता है इसलिए सेवार्थी समूह को विभिन्न विकल्प उपलब्ध कराने चाहिए। सामाजिक कार्यकर्ताओं को धरनों, बहिष्कारों, हड़तालों जैसे कदम उठाने से पहले उसके दुष्परिणामों से समुदाय को अवगत करा देना चाहिए। कार्यकर्ता को समुदाय के लोगों के बीच आवश्यक परिवर्तन लाने हेतु असंतोष तथा भावनात्मक उद्देश्य की अनुभूति, उत्साह तथा साहस का वांछित स्तर अधिक समय तक बनाएँ रखने में सक्षम होना चाहिए क्योंकि लक्ष्यों या उद्देश्यों को प्राप्त करने से पहले समूह संचालन की विफलता कम हो सके। सामाजिक कार्यकर्ता को धैर्य एवं शांति बनाए रखने में सक्षम होना चाहिए क्योंकि उन्हें सेवार्थी समूह के भावनात्मक आवेग का सामना करना पड़ सकता है। मध्यस्थता प्रक्रिया का विकास आवश्यक संसाधनों तथा समुदाय के सामाजिक सांस्कृतिक परिवेश को ध्यान में रखकर करना चाहिए।
5. **प्रबंधकीय कौशल :-** सामाजिक कार्यकर्ता के पास प्रबंधकीय कौशल का ज्ञान होना चाहिए। उन्हें विभिन्न समूहों तथा स्थानीय नेताओं के साथ समन्वय व सहयोग करने में सक्षम होना चाहिए, जिससे सेवार्थी समूह को अपेक्षित मध्यस्थता के लिए एकजुट किया जा सके। नीतियाँ तथा कार्यक्रम बनाने, कार्यक्रम नियोजन, समन्वय, रिकार्डिंग, बजटिंग तथा विभिन्न रिकार्ड का अनुरक्षण करने में कुशल होना चाहिए। सामाजिक कार्यकर्ताओं को मानवीय तथा भौतिक संसाधनों की निगरानी करने तथा लक्षित समुदाय के कल्याण एवं विकास के लिए उसकी प्रभावी उपयोगिता कैसे हो का भी कौशल होना चाहिए।
6. **प्रशिक्षण कौशल :-** सामाजिक कार्यकर्ता को प्रशिक्षण कौशल का ज्ञान होना चाहिए क्योंकि उसे स्थानीय नेताओं तथा जो नेता चिन्हित किये गये हैं उन्हें जनसमूह का संचालन संभालने तथा विभिन्न अधिकारियों से टकराव हेतु प्रशिक्षित करने में कुशल होना चाहिए। सामाजिक, क्रिया के लिए उठाये गये मुद्दे तथा टकराव प्रक्रिया समेत मध्यस्थता कैसे की जाती है तथा स्थानीय स्तर पर चयनित लोगों को प्रशिक्षित करने में सक्षम होना चाहिए। जनमत तैयार करने तथा लोगों की पहचान कर सामजिक क्रिया में शामिल करने के लिए उन्हें प्रशिक्षित किया जाना चाहिए। बिना हिंसा का सहारा लिए सामाजिक क्रिया की रणनीतियों तथा युक्तियों का प्रयोग करने के लिए उनको प्रशिक्षित करने में कुशल होना चाहिए।

4.7 सामाजिक क्रिया पुर्वावलोकन

सामाजिक क्रिया के उद्देश्य परिवर्तनवादी या बदलाववादी हो सकते है जैसे ये मौजूदा ढांचे की बात करते है। ये अक्सर विकल्प सुझाते है। यह सब संप्रषन के अभाव में नही हो पाएगा।

सामाजिक क्रिया दुनिया की या वैश्विक मामलों जैसे पर्यावरण की सुरक्षा और संरक्षण, उसकी गिरावट को रोकने से लेकर स्थानीय मुद्दे जैसे अपराध, शराब की बिक्री, ग्रामीण सामुदायिक संसाधनों को वहाँ पर हावी व्यक्तियों या समूहों का गलत इस्तेमाल मजदूरों का शोषण, गलत काम करने वाले को सजा, पेडों की गैर कानूनी कटाई इत्यादि सबमें कही न कहीं संप्रेषन एवं संचार की आवश्यकता पड़ती है। स्थानीय

मामलों में भी सामाजिक क्रिया के कार्यक्रम किसी एक मुद्दे पर आधारित या केन्द्रित हो सकते है। ताकि उसके लिए जरुरी समर्थन जुटा लिया जाए और दबाव समूहों को संगठित कर लिया जाए। समर्थप जुटाने और दबाव समूहों को संगठित करने हेतु, संचार की महत्ता बढ़ जाती है। संचार की महता, सूचना व जानकारी देने, प्रेरणा, वाद-विवाद और परिचर्चा सांस्कृतिक विकास, एकीकरण, मनोरंजन, विकास इत्यादि के लिए संचारकी आवश्यकता पड़ती है।

सामाजिक क्रिया की रणनीतियों को प्रभावी बनाने के लिए संचार की भूमिका ली जाती है। विश्वसनीयता को बढ़ाने के लिए, संचार के माध्यम से सामाजिक मूल्यों के आधार पर नेतृत्व, प्रायोजकों, और हिस्सेदारी की लोगों में बेहतर छवी बनाया जाता है। वैद्यता को बढ़ाने हेतु आंदोलन के उद्देश्यों को नैतिक तौर पर सही साबित करते हुए बढ़ावा देना और सामाजिक कार्रवाही को नैतिक तौर परी वैद्य और स्वीकार्य बनाये के लिए, संचार के साधनों का प्रयोग करना। संचार का सबसे बढिया प्रयोग, सामाजिक क्रिया की महत्वपूर्ण रणनीति में किया जाता है।सामाजिक क्रिया की बहुआयामी रणनीतियों का मतलब क्रिया के समन्वित कार्यक्रम से है। जैसे वकालत, शिक्षा समझाना बुझाना कार्रवाही को अंजाम देना, दबाव बनाने हेतु संचार की प्रक्रिया का सहारा लिया जाता है।

सामाजिक क्रिया की युक्तियों पूर्णत: संचार पर निर्भर करती है। समाज कार्य की युक्तियों में वक्यान्वेषण या पड़ताल, औपचारिक और अनौपचारिक माध्यम का इस्तेमाल करते हुए प्रचार प्रसार वकालत शिक्षा जागरुकता अभियान अंर्तआत्मा की जागृति इत्यादी सभी में में संचार की आवश्यकता पड़ती है। संचार संस्थानिक ढॉचे को स्थापित करने, राजनीतिक प्रक्रियाओंके जरिये समर्थन जुटाने और जनमत बनानें में कार्य करती है। संचार का प्रयोग सामाजिक क्रिया में सहयोगया समझौतो को लागू करने, नारों का इस्तेमाल करने संधिवार्ता या बातचीत करने लेन-देने मध्यस्थता विरोध, प्रदर्शन, जूलूस, धरना हड़ताल बहिष्कार, अनश, घेराव आदि में भी किया जाता है। सामाजिक क्रिया में संघर्ष और टकराव निहित होता है। लेकिन ज्यादातर सामाजिक क्रिया हिंसा का हस्तेमाल नही होता है। संघर्ष या टकरावकाहल नैतिक और जनदबाव बनाकर, सामाजिक क्रिया के माध्यम से किया जा सकता है। ज्यादातर सामाजिक क्रिया के दौरान संचार चैनल बनाकर सामाजिक क्रिया में जागरुकता अभियान चलाने लोगों को संगठित करने रणनीति विकसित करने कार्रवाई इत्यादीमे संचार का प्रयोग किया जाता है। सामाजिक क्रिया में संचार की महत्वपूर्ण भूमिका को हम नर्मदा बचाओं आंदोलन में देख सकते है। सामाजिक क्रिया आंदोलन ने विकास के मुद्दे पर कार्य कर रही कई संस्थाओं को इसमें संचार ने लोगों को एकजूट किया। नर्मदा बांध के निर्माण से होनेवाली पर्यावरणीय, समस्या से जुडने के लिए ये इकट्ठे हुए। आज इस आंदोलन की समाज के कई वर्गो का जबर्दस्त समर्थन हासिल है। उस निर्माण से सीधे पीडित लोगों का समर्थन तो इन्हें हासिल ही है इस आंदोलन से कई प्रसिद्ध समाज सेवी विज्ञानी बुद्धिजीवी छात्र और स्थानीय गॉवो के लोग एक-दूसरे से जुडे हुए है। इन लोगों ने जबर्दस्त विरोध यात्रा और प्रदर्शन किय। उसमें कई राज्यों के दूर पास के ग्रामवासियों ने हिस्सा लिया। उन्होंने अपने बैनरों एवं झंडो के साथ नारे लगाते हुए नर्मदा के किनारे मानवीय श्रंखला बनायी। बॉध निर्मान स्थल पर जोरदार प्रदर्शन किया ये सभी चीजें संचार एवं संप्रेषण के अभाव में नहीं हो सकता इसको मीडिया ने भी कुछ प्रयास-प्रचार किया तथा लोगों को जागरुक करने में महत्वपूर्ण भूमिका निभाई। यहा संचार माध्यम से लोगों

ने फैसला लेने वालो को संदेश दिया कि योजना से लेकर लागू करने तक, हर स्तर पर जन भागीदारी होनी चाहिए।

अत: हम कह सकते है कि सामाजिक क्रिया कि परिभाशा से लेकर रणनीतियों एवं युक्तियों बनाते आंदोलन करने इन प्रत्येक स्तरों या संचार की महत्वपूर्ण भूमिका होती है।

4.8 सारांश :

सारांश के रूप में कहा जा सकता है कि सामाजिक क्रिया के माध्यम से कार्यकर्ता समाज में व्याप्त समस्या के निराकरण हेतू प्रयास करता है जिसमें एक सशक्त माध्यम संचार होता है। संचार माध्यम से वह आमजन तक क्रिया के उद्धेश्यों को पहुंचाता है जिससे सामाजिक भागीदारी प्रबल होती है। क्योंकि हम जानते है कि किसी भी सामाजिक क्रिया में सफलता तब तक प्राप्त नहीं हो सकती जब तक कि उस क्रिया में आमजन शामिल ना हों। अत: सामाजिक क्रिया में संचार एक सशक्त माध्यम है जोकि इस संपूर्ण क्रिया विधि में सहायक साबित होता है।

4.9 बोध प्रश्न :

1. सामाजिक क्रिया क्या है ? इसके अर्थ एवं परिभाषा को स्पष्ट कीजिए।
2. सामाजिक क्रिया के उद्देश्यों एवं क्षेत्रों को रेखांकित कीजिए।
3. सामाजिक क्रिया के इतिहास एवं प्रासंगिगकता में संचार की प्रभाविता का विस्तार पूर्वक वर्णन कीजिए।
4. सामाजिक क्रिया एवं संचार के पुर्वावलोकन की व्याख्या कीजिए।
5. सामाजिक क्रिया की प्रक्रिया में संचार किस प्रकार से अपनी महती भूमिका को अदा करता है स्पष्ट कीजिए।

4.10 संदर्भ एवं उपयोगी ग्रंथ :

5 अहमद, मिर्जा रफीउद्दीन (1967): *समाजकार्य दर्शन एवं प्रणालियाँ*. लखनऊ : ब्रिटिश बुक डिपो।
6 दोषी एस.एल. एवं त्रिवेदी एम.एस.(2013) : *उच्चतर समाजशास्त्रीय सिद्धांत*. जयपुर: रावत पब्लिकेशन।
7 सिंह, सुरेन्द्र एवं मिश्र पी.डी. (2010) : *समाजकार्य इतिहास दर्शन एवं प्रणालियाँ*. लखनऊ : न्यू रॉयल बुक कंपनी।
8 सिंह, ए.एन. एवं सिंह, ए.पी.(2007) : *समाजकार्य*, लखनऊ : रैपिड बुक सर्विस।
9 गुप्ता, एम एल .एवं शर्मा,डीडी.(1998):समाजशास्त्र,आगरा: साहित्य भवन पब्लिकेशन
10 इग्नू ,*एम एस डब्ल्यू 003* सामुदायिक विकास के लिए समुदाय संगठन का प्रबंधन, नई दिल्ली : इग्नू।
11 Siddiqui, H.Y. (1984) : *Social Work and Social Action*. New Delhi : Harnam Publication.
12 Arthur, Hillman (1954) : *Community Organization and Planning*. New York : Macmillan Company.
13 Moorthy, M.V. (1966) : *Social Action*, Mumbai : Asia Publishing House.

14 Samuel John (2000) : *Social Action : An Indian Panorama* New Delhi :Voluntary Action Network India.
15 Singh, Surendra (1986) : *Horizons of Social Work* (Edited) By Surendra Sing and K.S. Soodan. Lucknow: Jyotsana publication
16 Davis, Martin (2000) : *The Blackwell Encyclopedia of Social Work* (Edited) Massachusetts : Blackwell Publication.
17 Friedlander, Walter. A. (1977) : *Introduction to Social Welfare.* New Jersey : Prentice Hall.
18 Foran, J. (2003) : *The Future of Revolutions*. London : Zed Books.
19 D. Paul Chowdhry (1964) : *Introduction to Social work History Concepts methods And Fields.* Delhi : Atma Ram and Sons.
20 Pathak S.H. (1971) *: Social Welfare and Family Planning.* New Delhi: Planning Commission GoI
21 Ogburn & Nimkoff (1957) : *A Hand Book of Sociology.* Landon : Rutledge and Kegan pall Limited.
22 Aptheker Herbert (1941) : *Basic Concepts in Social Work*. North Carolina : Press Chappel Hill.
23 कुलश्रेष्ठ, वि. एवं जैन, हं., (2005). 'जनसंचार शोध प्रविधियां', जयपुर: माया प्रकाशन।
24 सिंह, श्रीकान्त, (2001). 'संप्रेषण: प्रतिरूप एवं सिद्धांत', फैजाबाद : भारती पब्लिशर्स एण्ड डिस्ट्रीब्यूटर्सा
25 सरदाना, चंद्रकांता एवं मेहता, कृ.शि., 'जनसंचार कल, आज और कल', दिल्ली: ज्ञान गंगा।
26 Kumar, keval j., (2004). 'Mass Communication in India', Mumbai: Jaico Publishing House.
27 Rayudu, C.S., (2008). 'Communication', Mumbai: Himalaya Publishing House.
28 जैन, रमेश, (2003). 'जनसंचार एवं पत्रकारिता', जयपुर: मंगलदीप पब्लिकेशन्स।
29 Desai, Amit, 'Journalism and Mass Communication', New Delhi: Reference Press.
30 बघेल, संजय सिंह, 'संचार, समाज और साहित्य', गाजियाबाद : के.एल. पचौरी प्रकाशन।